श्रीः

विचारचन्द्रोदय ।

ब्रह्मनिष्ठपण्डितश्रीपीताम्बरजीकृत ।

उनके जीवनचरित्र और सटीक

श्रुतिषड्लिङ्गसंग्रहसहित ।

नवीनरूढियुक्त ।

अष्टमावृत्ति ।

मुमुक्षुओंके हितार्थ

पं० व्रजवल्लभ हरिप्रसादजीने

बम्बई 'कर्नाटक' छापखानेमें छापके प्रकट किया ।

संवत् १९७५—सन् १८१९ ।



तावद्गर्जन्ति शास्त्राणि जम्बुका विपिने यथा ।
न गर्जति महाशक्तिर्यावद्वेदान्तकेसरी ॥ १ ॥

Published by: Vrijavallabh Hariprasad
331 Kalbadevi Road-Bombay.

Printed by M. N. Kulkarni at his
Karnatak Printing Press, 434,
Thakurdwar, Bombay.

ॐ तत्सद्ब्रह्मणे नमः ।

प्रस्तावना ।

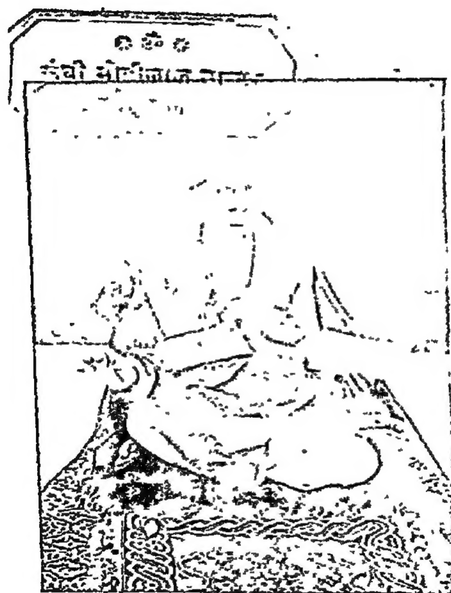


सर्वमतशिरोमणि श्रीवेदांतसिद्धांत है । ताकै जाननेवास्ते कनिष्ठ औ मध्यम आदिक अधिकारिनके अर्थ अनेक संस्कृत औ प्राकृत ग्रंथ हैं । परंतु जाकी बुद्धिमें विशेष शंका होवै नहीं ऐसा मंदमतिमान्. परम-आस्तिक, शुद्धचित्तवाला जो उत्तम अधिकारी है, ताके अर्थ सरल, श्रेष्ठ, अल्प औ विख्यात वेदांतप्रक्रियाका ग्रंथ कोउ नहीं है, यातैं मैंने यह विचारचंद्रोदयनामक वेदांतप्रक्रियाका प्रश्नोत्तररूप ग्रंथ किया है । यामैं षोडश प्रकरण हैं । तिनका "कला" ऐसा नाम धन्या है । एक एक कलाविषै एक एक विलक्षण प्रक्रिया धरी है । मुमुक्षुकूं ब्रह्मसाक्षात्कारविषै अवश्य उपयोगी जे प्रक्रिया हैं वे सर्व संक्षेपतैं यामैं हैं । अंतकी षोडशवीं कलाविषै अनेकवेदांतपदार्थनके नाम रखे हैं । वे धारनेसैं अन्य महद्ग्रंथनके श्रवणविषै उपयोगी होवैंगे ॥

या ग्रंथकूं ब्रह्मनिष्ठ गुरुके मुखसें जो मुमुक्षु श्रवण करैगा वा याके अर्थकूं बुद्धिमें धारण करैगा, वाके चित्तरूप आकाशमें अवश्य ज्ञानरूप सुधा अवस्थाकूं धारनेवाला विचाररूप चंद्रमा उदय होवैगा औ संशय अरु भ्रांतिसहित अज्ञानरूप अंधकारकूं दूरी करैगा; याहीतें याका नाम **विचारचंद्रोदय** धन्या है। याका विषय नीचे धरी अनुक्रमणिकाविषै स्पष्ट लिख्या है। तहां देख लेना। (या ग्रंथके विशेषज्ञानविषै उपयोगी श्रीसटीकबालबोध हमने किया है। ताकी २५० टिप्पण अरु मूलटीकागत वृद्धिसहित द्वितीय आवृत्ति अबी छपी है। जाकूं इच्छा होवै सो देखे) विशेष विज्ञप्ति यह है कि:—यह ग्रंथ ब्रह्मनिष्ठ गुरुके मुखसैं ही श्रद्धापूर्वक पढ़ना। स्वतंत्र नहीं। काहेतें गुरु विना सिद्धांतके रहस्यका ज्ञान होता नहीं औ गुरुमुखसें सकल अभिप्राय जान्या जावै है। यातें गुरुके मुखसें ही पढ़ना चाहिये।

लि. पंडितपीतांबरजी।

पुस्तक मिलनेका पता—
पं० हरिप्रसाद भगीरथजी,
कालकादेवी रोड, मुंबई.



पंडित पीतांबर पुरुषोत्तमजी॥



शरीफ सालेमहंमद.

श्रीविचारचंद्रोदय ।

अष्टमावृत्तिकी प्रस्तावना ।

संवत् १९७०—सन् १९१४ में शरीफ साले महम्मद नूरानीकी प्रकाशित की हुई सप्तमावृत्तिकी प्रतिसे यह अष्टमावृत्तिका संस्करण हमने यथाप्रति ज्योंका त्यों प्रकाशित किया है। किसी प्रकारका परिवर्तन अथवा न्यूनाधिक भाव नहीं किया है। क्योंकि शरीफ सालेमहंमद नूरानीके सुयोग्य पुत्र दाउद भाई और अलादीन भाई इन बन्धुद्वयके पाससे सब प्रकारके रजिस्टरी हक सहित इसे हमने ले लिया है। अतः वेदान्तानुरागी मुमुक्षु जनोंसे सविनय प्रार्थना है कि इसको सदाकी भांति सादर संग्रह करनेमें अग्रसर हों।

व्रजवल्लभ हरिप्रसाद ।

ठि० हरिप्रसाद भगीरथजीका

प्राचीन पुस्तकालय,

कालबादेवी रोड, बम्बई ।

॥ ॐ गुरुदेवाय नमः ॥

॥ श्रीविचारचंद्रोदय ॥



॥ अथ सप्तमावृत्तिकी प्रस्तावना ॥

यह ग्रंथ वेदांतविद्याकी प्रथमपोथीरूप होनेतैं मुमुक्षुजनोकूं अत्यंत उपयोगी भयाहै । तातैं यह सप्तमावृत्ति सहित यहग्रंथकी आजपर्यंत अनुमान १५००० प्रति छापी गईहै ॥

इस ग्रंथके कर्ता ब्रह्मश्रोत्रिय ब्रह्मनिष्ठ पंडित-श्रीपीतांबरजी महाराजका पूर्वावस्थाका फोटो-ग्राफ पूर्वआवृत्तियोमैं रखाहै औ इस आवृत्तिमैं तिनोंका उत्तरावस्थाका फोटोग्राफ तिनोंके जीव-नचरित्रके आरंभमैं रखाहै ॥

औ यह आवृत्तिविषे श्रीश्रुतिषड्‌लिंगसंग्रह नामके लघुग्रंथकूं प्रविष्ट करीके षष्ठावृत्तितैं नवीनता करीहै । तातैं यह आवृत्तिमैं ८५ पृष्ठकी अधिकता भई है ॥

श्रीश्रुतिषड्‌लिंगसंग्रह । हमारे परमपूज्यगुरु पंडितश्रीपीतांबरजीमहाराजनै श्रीबृहदारण्यक-उपनिषद् छाप्याहै । तिसपरसैं कियाहै । तथापि हमनै मुद्रणशैलिविषै भिन्नप्रकारकी रचना करीके । प्रत्येकस्थलमैं ६ लिंगोंकूं प्रत्यक्ष दृश्यमान कियेहैं । तातैं मुमुक्षुजनोंकूं अभ्यासविषै अत्यंत-सुलभता होवैगी ॥ यह श्रीश्रुतिषड्‌लिंगसंग्रह इसग्रंथविषै मुद्रांकित करनैमैं ऐसा हेतु रखाहै किः—आजकल वेदांतविद्याविषै मुमुक्षुजनोंकी प्रवृत्ति अधिकाधिक होती जाती है तातैं श्रीविचार-चंद्रोदयके अभ्यास किये पीछे । वेदांतके मूल-

रूप कितनेक उपनिषद् हैं। ताके तात्पर्यसैं ज्ञात होना आवश्यक है ॥ वे उपनिषदोंके ऊपर रामानुजआदिकद्वैतवादिओंने जे भाष्य कियेहैं। तिनमैं "वेदका अभिप्राय द्वैतविषैहिं है" ऐसैं प्रतिपादन करनैका परिश्रम कियाहै । परंतु वे परिश्रम निष्फलहीं हैं । कारण कि जगत्विषै द्वैत तौ विचारसैं विना सिद्धहीं पडाहै । यातैं ऐसै विषयकूं सिद्ध करनैविषै वेदका अभिप्राय संभवित नहीं है ॥ "एक परमात्मतत्त्वविना अन्य जो कछु प्रतीत होवैहै । सो सर्व मायाकृत भ्रांतिकरिहीं प्रतीत होवैहै" । ऐसै प्रतिपादन करनैका वेदका अभिप्राय जगद्गुरु श्रीमच्छंकराचार्यने उपनिषदोंके भाष्यसैं सिद्ध कियाहै ॥ कोइवी ग्रंथके तात्पर्य शोधनअर्थ ताके षट्लिंगनकूं अवलोकन किये चाहिये ॥ इस कारणतैं

प्रत्येक उपनिषद्के ६ लिंग श्रीश्रुतिषड्लिंगसंग्रहविषै दिखायेहै ॥ यह लिंगोंका श्रवण कोई महात्माके मुखद्वाराहीं करना उचित है। काहेतैं कि ऐसैं करनैतैं वेदांतविद्याकी महत्ताका भान होवैगा औ तदनंतर वे उपनिषदोंका भाष्यसहित अभ्यास करनैकी जिज्ञासा बी उत्पन्न होवगी ॥

इस ग्रंथका वा कोईबी अन्यशास्त्रका अभ्यास करनैकी रीतिविषै हमारा आधीन अभिप्राय एक दृष्टांतसैं प्रथम स्फुट करैंहैं:—

दृष्टांत:—एक जौहरीका पुत्र अपने मृतपिताके मित्रसमीप एकछोटीसी मुद्रांकितमंजूष लेके गया औ कहने लगा कि:—मेरे पितानै अपनै अंतकालसमय यह मंजूष मेरे स्वाधीन करीहै औ कहाहै कि तिसमैं एक अमूल्य हीरा है। सो

मेरे मित्रके पास तूं लेजाना तौ वे मित्र वडी कीमतसैं बेच देवैगा ॥ वे जौहरीकी आज्ञासैं तिसने मंजूष खोलके देखी तौ एक बडा प्रकाशित हींरा देखनेमैं आया ॥ हीरेसहित वह मंजूष पुनः बंध कीही औ तिसकूं प्रथमकी न्यांई मुद्रित-करीके वे मित्रनै कहा की यह हीरा बहुत-मूल्यका है । जब कोई योग्य दाम देनैवाला ग्राहक मिलैगा तब बेचेंगे । यातें अब इस मंजूषकूं रख छोडो ॥ जौहरीने उस पुत्रकूं अपनी दुकानपर बिठाया औ हीरेमाणिक्यआदिकको परीक्षा करनैकूं सिखाया ॥ जब प्रवीण भया तब वे मित्रनै तिसकूं कहा की हे पुत्र ! वह हीरेकी मंजूष लेआव । तब वह उक्तमंजूषकूं ले आया औ खोलके हस्तमैं लेके परीक्षा करी तब

ज्ञात हुवाकी वह हीरा नहीं परंतु काचका टुकडा है ॥

सिद्धांतः—जैसैं उक्त जौहरीका पुत्र काचकूं हीरा मानिके तिसद्वारा धनाढ्य होनैकी मिथ्या-आशाकूं रखताभया। तैसैं मनुष्य बी बालपन-सैंहि जगत्के पदार्थोंकूं क्षणिक औ नाशवान देखते हुये बी यथार्थज्ञानके अभावतैं तिनविषै सत्यताकी बुद्धिकूं धारणकरिके सुखकी मिथ्या-आशा रखतेहैं औ अनेक तौ "यह जगत्के पदार्थोंसें विना अन्य कछुवी सत्य नहीं है" ऐसैंबी मानतेहैं ॥

उंपरि कहा तैसैं मनुष्यमात्र मायाकरि भ्रांति विषै भ्रमण करीरहेहैं तिनमैंसैं क्वचित कोईकूंही "मैं कौन हूं"। "जगत क्या है"। "मेरा औ जगत्का अवसान क्या है" इत्यादि अने-

कानेक प्रश्न उद्भवेहैं ॥ जैसैं कोई कंटकके जं-
गलविषै फसा हुवा दुःखकूं पावताहै । तैसैं सं-
शय औ शंकारूप कंटकसमूहसैं जे पीडित हैं ।
वे मात्र ता दुःखसैं मुक्त होनेकी इच्छा करतेहैं ॥
परीक्षितराजाकूं जन्मेजयने जो उपदेश किया सो
सहस्रनमनुष्योंनै श्रवण किया परंतु मोक्षप्राप्ति
मात्र परीक्षितराजाकूं भई । कारण कि तिसका
मृत्यु सप्तमदिन निश्चित भयाथा औ अन्यश्रोता-
ओंकूं तैसा कोई भय नहीं था ॥ आज बी वही
श्रीमद्भागवतकी सप्ताह पारायण असंख्यजन श्रवण
करतेहैं ॥

आधुनिकसमयसैं कोईकोई इंग्रेजीभाषाज्ञा-
नविषै कुशलपुरुष गुरुगम्य उपनिषद्आदिकमहत्
ग्रंथोंका स्वतंत्र अवलोकन करैहैं औ तदनंतर
आपकूं वेदांतसिद्धांतके वेत्ता मानिके अन्यज-

नोकूं वेदांतका वोध देनेवास्ते इंग्रेजीमैं ग्रंथ लिखतेहैं वा मासिकअंकनविषै लेख प्रकट करतेहैं । परंतु वे लेखमैं मुख्यकरिके द्वैतप्रपंचका प्रतिपादनमात्र देखनैमैं आताहै ॥ तैसैं थीयोसाफि नामक मंडलके नेता वी वेदांतसिद्धांतकूं कछुक स्वतंत्र देखिके मुख्य द्वैतकाही वर्णन करैहैं औ अदृश्य महात्माओंकी सहायतासैं असंख्यवर्षोंके पीछे मुक्त होनेकी आशा रखतेहैं ॥ ऐसैं होनैका प्रधानकारण वेदांतविद्याका स्वतंत्रअभ्यास है ॥ इसविषै श्रीविचारसागरमैं सम्यक् कहाहै किः—

॥ दोहा ॥

वेद अब्धि विनगुरु लखै लागै लौन समान ।
वादरगुरुमुखद्वार है अमृततैं अधिकान ॥

पुरातनकालसैं प्रचलित हुई रूढि अनुसार

अनेक स्थलविषै जो वेदांतकी कथा होतीहै । तामैं कोइएक शास्त्रका पठनकरिके तिसपर कोइ महात्मापुरुष विवेचन करेहै । तातैं यद्यपि श्रोताजनोंकूं लाभ होवैहै तथापि शास्त्राभ्यासकी पद्धति तौ विलक्षणहीं है ॥

जैसैं दृष्टांतगत जौहरीका पुत्र जौहरीकी सहायतासैं हीरेकी परीक्षा करनैमैं कुशल भया । तैसैं ब्रह्मविद्याका अभ्यास बी कोइ ब्रह्मश्रोत्रिय-ब्रह्मनिष्ठगुरुद्वारा करनेमैं आवे । तबीहीं तामैं कुशलता प्राप्त होवै ॥

अब वेदांतशास्त्रका अभ्यास कोइ महात्माके समीप किसरीतिसैं करना आवश्यक है सो नीचे वर्णन करैहैं:—

श्रीविचारचंद्रोदय ग्रंथ वेदांतकी प्रथमपोथीरूप है ॥ यह ग्रंथ प्रश्नोत्तररूप होनेतैं प्रथम

मुमुक्षु ताका व्याख्यासहित प्रतिदिन श्रवण करै औ ताके पीछे जहांपर्यंत अभ्यास किया होवै । तहांपर्यंत क्रमसैं विना पूछनेमैं आवे तिनके उत्तर मुमुक्षु देवें ॥ इस रीतिसैं ग्रंथ पूर्ण करिके पीछे श्रुतिषड्लिंगसंग्रहका मात्र श्रवण करै । तदनंतर—

मुमुक्षु । श्रीविचारसागरका श्रवण करै औ जितनै भागका अभ्यास पक्व हुवाहोवै । तितनै भागगत मुख्य पारिभाषिक शब्द । प्रक्रिया । वा प्रसंगके प्रश्न महात्मा उत्पन्नकरिके पूछे ताके उत्तर वह मुमुक्षु देवै ॥ यह ग्रंथकी समाप्ती पीछे श्रीपंचदशीग्रंथका बी तीसिहीं रीतिसैं दृढ अभ्यास करै औ श्रीविचारसागरकें छंदनमैसैं तथा श्रीपंचदशीके श्लोकनमेसैं जितनैं कंठ करनेकी महात्मा आज्ञा करे तितने मुमुक्षु कंठ

करै ॥ गत अभ्यासकी वारंवार पुनरावृत्ति करनी बी अत्यंतआवश्यक है ॥

उपरोक्तरीतिसैं उक्त ग्रंथनका अथवा अन्य-वेदांत ग्रंथनका खंत औ श्रद्धापूर्वक मुमुक्षु अभ्यास करै तौ ब्रह्मविद्याविषै कुशल होवै तामैं शंका नहीं। तथापि ब्रह्मनिष्ठ होना तौ अत्यंत-विकट है। काहेतैं कि जगत्‌विषै सत्यताकी बुद्धिकूं दूरींकरिके असत्यताकी बुद्धि दृढ करनी होवैहै औ अपनेविषै शुद्ध निर्विकार ब्रह्मस्वरूपकी बुद्धिकूं स्थापित करनी होवैहै ॥ इस प्रकारकी बुद्धि हुई है वा नहीं सो आपहीं अपनै आंतरमैं पूछनैसैं उत्तर मिलताहै ॥ यह ज्ञान स्वसंवेद्यहीं है ॥

ब्रह्मनिष्ठपनैकी दुर्लभताविषै श्रीमद्भगवद्गीता-मैं कहाहै किः—

मनुष्याणां सहस्रेषु कश्चियतति सिद्धये । यतता-
मपि सिद्धानां कश्चिन्मां वेत्ति तत्वतः ॥ ७ । ३ ॥

ऊपर कहे अनुक्रमसें अभ्यासकी पूर्णता हुवे
पीछे कोई महात्माद्वारा श्रीमच्छंकराचार्यकृत
उपनिषद् भाष्य । सूत्र भाष्य । औ गीता भा-
ष्यका अवलोकन करनेसें आनंदसहित ब्रह्मनि-
ष्ठाकी दृढतामें अधिकता होवेगी ॥ तदनंतर
इच्छा होवै तौ । श्रीयोगवासिष्ठादिक अनेक
वेदांतके ग्रंथ हैं सो बी देखना ॥ संक्षेपमें इत-
नाही कहना है कि जगत्व्यवहारोपयोगी अनेक-
विषयनका जैसें आदर औ दृढतापूर्वक आधु-
निक शालाओंविषै विद्यार्थीजन अभ्यास करतेहैं ।
तैसें दीर्घ अभ्यासविना वास्तविक लाभ होनेका
नहीं ॥ बहुतग्रंथनके पठनसेंहीं ब्रह्मज्ञान होवै

ऐसा नियम नहीं ॥ उत्तमअधिकारी मात्र एक श्रीविचारसागर अथवा श्रीपंचदशी श्रद्धापूर्वक गुरुद्वाराविचारिके नियमित विचारपूर्वक अभ्यास करै तौ ब्रह्मज्ञानकी प्राप्ति अवश्य होवै ॥

जिसकूं आधुनिककालसंबंधि अनेक शंका उद्भव होती होवै । सो शास्त्रअभ्यासके पीछे इंग्रेजीमैं फिलसुफीसे औ सायन्सके अनेकग्रंथ हैं वे देखैं तौ तातैं बुद्धिका क्षेत्र अत्यंतविस्तृत होवैगा औ जगत्‌की मायिकता आदिक अत्यंत स्पष्ट होवैगी ऐसा स्वानुभव है ॥

थोडे समयसैं हमने कुलनाम "नूरानी" का हमारी संज्ञाके अंतमैं प्रवेश किया है ॥ इति ॥

श. सा. नू. ॥

॥ ॐ गुरुदेवाय नमः ॥

॥ श्रीविचारचंद्रोदय ॥

॥ अथ षष्ठावृत्तिकी प्रस्तावना ॥

इस ग्रंथकी पंचमावृत्तिमैं पूर्वकी आवृत्तिनसैं नवीनता करीथी तैसैं, इस आवृत्तिविषे बी जो नवीनता औ अधिकता करीहै । सो नीचे दिखावेहैं:—

१ इस ग्रंथके कर्त्ता ब्रह्मनिष्ठपंडित श्रीपीतांबरजी महाराजने मुमुक्षुनके उपरि अत्यंत अनुग्रह करीके इस आवृत्तिके लिये ग्रंथभाग औ टिप्पणभागका पुनः संशोधन कियाहै । तथा टिप्पणोंविषे कहिं कहिं अधिकता करीके गहन अर्थकी विस्पष्टता करीहै ॥

२ पूर्वमीमांसा । उत्तरमीमांसा (वेदांत) । न्यायआदिक षट्दर्शनोविषे जीव । जगत् । बंध ।

मोक्षआदिक मुख्यपदार्थोंके कैसे भिन्नभिन्न लक्षण कियेहैं । औ वे लक्षणविषै उत्तरोत्तर कैसी समानताअसमानता है । सो दृष्टिपात मात्रसैं ज्ञात होवै ऐसा " षट्दर्शनसारदर्शकपत्रक " श्रीपंचदशी सटीका सभापाकी द्वितीयावृत्ति औ श्रीविचारसागरकी चतुर्थावृत्तिविषै हमनै दियाहै । तैसाहीं पत्रक इस ग्रंथके अभ्यासीनके अवलोकनअर्थ इस आवृत्तिमैं अंतविषै छाप्याहै ॥

३ इस आवृत्तिमैं ग्रंथारंभविषै बहुतखर्चके योगसैं चार चित्र दियेगयेहैं । तिनविषै

(१) प्रथमचित्र पूजाविषै स्थित हुये द्विजका है ॥

(२) दूसराचित्र राजाका है ॥

(३) तीसरा व्यापारीका है । औ

(४) चतुर्थचित्र घट बनानैविषै प्रवृत्त भये कुलालका है ॥

इसरीतिसैं यद्यपि ब्राह्मण । क्षत्रिय । वैश्य औ शूद्र । यह चारिजाति दृश्यमान होवैहैं । तथापि

तिन च्यारिचित्रनविषै स्थित जो पुरुष है । तिसकी मुखाकृति लक्षपूर्वक अवलोकन करनैसैं ज्ञात होवैगा कि वे च्यारिचित्र एकहीं पुरुषके हैं । मात्र तिनोंकी भिन्नभिन्नवस्त्र औ सामग्रीरूप उपाधिके भेदसैं एकहीं पुरुष भिन्नाभिन्न च्यारिवर्णका प्रतीत होवैहै । अर्थात् तिनोंकी उपाधिके बाध कियेतैं वे च्यारिपुरुषनका परस्पर केवलअभेद है ॥

जीवब्रह्मका भेद सत्य नहीं किंतु मात्र उपाधिकृतहीं है । ऐसा सर्वमतशिरोमणि वेदांतमतका जो महान् औ अबाधित सिद्धांत है औ जो इस ग्रंथकी " तत्त्वंपदार्थैक्यनिरूपण " नामक ११ वीं कलाविषै अनेकदृष्टांतसैं निरूपण कियाहै । तिसकूं यथास्थित समजनैमैं औ तदनुसार दृढनिश्चय करनैमैं मुमुक्षुनकूं सहायभूत होवैंगे । इतनाहीं नहीं । परंतु दृष्टिगोचर होतेहीं वे महान्सिद्धांतकूं स्मरण करावैंगे । ऐसैं मानिके उक्तचित्रनकूं छापेहैं ॥

इस ग्रंथके कर्त्ता ब्रह्मनिष्ठपंडित श्रीपीतांबरजी महाराज । जिनोंका जीवनचरित्र इस आवृत्ति-विषै बी छाप्याहै औ जिनोंने मुमुक्षुनके कल्याण-अर्थहीं जन्म धारण कियाथा ऐसैं कहिये तौ तामैं किंचित् बी अतिशयोक्ति नहीं है। औ जिनोंने अत्यंतदयातैं अनेकग्रंथनकूं रचिके तथा श्रीपंच-दशी । श्रीमद्भगवद्गीता औ वेदांतके मुख्यदशो-पनिषदूआदिकमहद्ग्रंथोंकी भाषाटीका करीके मुमुक्षु जनोंकूं ज्ञानमार्ग सुलभ औ सुगम कियाहै। वे महात्मा श्रीकच्छदेशगत गढसीसा ग्रामविषै संवत् १९६१ के वैशाख कृष्णपक्ष ७ गुरुवारके दिन इस क्षणभंगुर जगत्का त्याग करीके विदेहमुक्त भयेहैं ॥ तिनोंनैं तिसी वर्षके चैत्र कृष्णपक्ष १३ भोमवारके रोज संन्यास ग्रहण करीके परमानंद-सरस्वती नाम धारण कीयाथा ॥

शरीफ साळेमहंमद ॥

॥ ॐ गुरुदेवाय नमः ॥

॥ श्रीविचारचंद्रोदय ॥

॥ अथ पंचमावृत्तिकी प्रस्तावना ॥

यह ग्रंथ ब्रह्मनिष्ठपंडित श्रीपीतांबरजी महाराजकरि स्वतंत्र रचित है ॥ यामैं षोडशप्रकरणरूप षोडशकला हैं। औ तिन प्रत्येककलाविषै एकएक विलक्षणप्रक्रिया भरीहैं ॥ *यद्यपि ये सर्वप्रक्रिया संक्षिप्ताकारसैं धरीहैं तथापि* मुमुक्षुनकूं ब्रह्मसाक्षात्कारकी प्राप्ति करनैमैं सहाय-कारिणी होवैहैं ॥ यह ग्रंथ आदिसैं अंतपर्यंत प्रश्नोत्तररूप होनैतैं औ श्रेष्ठ अल्प औ विख्यात वेदांतप्रक्रियाकरि युक्त होनैतैं । औ सर्वशास्त्रशिरोमणि वेदांतशास्त्रके अभ्यासके आरंभकालमैं जो जो अवश्यज्ञातव्य है सो सर्व इस लघुग्रंथविषै समाविष्ट किया होनैतैं । वेदांत-अभ्यासविषै नवीनजनोकूं तौ यह ग्रंथ वेदांतकी प्रथम-पोथीरूप है ॥

ग्रंथकारमहात्माने इसका सारभूत पद्यात्मक "वेदांतपदावली" नामक लघुग्रंथ कियाहै। सो "वेदांतविनोद"के प्रथमअंकरूपसैं प्रसिद्ध है॥ काव्य। कंठ करनैमैं सुगम औ व्याख्यान किये विस्तृतअर्थका स्मारक होवैहै। इसवास्ते मुमुक्षुनकूं उपयोगी जानिके वेदांतपदावलीगत वे छंद इसग्रंथविषै प्रत्येककलाके आरंभमैं छापेहैं॥

अंतकी षोडशवीकलाविषै ३०० सैं अधिक वेदांतपारिभाषिकशब्दनके अर्थ धरेहैं। वे वी ग्रंथकर्त्तामहाराजश्रीकी करुणाकाहीं फल है॥ यह लघुवेदांतकोश अन्यमहद्ग्रंथनके श्रवणविषै अत्यंत सहायभूत होवैहै॥

याके आरंभमैं बडी अकारादिअनुक्रमणिका धरीहै। तिसकरि वांछितविषयका पृष्ठांक विनाश्रम प्राप्त होवैहै॥ इस अनुक्रमणिकाविषै लघुवेदांतकोशगत शब्दनकूं वी प्रविष्ट कियेहैं॥

अंकयुक्त पारेग्राफनकी जो नवीनमुद्रणशैलि हमारे छापे हुवे श्रीपंचदशी सटीकासभाषा द्वितीयावृत्ति औ श्रीविचारसागरचतुर्थावृत्तिके ग्रंथोंमैं प्रविष्ट करीहै । तैसीहिं रूढिसैं इस ग्रंथकी यह पंचमावृत्ति छापीहै ॥ इसरूढिसैं अभ्यासीनकूं अत्यंत सुलभता होवैहै । कारण की ग्रंथके भिन्नभिन्न विषयोंका समानासमानपना । उत्तरोत्तरक्रम । तद्गत शंकासमाधान । दृष्टांतसिद्धांत औ विकल्प । दृष्टिपातमात्रसैंहीं ज्ञात होवैहैं ॥ इस रूढिसैं ग्रंथकूं छापनै आदिकतैं इस आवृत्तिका विस्तार गतआवृत्तिसैं अनुमान १०० पृष्ठोंका अधिक हुवाहै औ कागज बी उत्तम डालेहैं ॥

ग्रंथकारमहात्मा ब्रह्मनिष्ठपंडितश्रीपीतांबरजीमहाराज । जिनोंने अनेक स्वतंत्रग्रंथ रचिके । श्रीपंचदशी औ दशोपनिषद आदिक महद्ग्रंथोंके भाषांतर करीके । औ विचारसागरादिक अनेक ग्रंथनपर टिप्पण करिके अखिल मुमुक्षुसमुदायउपरि महान्अनुग्रह कियाहै । तिनोंके जीवनचरित्रके लिये अनेक-

मुमुक्षुनकी तीव्रआकांक्षाकूं देखिके । सो जीवनचरित्र इसआवृत्तिविषै विस्तारसैं छाप्याहै ॥ तदुपरि दर्शन-करनै योग्य पूज्यमहाराजश्रीकी कल्याणकारी यथा-स्थितचित्रितमूर्ति तिनोंके हस्ताक्षरसहित ग्रन्थारंभमैं स्थापित करीहै ॥

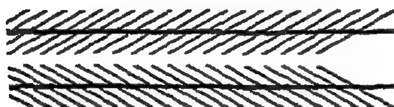
ग्रन्थविषै मुमुक्षुनकी प्रवृत्तिमैं मनोरंजक ग्रन्थकी सुंदरता भी सहायक है। ऐसैं मानिके इस ग्रन्थके पूंठे सुंदर कियेहैं। परंतु सुंदरताके साथि सिद्धांतका स्मरण-रूप लाभ होवै इस हेतुसैं इस पंचमावृत्तिके पूंठे अतिखर्च करीके विलायतसैं मंगवायेहैं औ रूपेरी-आदिक रंगसैं चित्ताकर्षक कियेहैं ॥ पूंठे ऊपर जे भांतिआदिक चित्र छापेगयेहैं तिनके अर्थका विवेचन नीचे करैहैं;—

निर्गुणउपासनाचक्रः—हमारे छपाये श्रीविचार-सागरविषै निर्गुणउपासनाचक्र धर्म्याहै । तिसका एक संक्षिप्तचित्र या पूंठेके मुखभागपर रखाहै ॥ इसमैं प्रत्येक पदार्थनके आदिके अक्षरमात्र तिन पदार्थनकी स्मृति-के लिये रखेहैं ॥ सुगमताकाअर्थ स्पष्टता करियेहैः—

अ–अकार वि–विराट वि–विश्व	॥ १ ॥ इन तीनउपाधिवान्‌की एकता चिंतनीय है ॥
उ–उकार हि–हिरण्यगर्भ तै–तैजस	॥ २ ॥ इन तीनउपाधिवान्‌की एकता चिंतनीय है ॥
म–मकार ई–ईश्वर प्रा–प्राज्ञ	॥ ३ ॥ इन तीनउपाधिवान्‌की एकता चिंतनीय है ॥
अ–अमात्र ब्र–ब्रह्म तु–तुरीय	॥ ४ ॥ इन तीनशुद्धनकी एकता चिंतनीय है ॥

प्रथमत्रिपुटीकी द्वितीयके साथि औ तिसकी तृतीयके साथि औ तिसकी चतुर्थके साथि एकता चिंतनीय है ॥ उक्तअर्थ श्रीविचारसागरकी चतुर्थआकृतिके २८१ सें ३०२ अंकपर्यंत ग्रन्थकर्त्तानें विस्तारसें दिखायाहै ॥

दो सीधीरेपायुक्त आकृतिः—जिल्दके मुख-भागउपरि चंद्राकारविषै ग्रंथका नाम छाप्याहै। ताके नीचे दो सीधीरेपावाली एक आकृति है ॥ ये दोनूं



रेपा दक्षिणदिशा तरफ संकोचित औ वामदिशातरफ विकासित हुई भासतीहैं। परंतु वास्तविक तैसें नहीं हैं किंतु सर्वस्थलमैं वे समान अंतरवालीहीं हैं। यह वार्ता दोनूंरेपांओंके आदिमागकूं अंतभागके साथि लक्ष्य-करिके देखनैसैं निर्विवाद सिद्ध होवैहै ॥

परिमाणभ्रांतिदर्शक दो आकृतिः—जिल्दकी पीठविषै वर्त्तुलाकारमें " शरीफ " नाम है । ताके ऊपर उक्त दो-आकृतियां छापी हैं । सो नीचे दिखावेहैं:—



उभयचित्रोंकी दोनूं सीधीमध्यरेषा यद्यपि समान-परिमाणकी हैं । तथापि तिसके अग्रभागविषै धरीहुई तिर्यक्‌रेषारूप उपाधिके बलसैं भ्रांतिद्वारा वामचित्रकी मध्यरेषा दक्षिणचित्रकी मध्यरेषासैं बडी प्रतीत होवैहै ॥

दीर्घरेषायुक्त दो आकृतिः—पूंठेके पृष्ठभागपर । मध्यमें पद्मचक्राकार औ उपरि तथा नीचे दीर्घरेषा-युक्त । ऐसैं सर्व तीन आकृति रखीहैं । तिनमैंसैं दीर्घ रेषायुक्त आकृतिनका वर्णन करैहैं:—

पूंठेके पृष्ठभागके उपरिकी दो दीर्घरेषा । नीचे

प्रथमआकृतिसमान दृष्ट आवतीहैं:—

१ प्रथम आकृति.

क	ख	क

उपरिकी दोरेषा.

आदिअंतमैं दोनूंदीर्घरेषाका क क भाग संकोचित तथा मध्यका ख भाग विकासित दृष्ट आवताहै। याते वे रेषा वक्राकार हैं। ऐसैं प्रतीत होवैहैं ॥

पूंठेके पृष्ठभागके नीचेकी दोदीर्घरेषा । नीचेकी दूसरी आकृतिसदृश भासतीहैं:—

२ दूसरी आकृति.

क	ख	क

नीचेकी दोरेषा.

आदिअंतमैं दोनूं दीर्घरेषाका क क भाग विकासित तथा मध्यका ख भाग संकोचित देखनैमैं आवताहै। अर्थात् प्रथम आकृतिसैं विपरीत वक्रआकार प्रतीत होवैहै ॥

तथापि पूंठेके पृष्ठभागके उपरिकी औ नीचेकी दोदीर्घरेषा। प्रथम औ दूसरी आकृतिके समान वक्र नहीं हैं। सीधीहीं हैं। मात्र भ्रांतिसैं वक्ररेषाकार प्रतीत होवैहै। यह वार्ता प्रत्यक्षरूप चाक्षुषप्रमाणसैं जैसैं सिद्ध होवैहै। तैसैं स्पष्ट करैहैं:—

जैसैं कोई बाणकूं छोडनैके समयपर बाणकूं लक्ष्यके साथि दृष्टिसैं सांधताहै। तैसैं उक्त नीचेऊपरकी दोनूंरेषाओं आदिके साथि अंतकूं लक्ष्यकरिके देखनैसैं वे दोनूंरेषा। बाजूकी तीसरी आकृति समान सीधीहीं दृष्ट आवैगी॥

यातैं पूंठेके पृष्ठभागपर उक्त प्रथमाकृतिसदृश ख भाग विस्तृत। तथा दूसरी आकृतिसदृश ख भाग संकोचित दृष्ट आवतेहैं सो भ्रांतिकरिकेहीं भासतेहैं। यह सहजहीं सिद्ध होवैहै॥

३ तीसरी आकृति

भ्रांतिका कारणः—प्रत्येक दीर्घरेषाके ऊपर तथा नीचे जे अनुमान १८ वा २० छोटी टेढीरेषा हैं। वे इहां उपाधिरूप हैं औ वे उपाधिरूप रेषाहीं इस चित्रितदृष्टांतविषै भ्रांतिकी कारण हैं ॥

जैसें मरुभूमिविषै मृगजलका भान भ्रांतिरूप है। तैसें इहां चित्रितदृष्टांतविषै (१) प्रथम तथा (२) दूसरी आकृतिगत ख भागके विकासित औ संकोचितपनैका भान बी भ्रांतिरूप है ॥

जैसें मरुभूमिविषै "व्यावहारिक जल नहीं है। प्रातिभासिकहीं है" ऐसें निश्चित भये पीछे बी ऊपरभूमिके साथि सूर्यकिरणके संबंधरूप उपाधिके बलसें जलकी प्रतीति दूरि नहीं होवैहै। तैसें इहां दोरेषारूप चित्रितदृष्टांतविषै बी प्रथम तथा दूसरीआकृतिगत "ख भाग विकासित औ संकोचित नहीं है किंतु आदिअंतपर्यंत समानहीं है" ऐसें निश्चित भये पीछे बी छोटीटेढीरेषाके संबंधरूप उपाधिके बलसें (१) प्रथम तथा (२) दूसरीआकृतिकी न्यांई ख भागके विकास औ संकोचकी प्रतीति दूरी नहीं होवैहै ॥

सिद्धांतः—श्रुतिः—" परांचि खानि व्यतृणत्स्वयंभूस्तस्मात्पराङ् पश्यति नांतरात्मन् " अर्थः—स्वयंभू (परमात्मा) इन्द्रियनकूं बहिर्मुख रचताभया । तातैं देवतिर्यग्मनुष्यादिक । बाह्यवस्तुनकूं देखतेहैं । अंतरआत्माकूं नहीं ॥ " **टीकाः—**यद्यपि इस सृष्टिविषै सर्वप्राणी बहिर्मुखहीं वर्त्ततेहैं । काहेतें जातैं तिनोंकी इंद्रियनकी रचना स्वयंभूनै तिस प्रकारकीहीं करीहै । तातैं इंद्रियनकी तृप्ति करनैविषैहीं सर्वजीवोंकी प्रवृत्ति होवैहै औ याहीतें मनुष्यनसैंविना अन्यप्राणी तौ ता प्रवाहके रोकनैविषै सर्वथा बहिर्मुखप्रबल प्रवृत्तिप्रवाहके बलसैं हत भये असमर्थ हैं । वे अंतरआत्माकूं देखी शकते नहीं । कहिये अपने आपकूं अपरोक्ष निश्चय करी शकते नहीं । यह स्पष्टहीं है ॥ काहेतें तिन शरीरोंविषै अंतर्मुखतारूप विरोधीप्रवाह करनैंवास्ते समर्थबुद्धिरूप साधन है नहीं । तथापि केवलमनुष्यशरीरविषैहीं यह सर्वोत्तमसाधन बी स्वयंभूपरमात्मानै रखाहै । यातैं स्वस्वरूप ज्ञानके अधिकारी मनुष्योंविषै केईक कदाचित् गुरुकृपासैं

बहिर्मुखप्रवृत्तिप्रवाहके विरोधी अंतर्मुखप्रवाहके साधन विचारादिककूं संपादन करैहैं औ अंतरआत्माकूं ब्रह्म-स्वरूप अपनाआपकरिके निश्चय करैहैं ॥ ऐसैं मुक्तमनुष्य । जे पूर्व स्वयंभूरचित इंद्रियनसैं प्रथम अज्ञानदशाविषै केवल रूपरसआदिककूंही देखतेथे । वे गुरुकृपासैं ज्ञान-भये पीछे जीवन्मोक्षदशाविषै दोदीर्घरेखारूप चित्रित-भ्रांतिके दृष्टांतकी न्यांई । सर्वरूपरसआदिककूं देखते-हुये बी अंतर्मुखप्रवाहके बलसैं "सर्वरूपरसआदिक मिथ्याही हैं।" ऐसैं भ्रांतिकूं बाधकरिके तिस भ्रांतिके अधिष्ठान ब्रह्मस्वरूप आत्माकूं अपरोक्ष निश्चय करैहैं ॥

। **षट्चक्रयुक्तआकृतिः**—पूंठेके पृष्ठभागपर मध्य-विषै पद्चक्रनकरि युक्त जो आकृति है । तिसका उप-योग अब दिखावैहैं:—ग्रंथकूं दक्षिणहस्तविषै सन्मुख धरिके । वामसैं दक्षिणकी तरफ त्वरासैं लघुचक्राकार फेरनेकरि पद्चक्र हैं वे दक्षिणकी तरफ फिरते दृष्ट पडैगें औ इसी आकृतिके मध्यविषै दंतयुक्तचक्र है सो पद्चक्रनसैं विपरीत कहिये वामकी तरफ फिरता देखनेमैं आवैगा ॥ यह बी भ्रांतिविषै चित्रितदृष्टांत है ॥

रंगितपट औ स्याहीका दृष्टांतः—इस ग्रंथके पूंठेके मुख औ पृष्ठभागविषै जितनी आकृति-दृष्ट आवती हैं। तिन सर्वविषै रंगितअक्षररेखाआदिक देखनेमें आवतेहैं वे भ्रांतिकरिहीं भासतेहैं। कारण किः—स्याहीरूप उपाधिसैं रंगितपटविषैं रंगितअक्षरआदिककी कल्पना होवैहै॥ स्याहीरूप उपाधिके बाध किये "वास्तविक कोइ अक्षररेखादिक हैं नहीं परंतु सर्व रंगितपटहीं है"॥ तैसैं सिद्धांतमैं । परमात्मतत्त्वविषै यह जो जगत् भासताहै सो केवलभ्रांतिकरिहीं भासताहै। कारण किः—मायारूप अज्ञानउपाधिसैं परमतत्त्वविषै जगत्‌की कल्पना होवैहै। तातैं तिस मायारूप अज्ञानउपाधिकूं गुरुमुखद्वारा बाधकरिके "वास्तविक जगत् कछुबी है नहीं किंतु सर्व आत्माहीं है" ऐसा निश्चयरूप मोक्षका साधन जो तत्त्वज्ञान सो उक्तचित्रितदृष्टांतनके दर्शनस्मरणकरि मुमुक्षुनकूं होहु॥

शरीफ सालेमहंमद ॥

ॐ

मंगलाचरणम्

ब्रह्मनिष्ठपंडितश्रीपीतांबरजीकृतम् ॥



॥ नाराचवृत्तम् ॥

कलं कलंक कज्जलं तमो निवारि सज्जलं ।
गतातिचंचलाचलं सुशांतिशीलमुज्ज्वलम् ॥
सदा सुखादिकंदलं त्रितापपापशामकं ।
नमामि ब्रह्मधामकं सखापुरामनामकम् ॥ १ ॥

समानदानदायकं भवाववाक्यसायकं ।
सुशुद्ध धीविधायकं मुनींद्र मौलिनायकम् ॥
स्वसंगगीतगायकं व्यकं त्रिलोकरामकं ।
नमामि ब्रह्मधामकं सखापुरामनामकम् ॥ २ ॥

शमक्षमादिलक्षणं प्रतिक्षणं स्वशिक्षणं ।
मुमुक्षुरक्षणे क्षमं क्षमेषु वै विलक्षणम् ॥

सुलक्ष्य लक्ष्य संशयं हरं गुरुं हि मामकं ।
नमामि ब्रह्मधामकं सवापुरामनामकम् ॥ ३ ॥
कलेशलेशवेशशून्यदेशके प्रवेशकं ।
गताविशेषशेषकं ह्यशेषवेषदेशकम् ॥
परेशकं भवेशकं समस्तभूपभामकं ।
नमामि ब्रह्मधामकं सवापुरामनामकम् ॥ ४ ॥
सकालकालिजालभालभेदिभानभल्लकं ।
प्रभिन्नखिन्ननुन्नभाविजन्ममत्तमल्लकम् ॥
सभेदखेदछेदवेदवाक्ययूथयामकं ।
नमामि ब्रह्मधामकं सवापुरामनामकम् ॥ ५ ॥
भवाष्टकष्टपाशदासभावभासनाशकं ।
सुशुद्धसत्त्वबुद्धतत्त्वब्रह्मतत्त्वभासकम् ॥
स्वलोकशोकशोषकं वितोषदोषवामकं ।
नमामि ब्रह्मधामकं सवापुरामनामकम् ॥ ६ ॥
सबंधुजन्मसिंधुपारकारिकर्णधारकं ।
सलोभक्षोभकोपगोपरूपमारमारकम् ॥

खबालकालवारकं समाप्तसर्वकामकं ।
नमामि ब्रह्मधामकं सवापुरामनामकम् ॥ ७ ॥

स्वलक्ष्यदक्षचक्षुषं स्वरूपसौख्यसंजुषं ।
कृतार्थचेतनायुषं गतार्थगामितस्थुषम् ।
विभोग्यजातदुर्विषं मुषं गुणालिदामकं ।
नमामि ब्रह्मधामकं सवापुरामनामकम् ॥ ८ ॥

भवाटवीविहारकारि जीवपांथपारदं ।
सुयुक्तिमुक्तिहारसारदं सुबुद्धिशारदम् ॥
सपीतपादकांबरो ब्रवीतितं स्वरामकं ।
नमामि ब्रह्मधामकं सवापुरामनामकम् ॥ ९ ॥



श्रीमन्मंगलमूर्तिपूर्तिसुयशःस्वानंदवार्युल्लसत् ।
सौभाग्यैकसरित्पतिं प्रतिहतप्रोद्भूततापत्रयम् ॥
संसारस्तृतिलभ्रमभ्रमनसामुद्धारकं क्वागतं ।
प्रत्यक्तत्त्वसुचित्स्वरूपसुगुरुं रामं भजेऽहं मुदा ॥ १ ॥

(श्रीपदार्थमंजूषातः)

॥ श्रीसद्गुरुभ्यो नमः ॥

॥ अथ ब्रह्मनिष्ठपंडितश्रीपीतां-बरजीका जीवनचरित्र ॥



॥ उपोद्घात ॥

॥ श्लोकः ॥

पीतांवराह्वविदुषश्चरितं विचित्रम्
यद्वै वरिष्ठनरसद्गुणरत्नयुक्तम् ॥
ज्ञानादिसद्गुणगणैर्ग्रथितं स्वकीय-
ज्ञानान्मुमुक्षुमतिशुद्धिकरं च वक्ष्ये ॥ १ ॥

टीकाः—

पीतांवर है नाम जिनका ऐसैं जे पंडितजी

तिनका चरित्र कहिये जीवनचरित्र । अर्थ यह जोः—जन्मसैं आरंभकरिके अद्यपर्यंत जीवत्-अवस्थाविषै तिनोंका आचरण । ताकूं मैं कहूँगा ॥

१. सो चरित्र कैसा है ? विचित्र है कहिये अद्भुत (आश्चर्यरूप) है ॥

२ फेर कैसा है ? जो प्रसिद्ध अत्यंतश्रेष्ठपुरुषोंके सद्गुणरूप रत्नोंकरि युक्त है ॥

३ फेर कैसा है ? ज्ञानादिसद्गुणोंके गणों (समूहों) करि गुंथित है ॥

अर्थ यह जोः—जिस चरितविषै पंडितजीके औ तिनसैं संबंधवाले सत्पुरुषनके नामोंसैं स्मारित ज्ञान भक्ति वैराग्य उपरतिआदिकगुणोंका वर्णन किया है ॥

४ फेर कैसा है ? जो चरित्र अपने ज्ञानतैं स्वअंतर्गत पुण्योत्पादक औ स्वसजातीय-

गुणोत्पादक महात्माओंके गुणोंके विज्ञापन-
द्वारा याके विचारनैवाले मुमुक्षुनकी बुद्धिकी
शुद्धिका करनैवाला है ॥

इस श्लोकविषै आरंभमैं ।

१ "पीतांबर" शब्दकरिके ब्रह्मनिष्ठसद्गुरु
श्रीपीतांबरजीका औ ।

२ पीत है अंबर नाम वस्त्र जिसका । ऐसैं
विष्णुरूप सगुणब्रह्मका । औ

३ पीत कहिये स्वसत्तासैं कवलित कियाहै
अंबर कहिये आकाशादिप्रपंचरूप गर्भसहित
अव्याकृत (माया) रूप आकाश जिसनै

ऐसे सर्वाधिष्ठान निर्गुणपरब्रह्मका स्मरणरूप
तीनमंगलोंके आचरणपूर्वक इस जीवनचरित्र-
रूप ग्रंथके आरंभकी प्रतिज्ञा करी ॥ १ ॥

अव द्वितीयश्लोकविषै इस वर्णन करनैयोग्य महात्माके विशेषणभूत " पंडित " शब्दके अर्थकूं हेतुसहित कहेहैं:—

॥ श्लोक ॥

वंशावटंकनिगमागमशालिबुद्धि
विज्ञानशालिमतियुक्ततया हि लोके ॥
यः पंडितात्मकविशेषणयुक्तनाम्ना
पीतांवरेति प्रथितः पुरुपुण्यपुंजः ॥ २ ॥

टीकाः—

१ स्वकुलके "पंडित" ऐसे अवटंककरि । अरु
२ वेदशास्त्रकी बुद्धिरूप ज्ञानकरि । अरु
३ ब्रह्मात्मैक्यनिष्ठारूप विज्ञानकरि

विशिष्टमतियुक्त होनैकरि जो लोकविषै "पंडित" रूप विशेषणयुक्त "नामसैं पीतांबर" ऐसैं प्रसिद्ध वहुपुण्यके पुंजरूप हैं ॥

इहां "पंडित"पदके उक्तत्रिविधअर्थनके मध्य प्रथम अरु द्वितीय अर्थ गौण हैं औ तृतीयअर्थ मुख्य है। काहेतैं

"यस्य सर्वे समारंभाः कामसंकल्पवर्जिताः ॥
ज्ञानाग्निदग्धकर्माणं तमाहुः पंडितं बुधाः" ॥१॥

अस्यार्थः—जिसके लौकिकवैदिकसमारंभ-कामना अरु संकलपसैं वर्जित हैं। याहीतैं ज्ञानरूप अग्निकरि दग्ध भयेहैं संचित अरु क्रियमाणरूप कर्म जिसके। ऐसा जो पुरुष है ताकूं बुधजन "पंडित" कहतेहैं ॥ इस गीता-स्मृतितैं ज्ञाननिष्ठपुरुषविषैहीं " पंडित " पदकी वाच्यताके निश्चयतैं ॥ २ ॥

॥ कुलपरंपरा ॥

कच्छदेशविषै अंजारनामा नगर है । तामैं राज्यपूज्य महाज्योतिषीपंडित " नरेज्य " भयेथे जिसकी विद्वत्ताके माहात्म्यसैं अद्यापि ताका सारा वंश " पंडित " इस अवटंककरि युक्त भया-है । तिनके च्यारिपुत्र थे । तिनमैंसैं

१ एक भुजनगरमैं रहिके श्रीमहाराजाओंका दानाध्यक्ष भया ॥

२ द्वितीयपुत्र नारायणसरोवरतीर्थका पुरोहित भया ॥

३ तृतीयपुत्र अंजारनगरमैंहीं ज्योतिषीपंडित-पदकूं पाया । औ

४ ताका चतुर्थ अवरजपुत्र नागला भया । सो आसंबीया नामक ग्राममैं ग्रामाधीशके अतिआदरसैं निवास करताभया ॥

एक समयमैं गढसीसाग्रामनिवासी सारस्वत गंगाधरशर्मा था । सो कोडायग्राममैं पाठशाला पढावताहुया रात्रिकूं अश्वारूढ होयके चार-कोशपर आसंबियाग्राममैं पंडितजीके पास ज्योतिपशास्त्रके पढनै निमित्त प्रतिदिन जाताथा। सो गुरुचरणोंकूं गोदमैं लेके मुखसैं पढताथा॥ एकदिन पंडितजीकूं निद्रा आगई औ गंगाधरजी गुरुआज्ञाविना चरणोंकूं न छोडिके वैठारहा ॥ सवेरमैं सो देखिके ताकूं वर दिया किः—" तेरेकूं सरस्वती मुहूर्तप्रश्न कर्णमैं कहैगी " ऐसै प्रसादित-सरस्वतीवाले वे चागला नामक पंडित थे ॥ तिनके पुत्र दामोदरजी परमज्योतिपी भये। तिनके १ लीलाधर २ प्रेमजी औ ३ गोवर्धन ये तीन पुत्र थे। तिनमैं लीलाधरजी परमज्योतिषी औ भगवद्भक्त थे । वे आसंबियाग्रामसैं कदाचित् भज्जलग्राममैं पर्यटन करने जातेथे । तहां ग्रामाधीशोंकों

मुहूर्तप्रश्नोंके प्रसंगसैं बडी भविष्यत्‌चमत्कृति दिखाईथी । तिसकरिके तिनोंनै सत्कारपूर्वक गृह अरु जमीन देके तिनकूं मज्जलग्राममैं स्थापित किये । वे वार्धक्यमैं तीर्थयात्रा करनैकूं गये । सो पीछे लोटे नहीं ॥

लीलाधरजीके पुत्र १ गोपालजी तथा २ अमरसिंहजी थे । तिनमैं गोपालजीके पुत्र पंडित १ लद्धाराम २ पुरुषोत्तमजी तथा ३ पारपेया । ये तीन थे । तिनमैं पुरुषोत्तमजी जितेंद्रिय निष्कपट जपतपसंयुक्त अरु मुहूर्तप्रश्नमैं वाक्‌सिद्धिवान्‌के तुल्य थे ॥

॥ जन्मवृत्तांत ॥

पंडितश्रीपुरुषोत्तमजीके पुत्र पंडित १ मूलराज तथा २ पीतांबरजी तथा ३ लालजी । ये तीन भये ॥ तिनकी माताका नाम वीरबाई (वीरवती) था । सो बी वेदांतशास्त्रतैं जनित विवेकवती थी ॥

मूळराजके जन्मके अनंतर । सप्तभगिनियां । ८ भईयां । अनंतर पंडितपीतांवरजीका जन्म विक्रम संवत् १९०३ के ज्येष्ठशुद्ध १० रूपगंगा जयंतीके दिन भयाहै ॥ तिनके जन्मदिनमैं माता पिताकूं औ भगिनीयोंकूं औ सुहृदलोकनकूं " भगवत्का जन्म भया " ऐसा उत्साह भया था ॥ यथाशास्त्र जातकर्म पुण्यदादि कियागया ॥ वे गर्भवासमैं थे तव माताकूं नारायणसर आदिक तीर्थयात्रा भईथी औ वेदांतश्रवण अरु अनच्छिन्नसत्संग भयाथा तिस हेतुसैं वे बाल्यावस्थासैंहि वेदांतशास्त्रमैं रुचिवाळे भये ॥ वृद्ध कहतेहैं किः—षट्मासके गर्भके हुये जो माताकूं सत्शास्त्रका श्रवण होतारहे तो पुत्र बी शास्त्रसंस्कारवान् होताहै ॥ है वार्ता प्रह्लादअष्टावक्रादिकमैं प्रसिद्ध है ॥

॥ कौमार औ पौगण्डसैं लेके किशोरवयका वृत्तांत ॥

पंडितपीतांबरजीके जन्मअनंतर तिनके पिताकी दिनादिन भाग्यवृद्धि होतीगई ॥ ऐसैं तिनके लालपालन पोषण करते हुये तिनविषै माता पिताकी प्रीति बढतीगई ॥ पांचवर्षके अनंतर लघुवयविषै तिनके पिता सुभाषितप्रकीर्णश्लोकादि-मुखपाठ पढातेथे सो धारण करतेरहे । तदनंतर पिताद्वाराही देवनागरीलिपिका ज्ञान भया । तदनंतर मंदिरादिकमैं जातेआते संन्यासीसाधु-ब्राह्मणोंके पास बी स्तोत्रपाठादिकी शिक्षा लेते भये औ तिनोंसैं तीर्थादिककी वार्ता औ प्राचीन इतिहासः प्रेमतैं सुनतेरहे ॥ अनंतर अष्टवर्षकी वयमैं इनोंका विधिपूर्वक उपवीत भयाथा ॥

फेर श्रोत्रियब्रह्मनिष्ठसद्गुरु श्रीबापुमहाराज-ब्रह्मचारी जे दशवर्षसैं रामगुरुकी आज्ञाकरि सत्संगीजनोंकी भक्तिपूर्वक प्रार्थनासैं मज्जलग्राम-मैं रहतेथे । तिनोंके पास अक्षरवाचनकी परि-पक्वता अरु संध्यावंत उपनिषद्‌पाठ गीतापाठ अरु रुद्राध्यायादिवेदके प्रकरणोंका पठन दोवर्षतक करतेभये ॥ तिनके साथि अन्य बी सहाध्यायी थे । परंतु इनके सदृश किसीकी धारणशक्ति नहीं थी । सो देखिके तिनके ऊपरि गुरुकी पूर्ण कृपा रहतीथी । याहितैं तिनकी बुद्धिमैं ब्रह्मविद्याके संस्कार डालते रहतेथे । तबहीं " मैं देहेन्द्रियादि-संघातसैं भिन्न साक्षीरूप हौं" । यह निश्चय दृढ होरहाथा अरु तिन महात्माविषै तिनकी गुरुनिष्ठा बी दृढतर होरहीथी । तब कौपीन-धारण गुरुसमीपवास गुरुसुश्रुषा इत्यादि । ब्रह्म-चारीके धर्म संपूर्ण पालनकरिके रहतेथे ॥

आधुनिकरूढिसैं तिनका उद्वाह १० वर्षके अनंतर भयाथा । तदनंतर श्रीसद्गुरुका वटपत्तनमैं निर्गमन भया ॥ तिनके वियोगके समयमैं प्रेमपूर्वक गद्-गदकंठादिप्रेमके चिह्न बी होतेरहे औ श्रीगुरुके साथिहीं अध्ययनके निमित्त जानेका बहुत आग्रह भयाथा । परंतु मातापिताने बहुत हठलेके निवारण किया ॥

यज्ञोपवीतके अनंतर सोमप्रदोप एकादशी-आदि शास्त्रोक्तव्रत अनवच्छिन्न करतेरहे औ व्रतके दिनमैं योग्यदेवका पूजन औ प्रतिदिन-स्वपिताके पंचायतनपूजाका स्वीकार आपहीं कियाथा ॥ तिस तिस स्तोत्रादिकके पठनरूप भजनमैं काल व्यतीत करतेथे ॥ प्रासादिक लघुस्तवस्तोत्रका पाठ प्रतिदिन नियमसैं करतेथे औ महाराजश्रीके निर्गमन भये पीछे श्रीरामगुरु-

की चरणपादुका मज्जलग्राममैं महाराजकेहीं स्थानमैं स्थापितथी उसकी पूजाअर्चादि वही करतेरहे ॥ तिस वयमैं स्वमित्रोंके पास " चलो हम स्वगृह छोडिके तीर्थयात्रादिक करैं वा विद्याध्ययन करैं वा सत्समागम करैं " । ऐसी शुभ वासना तिनोंके चित्तमैं उदय होती रही । परंतु वे मित्र सलाह देते नहीं थे ॥ महाराजके गमनानंतर तिनोंकेहीं स्थानमैं कोई देशांतरवासी रामचरण नामक वेदांतसंस्कारयुक्त विरक्तसाधु रहतेथे । तिनके साथि बहुत परिचय रखतेहीं रहे ॥ पीछे सो साधु रामगुरुकी पादुकाका पूजनबी करतेथे औ प्रतिदिन ब्राह्ममुहूर्तमैं स्नानादिक्रिया तथा संपूर्णगीतापाठ औ अनुक्षण रामनामका भजन करतेथे औ रामायण भागवत वेदांतके प्रकरणग्रंथोंकी कथा करतेथे ॥

पंडितजीनै कितनेककाळ गढसीसाग्रामके स्वस्वसापति देवचंद्र नामक ज्योतिर्विदके पास मुहूर्त ज्योतिष आदिकका कछुक अभ्यास कियाथा । तिस प्रसंगमैं तहांसैं सन्निकृष्ट एकप्रतिष्ठित बिल्वेश्वर नामक महादेवका विल्ववनविषै प्राचीन धाम है तहां पूजनकूं गयेथे औ श्रावणमासमैं बहुतदेशभरके विद्वान्ब्राह्मण पूजननिमित्त आतेहैं । तिन्होंसैं अनेकशास्त्रप्रसंग औ वार्तालाप कियाथा ॥

तदनंतर मज्जलग्राममैं एक व्याकरणआदिकविद्याविषै कुशळ लब्धिविजय नामक यतिवर थे तिनके पास पिताकी आज्ञासैं व्याकरणाभ्यास करतेरहे ॥ कदाचित् तहां देशांतरपर्यटनशील परमविरक्त क्षमा दया धैर्य मौन तितिक्षा आदिक

अनेकसद्गुणरत्नाकर पद्मविजयजी नामक यतिवरिष्ट आयेथे । तिनके पास व्याकरणाभ्यासनिमित्त जातेआते रहे ॥ इनोंकी सुशीलतादिकशुभगुण देखिके तिनोंकी बी परमप्रीति भयीथी ॥ परस्परचित्त बहुत मिलता रहा ॥ फेर कितनेक कालपर्यंत वह पिताकी आज्ञासैं तिनके साथि विचरतेरहे औ व्याकरणाभ्यास करतेरहे ॥ अंतमें कितनेक काल भुजनगरमैं तिनके साथि रहतेथे ॥ जितना कछु प्रतिदिन पाठ लेतेथे तितना कंठहुं करलेतेथे ॥ बहुतसा व्याकरणाभ्यास तहां पूर्ण भया ॥ फेर तिस महात्माकी देशांतरविषै तीर्थयात्राके निमित्त जिगमिषा भई । तिनके साथिहीं पिताकी आज्ञासैं पंडितजी निर्गमन करतेभये । परंतु माताके अतिस्नेहसैं दूतद्वारा मध्यसैं बुलायेगये ॥

॥ मध्यवयोवृत्तांतः ॥

फेर साधु श्रीरामचरणदासजीके साथि रामायणादिग्रंथनका विचार करतेरहे ॥ कदाचित् काकतालीयन्यायकरि कोइक ब्रह्मनिष्ठपरमहंस स्वगृहमैं आयके रहेथे तिनोंनै वेदांतके संस्कारका उज्जीवन किया। फेर पिताजीके साथि नौकाद्वारा श्रीमुंबईनगरविषैं गमन किया ॥ तहां नासिकनगरनिवासी संसारोपरत श्रीनारायणशास्त्रीके विद्यार्थी श्रीसूर्यरामशास्त्रीके पास काव्यकोश व्याकरण भागवतादि शास्त्रनका अध्ययनकरिके संस्कृतवाणीविषै व्युत्पन्न मतिवाले भये ॥ फेर वेदांतार्थकी जिज्ञासाकरिके स्वामीश्रीरामगिरीजीके पास पंचदशीका अभ्यास करतेरहे ॥

तावत् पूर्वपुण्यपुंजपरिपाकके वशतैं सद्गुरु श्रीबापुमहाराजजी अकस्मात् मुंबईमैं पधारे । तिनोंके पास विधिपूर्वक गमनकरिके पंचदशी-आदिकग्रंथनका अध्ययन तथा श्रवण करतेहुये श्रीगुरुके साथि नासिकक्षेत्रमैं जायआयके नौकाद्वारा श्रीकच्छदेशविषै आयके स्वकीयश्री-मजलग्राममैं पधारे ॥ तहां स्वतंत्र वेदांतग्रंथनका अध्ययन तथा अनेक मुमुक्षुनके साथि अध्ययन औ श्रवण करतेरहे ॥ तब श्रीसद्गुरु जहां जहां सत्संगीजनोंके ग्रामोंमैं विचरतेथे । तहां तहां सहचारी होयके अध्ययन औ श्रवण करतेरहे ॥ दोवर्षपर्यंत श्रीगुरु कच्छदेशमैं विचरिके फेर जब वटपत्तन (वडोदरानगर) के प्रति पधारे तब श्रीभुजनगरपर्यंत बहुतसत्संगीजनसहित श्रीगुरुके साथि आयके फेर तिनोंकी आज्ञाके अनुसार मजलग्राममैं आवतेभये ॥

तहां कछुककाल स्वगुरुभ्राता रामचैतन्यशर्मा ब्रह्मचारी औ बुद्धिशालि यदुवंशी बापुजीवर्मा-क्षत्रिय आदिसत्संगीजनोंकूं पंचदशी उपदेशसहस्री नैष्कर्म्यसिद्धि तत्त्वानुसंधान विचारसागरआदिक प्रकरणग्रंथोंका श्रवण करावतेथे ॥

फेर संवत् १९२४ की शालमैं तिनोंके गृहमैं देवकृष्णशर्मापुत्रका जन्म भया ॥ तदनंतर मास-त्रय पीछे तिनोंके पिता परमपदकूं पाये ॥ पीछे त्वरितहीं आप मुंबईमें पधारे । तब परमपुण्यके वशतैं श्रीविष्णुदासजी उदासीन परमहंसके शिष्य औ पंडितश्रीनिश्चलदासजीके विद्यार्थी औ कवि-राज परमअवधूत महात्माश्रीगिरिधरकविजीके साधकं सकलसाधुगुणसंपन्न स्वामीश्रीत्रिलोक-रामजी स्वमंडलीसहित श्रीमुंबईमें पधारे ॥ तहां संतनके दास सोहं नारायणजी त्रिविक्रमजीआदिक

सतसंगीजनोंकी प्रार्थनासैं एकोनविंशति (१९) मासपर्यंत श्रीमुंबईमैं निवास करतेभये ॥ तब श्रीवृत्तिप्रभाकर तथा श्रीविचारसागर इन दोग्रंथन-का सम्यक्श्रवण होतारहा औ अहर्निश तिन महात्माके पास एकांतवासविषे रहिके तत्कृपा-पूर्वक अनेकवेदांतके पदार्थनका शंकासमाधान-पूर्वक निर्णय करतेरहे औ तिन महात्माके मुखसैं सुनिके अरु देखिके अनेककल्याणकारी-सद्गुणोंका स्वचित्तमैं आधान करतेभये ॥ बीचमैं अवकाश देखिके पंडितश्रीजयकृष्णजीमहात्मा-के पास श्रीआत्मपुराणआदिकग्रंथनका बी श्रवण करतेरहे ॥ औ भट्टाचार्यश्रीभिकुं-शास्त्रीके विद्यार्थी श्रीमीमाचार्यशर्मनैयायिकके पास न्यायग्रंथनका अभ्यास बी करतेरहे औ तहां आयके प्राप्त भये निर्मलसाधु श्रीगंगासंगजीके पास वेदांतके प्रकरण देखतेरहे ॥

किसी दिन स्वामीराघवानंदजीनें पंडितनकी सभा करवाईथी तहां पंडितजीनें वेदांतविषयक पूर्वपक्ष कियाथा ताका समाधान आशुकवि श्री गट्टुलालोपनामक गोवर्धनेशजीनें कियाथा औ श्रेष्ठबुद्धि देखिके प्रसन्न होयके कह्याकिः—हमारे वहां कछु अध्ययन करनेकूं आतेरहो ॥ तब तिनोंके पास शांकरउपनिषद्भाष्यका अध्ययन करतेरहे ॥

फेर संवत् १९२६ के वर्षमें कर्पदी मंडली-सहित स्वामीश्रीत्रिलोकरामजीके साथि श्री-प्रयागराजके कुंभपर जायके कल्पवास किया। तहां पंडितश्रीकाकारामजीके विद्यार्थी प्रयागवासी महोपराम संतोषरूप खड्गधारी महात्माश्रीब्रह्म विज्ञानजी तथा तिनके शिष्य उत्तमपरमहंस

श्रीकाशीवाले अमरदासजी । कनखलवाले अमरदासजी । बडे आत्मस्वरूपजी । महापंडित ज्योतिःस्वरूपजी । तथा मंडलेश्वर आदित्यगिरिजी । आदित्यपुरीजी । फणीन्द्रयति । ब्रह्मानंदजी महंतहरिप्रसादजी । सुमेरगिरिजी । बलदेवानंदजीआदिक अनेकमहात्माओंका समागम भया ॥ तहां किसी प्रसंगसैं महात्मा काशीवाले अमरदासजीके पास पंडितजीनै प्रश्न कियाः--

१ (१) प्रश्नः—किं विदुषो लक्षणं ?
(२) उत्तरः—रागादिदोषराहित्यम् ॥

२ (१) प्रश्नः—रागाद्यभावे संति इष्टानिष्टयोः प्रवृत्तिनिवृत्त्यनुपपत्तेर्विदुषः प्रारब्ध भोगो न स्यात् ?
(२) उत्तरः—अदृढरागादित्वं विदुषो लक्षणम् ॥

३ (१) प्रश्नः—अदृढरागादेः किं लक्षणम् ?

(२) उत्तरः—नैरंतर्येण रागाद्यभावत्वं (विचारनिवर्त्यरागादित्वं) अदृढ-रागादित्वं ॥

४ (१) प्रश्नः—सुषुप्तौ सर्वप्राणिनां रागाद्यभावेन नैरंतर्येण रागाद्यभावात् अज्ञेष्वपि तज्ज्ञलक्षणस्यातिव्याप्तिः सेत्स्यति ।

(२) उत्तरः—यद्यपि सुषुप्तौ अंतःकरणाभावात्त्वेवमस्तु तथापि जाग्रदादावंतःकरणसंबंधे सति नैरंतर्येण रागाद्यभावत्वमदृढरागादित्वं इति तु नातिव्याप्तिः ॥

५ (१) प्रश्नः—सुषुप्तौ संस्काररूपेणांतःकरणसद्भावेनांतःकरणसंबंधसत्वादुक्तलक्षणस्याज्ञेष्वतिव्याप्तिः ॥

(२) उत्तरः—स्थूलांतःकरणसंबंधे सति इति स्थूलपदस्य निवेशे कृते नातिव्याप्तिः ॥

६ (१) प्रश्नः—कृष्यादिकर्मणि संलग्नस्याज्ञस्यापि स्थूलांतःकरणसंबंधे सत्यपि रागाद्यभावादुक्तलक्षणस्याज्ञेष्वतिव्याप्तिः ?

(२) उत्तरः— स्त्रीशत्रुप्रभृत्यनुकूलप्रतिकूलपदार्थसान्निध्ये स्थूलांतःकरणसंबंधे च सति नैरंतर्येण रागाद्यभावत्वं अदृढरागादित्वं तदेव विदुषो लक्षणम् ॥

७ (१) प्रश्नः—षष्ठसप्तमभूम्योस्तु सर्वथा रागाद्यभावेनादृढरागाद्यभावादुक्तलक्षणस्य तत्राव्याप्तिः ॥

(२) उत्तरः—दृढरागादिराहित्यं विदुषां लक्षणं सिद्धमिति वाच्यम् ॥

इसरीतिसैं प्रयागमैं प्रश्नोत्तर.भयाथा ॥

वर्षरोजकी तीर्थयात्राके मिषकरि आगेसैं निर्गत भौ तहांहीं प्राप्त भये श्रीगुरुका दर्शन करिके तिनोंकी आज्ञासैं श्रीकाशीपुरीमैं पधारे । तहां गौघाटपर स्थित अपूर्व परमोपरत स्त्रीदर्शनादिरहित एकांतवासी समाहित प्राकृतालापरहित किंचित्संस्कृतालापी श्रीरामनिरंजनोपनामक पदवाक्यप्रमाणज्ञ स्वामीश्रीमहादेवाश्रमजीके पास जातेआते रहे ॥ तिनोंके पास जो कछु प्रश्नोत्तर भया सो पंडितजीकृत प्रश्नोत्तरकदंब नामक ग्रंथमैं प्रसिद्ध है ॥

तहां दर्शनस्पर्शन करिके श्रीगया श्राद्धकरि आये तब श्रीकाशीराजके मंत्रीने मिलनै की इच्छा विज्ञापन करीथी । अनवकाशतैं मिलाप न भया । फेर तहांसैं गोकुलमथुराआदिक व्रजमंडलकी यात्रा करीके पुनः मुंबई पधारे । तहां पुनः श्रीगुरुका कछुकदिन समागम भया ॥

पेर तदाज्ञापूर्वक कच्छदेशमें आयके स्वानुज-लालजीका विवाह किया ॥ पीछे रामाबाई नामक एकफन्याका जन्म भयाहीथा । तदनंतर गार्हस्थ्यसुखभोगविषै उदासीन हुये पादोनद्वि-वर्षपर्यंत कर्णपुरनामक ग्राममें ग्रामाधीशोंके गृहमें पूज्य होयके स्थित एकांतभजनशीलताआदिक अनेकसद्गुणालंकृत देशप्रतिष्ठित महात्मासाधु श्रीमान्ईश्वरदासजीकूं श्रीवृत्तिप्रभाकररूप भाषा-ग्रंथ औ श्रीपंचदशीआदिक संस्कृतग्रंथनका अध्ययन करातेहुये रहेथे ॥ वे महात्मा पंडितजी-विषै देहांतपर्यंत कृतघ्नतानाशक गुरुबुद्धि धारतेथे ॥ ताके मध्य कोटडी महादेवपुरीविषै स्थित श्रीमान्अर्जुनश्रेष्ठ नामक महात्माकूं मिलने गयेथे । तहां तिनोंकी इच्छासैं सार्धद्विमास-पर्यंत रहिके सानंदगिरिश्रीगीताभाष्यका परस्पर विचार करतेभये ॥

फेर तहां कच्छदेशमैं द्वितीयवार श्रीगुरुका आगमन भया । तव तिनोंके साथि विचरतेहुये श्रवणाध्ययन करतेरहे । तव तिनोंके साथिहीं शंखोद्धार (बेट) औ द्वारिकाक्षेत्रमैं जायके स्वदेशमैं आये ॥ फेर गुरुआज्ञापूर्वक मुंबई पधारे तव उत्तमसंस्कारवान् उत्तमाधिकारी रा. रा. श्रेष्ठशरीफभाई सालेमहंमद तथा परमविद्वान् सुसुहृत् उत्तमाधिकारी रा. रा. मनःसुखराम सूर्यरामभाई त्रिपाठि इन दोअधिकारीनकूं श्रवणाध्ययन करावतेरहे ॥ तव प्रसंगप्राप्त तैलंग-देशीय पदवाक्यप्रमाणज्ञ याज्ञिकसुब्रह्मण्यमखीं-द्रशर्माशास्त्रीजी तहां विराजेथे तिनोंके पास शारीरभाष्यसहित ब्रह्मसूत्रनका शांतिपाठपूर्वक श्रवण करतेरहे । तव श्रीस्वामीस्वरूपानंदजी सहा-ध्यायी थे ॥

अनंतर शरीरभाईआदिकनकी प्रार्थनातैं श्रीपंचदशीकी भाषाटीका तथा श्रीविचारसागरके मंगलके पंचदोहाकी टीकापूर्वक टिप्पणिका तथा श्रीसुंदरविलासके विरातिनके विपर्ययनामक अंगकी टीकासहित टिप्पणिका तथा श्रीविचारचंद्रोदय । वृत्तिरत्नावलि । सटीक बालबोध । संस्कृत श्रुतिषड्लिंगसंग्रह । श्रीवेदस्तुतिकी टीका । स्वामीश्रीत्रिलोकरामजीकृत मनोहरमालाकी टिप्पणिकासहित सर्वात्मभावप्रदीप आदिकग्रंथनकूं रचतेभये ॥ उक्त सर्वग्रंथ छपेहैं औ श्रीवेदांतकोश । बोधरत्नाकर । प्रमादमुद्गर । प्रश्नोत्तरकदंब । षड्दर्शनसारावलि । मोहजित्कथा । सदाचारदर्पण । ज्ञानागस्ति । भूमिभाग्योदय रूपकादर्श औ संशयसुदर्शनआदिकग्रंथ किंचित् अपूर्ण होनेतें छपे नहीं है। पूर्ण होयके छपेंगे ॥

संवत् १९३० की शालमें आप वडोदामें पधारेथे । सार्धमासपर्यंत रहे ॥ वहांसैं मुंबई पधारे पीछे श्रीगुरु परब्रह्मसमरसभावकूं प्राप्त भये ॥ जब पंडितजी महोत्सवपर पधारेथे औ संवत् १९३३ की शालमैं भावनगरके महाराजा तख्तसिंहजी तथा महामंत्री गौरीशंकर उदयशंकर तथा उप-मंत्री झामल्दासभाई परमानंददास मुंबईविषै मिले औ तिसीवर्षमें स्वज्येष्ठभ्राता मूलराज अरु धर्मपत्नीका देहांत भया औ जूनागढके महामंत्री ब्रह्मनिष्ठ श्रीगोकलजी झाला मुंबईगत चीनावागमैं मिले । तहां प्रथम अज्ञात हुये पीछे किसी स्वामीके वाक्यसैं विदित भये । यातैं वीतरागताकरि-उपमित भये ॥

त्रिपाठी रा. रा. मनःसुखराम सूर्यराम शर्मा-की श्रीकच्छमहाराजाओंकी आज्ञापूर्वक राओ-बहादुर दिवानबहादुर महामंत्री श्रीमणिभाई यशभाईद्वारा पूर्णसहायताप्रदानपूर्वक प्रार्थनासैं तथा श्रीभावनगरके महाराज तथा श्रीवढवाणके महाराज तथा श्रेष्ठ हरसुखराय खेतसीदास तथा श्रेष्ठ प्रयागजी मूलजीआदिक सद्गृहस्थन-की सहायताप्रदानपूर्वक इच्छासैं ईशा केन काठवल्ली प्रश्न मुंडक मांडूक्य तैत्तिरीय औ ऐतरेय इन अष्टउपनिषदनका सटीक श्रीशंकर-भाष्यके व्याख्यानसहित व्याख्यानकरिके छप-वाया है ॥

तदनंतर संवत् १९३९ की शालमैं भावनगर जायके तहां राज्यादिकसैं योग्यसत्कारकूं पायके श्रीप्रयागके कुंभपर द्वितीयवार पधारे ॥ तहां महात्मा स्वामी श्रीत्रिलोकरामजी तथा श्रीमदमरदासजी तथा खेरपुरके महंत जन्मतैं वाक्सिद्धिवान् साधुश्रीगुरुपतिजी ताके शिष्य संगतिदासजी तथा साधबेलाके महंत श्रीहरिप्रसादजी तथा श्रीत्रिलोकरामजीके शिष्य पंडितअनंतानंदजी तथा पंडितकेशवानंदजी तथा पंडितभोलारामजी तथा पंडितस्वरूपदासजी तथा परमविरक्त मंडलेश्वर साधुश्रीब्रह्मानंदजी तथा साधुश्रीदयालदासजी तथा श्रीमयारामजीआदिक अवधूतमंडल इत्यादि अनेक महात्माओंका दर्शनसंभाषण कियां ॥

फेर श्रीकाशीजीमें आये ॥ तहां स्वामी त्रिलोक-रामजीकी मंडलीके साथि ही पंचकोशीकी यात्रा करी औ प्रसिद्ध महात्मा पंडित अमरदासजी तथा श्री-वितोपनुहरीदासजीके शिष्य वरणानदीपर विराजित साधुश्रीलालदासजीका दर्शन भाषण किया । तथा अवधूत दंडीस्वामी श्रीभास्करानंदजीका तथा दंडी-स्वामी पंडित श्रीविशुद्धानंदजीका तथा स्वामी श्रीतार-काश्रमजीका तथा दुर्वेश्वरमठाधीश स्वामी श्रीरामगि-रिजीका तथा तिनके शिष्य योगिराज श्रीरुद्रानंद-जीका तथा त्रिशूलयतिके मठमें स्थित स्वामी श्रीवीर-गिरिजीका औ भरूचवासी स्वामी श्रीअद्वैतानंदजी आदिकका दर्शन सभाषण किया॥ पीछे स्वामी श्री-त्रिलोकरामजीकी आज्ञासें श्रीअयोध्याके प्रति पधारे।

सर्वदा स्वकन्या रामाबाई तथा भ्रातृपुत्री लील बाई साथि रही ॥ तहां भगवन्मंदिरोंके दर्शनपूर्वक सिद्ध श्रीरघुनाथदासजी तथा सिद्ध श्रीमाधवदासजीके दर्शन तथा सरयुस्नान करिके श्रीनैमिषारण्यविषै पर्यटन करिके व्रजमंडलमैं विचरिके श्रीपुष्क-रराज तथा सिद्धपुरके सन्निध सरस्वतीका स्नानादि क-रिके श्रीडाकोरनाथका तथा बडोदानगरगत ज्ञान-मठमैं श्रीरामगुरुकी तथा श्रीसद्गुरुबापुसरस्वतीकी समाधिके तथा चरणपादुकाके दर्शनपूर्वक मंत्रीवर श्रीमणिभाई यशभाईका मिलाप करिके फेर मुंबईमैं पधारे ॥ तहांसैं श्रीकच्छदेशविषै आये । तहां मणि-भाई मंत्रीसहित श्रीकच्छमहाराओका मिलाप भया ॥

फेर संवत् १९४० की शालमैं महाराजाधिरा-जश्री ५ मत्हथुआधीशकृष्णप्रतापसाहिबहादुरश-

र्मीका प्रेमपत्र आया सो बांचिके बडा हर्ष भया ॥ फेर श्रीहथुवासैं काश्मीरी पंडित जनार्दनजीकूं दर्शनके निमित्त मज्जलग्राममैं भेजा था। अनंतर बहुत मुमुक्षुजनोंकी जिज्ञासापूर्वक प्रार्थनासैं यजुर्वेदीय श्रीबृहदारण्यकोपनिषद्के हिंदीभाषामैं व्याख्यानके लिखानेका स्वपुत्रके हस्तसैं ही प्रारंभ करिके पांच वर्षोंसैं ताकी समाप्ति करी ॥ बीचमैं श्रीकच्छमहाराओकी आज्ञासैं श्रीसिंहशीशागढग्राममैं मकान बनायके निवास किया। अवांतरकालमैं ही श्रीहथुआमहाराजकी तीव्र जिज्ञासासैं आकर्षित हुए स्वानुज लालजीसहित श्रीकाशीपुरीके प्रति जिगमिषा करिके मुंबईमैं आये ॥ तहां तीन दिनके अनंतर महाराजके भेजे पंडित जनार्दनजी सामने लेनेकूं आये ॥ श्रीपुरी मैं पहुँचे तब श्रीहथुआमहाराज सन्मुख पधारे औ

दंडवत् प्रणाम किया औ दुर्गाघाटपर महाराजा श्रीडुमरांवोके बगीचेमें श्रेष्टसत्कारपूर्वक निवास कर-वाया था । तहां प्रतिदिवस आप मुखचर्चाश्रवणअर्थ पधारते थे । फेर पंडितजीके साथि ही स्वसद्गुरु दंडी-स्वामी श्रीमाधवाश्रमजीकी सन्निधिमें चैतन्यमठविषै राजा पधारते थे । तहां बी परमानंदकारी प्रश्नोत्तररूप वचनविलास होता रहा ॥ तिस प्रसंगमैं अनेक महात्मा-ओंके दर्शनअर्थ महाराजके सहचारी ब्राह्मणोंके सहित प्रतिदिन पंडितजी पधारते थे ॥ फेर महारा-जकी आज्ञासैं मुंबईपर्यंत पंडितजनार्दनजीरूप सार्थ-वाहकसहित पधारे ॥ मध्यमैं जाके हस्तसैं निवेदित अन्नकूं साक्षात् हरि भोगते हैं ऐसी सुभक्ता शिष्या हीरबाई ब्राह्मणीकूं दर्शन देने अर्थ सेंभरी ग्राममैं ७ दिन वसिके मुंबईद्वारा फेर श्रीकच्छदेशमैं स्वानुज-सहित आयके उक्त व्याख्यान समाप्त किया ॥

कछुक काल स्वदेशगत सत्संगी जनोंके ग्रामोंमैं विचरते रहे । फेर संवत् १९४७ की शालमैं श्रीहरिद्वारके कुंभपर गमनअर्थ साधु श्रीईश्वरदासजीके शिष्य प्रेमदास सहित श्रीकराचीनगरमैं पधारे ॥ तहां पंडित स्थाणुरामके तनुज पंडित श्रीजयकृष्णजीआदिक अनेक सत्संगी जन वाहनोंसैं सन्मुख आयके लेगये ॥ तहां दश दिन कथा-श्रवण भया तब हैदराबादके केइक सत्संगी लेनेकूं आये तिसकरिके तहां पधारे । तब पंडित जयकृष्णजी साथि ही रहे ॥ फेर कोटडीमैं आयके ताकी सन्निधिमैं स्थित गीधुमलके टंडेमैं पंडित स्थाणुरामजीके गृहमैं एक रात्रि रहे ॥ सवेरमैं सिंधदफतरदारसाहेबका अवलकारकुन मिस्टर तनुमल चोइथराम, विष्णुराम, केवलराम औ छत्तूमल ये गृहस्थ अश्वशकटिकासैं लेनेकूं आये तब तदारूढ होयके शहर हैदराबादकी शोभा देखते हुए नगरसैं बाहिर छत्तूमलके शिवालयमैं चार

दिवस निवास किया । तहां अहर्निश ईश्वरभजन-परायण मौनी दुग्धाहारी एक अपूर्व ब्रह्मचारीका दर्शन भया औ नगरमैं एक परमोपरत ज्ञानादि-गुणसंपन्न कलाचंदनामक भक्तका दर्शन भया औ केइक उत्तम भजनवानोंके स्थान देखे. स्वनिवासस्थानमैं सत्संगीजन प्रतिदिन श्रवण-अर्थ आते थे अरु दर्शननिमित्त नरनारीका प्रवाह प्रचलित भया था ॥ वहांसैं चलनैके दिनमैं पंडित युक्तिरामनामक संतनै स्वस्थानमैं आग्रहपूर्वक बुलायके पूजा सत्कार किया ॥ वहांसैं लेआनैवाले गृहस्थ ही रेलतलक छोडनेकूं आये । फेर तहांसै शिखर सहरमैं आयके एक रात्रि रहे ॥ साधबेला-नामक संतनके स्थानका दर्शन किया औ रोडीग्राममैं जायके उदासीनपरमहंस पंडित केशवानंदजी जो अमूलकदासजी महात्माके शिष्य थे उनकूं मिले औ परमार्थी वसणभक्तकूं बी मिले ॥

फेर वहांसैं मुलतान तथा लाहोरके मार्गसैं अमृतसरमैं आये। तहां शेठ ताराचंद चेलारामकी दुकानपर एक रात्रि रहे ॥ वहां महाराजा श्रीकृष्ण प्रतापसाहिबहादुर शर्मा का प्रेमपत्रक आया था सो वांचिके प्रसन्न भये। प्रातःकालमें श्रीगुरुनानकजी के दरबारका सरोवरके मध्य दर्शन भया ॥ फेर वहांसैं श्रीहरिद्वारपुरीमैं पधारे। तहां नील-धारापर महात्मा श्रीत्रिलोकरामजीकी मंडलीका निवास था। वहां वसति करी ॥ ब्रह्मकुंडका स्नान महज्जनोंका दर्शन संभाषण भया ॥ फेर वहांसैं उक्त मंडलीके साथि ही हृषीकेश पधारे ॥ वहां परोपकारक कमलीवाले महात्मा श्रीविशुद्धानंदजी मिले औ गंगातीरनिवासी तपस्वीजी श्रीगुरुमुख-दासजी मयारामजी अवधूतआदिक अनेक उत्तम संतोंका दर्शन भया ॥ वहांसैं लौटिके श्रीअयोध्या-पुरीमैं आये ॥ वहांसैं रेलमैं बैठिके श्रीहथुवा-

नगरमैं जानैअर्थ अलीगंजमैं आये । तहां अश्व-
शकटिकासहित महाराजका पंडित सामने लेनेकूं
आया था सो श्रीहथुवानगरमैं लेगया ॥ उसी
दिनमैं महाराजकी मुलाकात भई ॥ प्रतिदिन महा-
राजका समागम होतारहा । बीचमैं श्रीसालिग्रामी
नारायणी गंडकीनामक महानदीपर स्वारीआदिक
सामग्रीसहित स्नान करिआये औ स्थावापुर-
वासिनी देवीका दर्शन बी किया ॥ फेर वहांसैं
महाराजकी आज्ञासैं गयाजी गये । तहां श्राद्ध
करिके गंगातीर वर्ति दिगाघाटपर महाराजके
स्थानमैं पधारे ॥ उसी दिनमैं संकेतसैं महाराजा-
धिराज श्रीकृष्णप्रतापसाहिबहादुर शर्मा बी
तहां पधारे ॥ अक्षयतृतीया तहां भई औ तीन
दिन महाराजका समागम होतारहा ॥ फेर वहांसैं
घानापुर आयके धूम्रशकटिकामैं महाराजके साथि
ही बैठिके श्रीवाराणसीमैं आये । तहां पिशाच-

मोचनपर स्थित हथुआधीशके बगीचेमें तीन दिन निवास भया ॥ गंगास्नान औ महात्माओंका दर्शन संभाषण भया ॥

फेर वहांसें महाराजाकी तरफसें मिलित भेट औ पोशाक स्वीकार करिके तदाज्ञापूर्वक श्रीप्रयाग चित्रकूट पुंडरीकपूर औ पुन्यनगरके मार्गसें श्रीमुंबईमें आयके शेठ श्रीयादवजी जयरामके स्थानमें चातुर्मास्यपर्यंत वसिके ब्रह्मसत्रकी सामग्री संपादन करिके रेलके रस्ते स्वदेशविषै आयके संवत् १९४८ के आश्विन शुद्ध १० सें आरंभिके भगवन्महोत्सव नामक ब्रह्मसत्र किया। तहां केइक अपूर्व संन्यासी साधु ब्राह्मण औ सत्समागमीजनोंका अपूर्व समाज एकत्र भया था ॥ सभा संभाषणादि अद्भुत आल्हाद भया था। सो समाप्त करिके श्रीमुंबईमें आयके भाषाटीकायुक्त श्रीबृहदारण्यक तथा छांदोग्य ये दो उपनिषद् सार्ध द्विवर्षमें छपवाये ॥

फेर श्रीप्रयागराजके कुंभपर जायके स्वामिश्री त्रिलोकरामजीकी गंगापार स्थित मंडलीमैं कल्पवास किया ॥ वहां हथुवाधीशके मनुष्य आये थे तिनके साथि राजानै पत्रसहित रौप्यशतक भेज्या था। सो स्वामीजीके समक्ष तिनोंकी आज्ञासैं गंगातीरस्थ पंडितनके अर्थ यथायोग्य विभक्त किया गया ॥

फेर वहांसैं वे मंडलीसहित श्रीकाशीपुरीमैं पधारे ॥ स्वामीजी दुर्गाघाटपर रहे। पंडितजी पिशाचमोचनपर स्थित महाराजके बगीचेमैं २५ दिन रहे। प्रतिदिन महाराजका समागम होतारहा ॥ चार बजे बाद नित्य अश्वशकटिकासैं महाराजाके सहचारियोंकरिसहित भिन्न भिन्न स्थानमैं महात्माओंके दर्शनकूं

जाते थे ॥ स्वामी श्रीमाधवाश्रमजी । स्वामी श्रीवि-
शुद्धानंदजी । स्वामी श्रीभास्करानंदजी । स्वामी
श्रीपूर्णानंदजी । महात्मा श्रीअमरदासजी ।
पंडित श्रीरामदत्तजी । महांत श्रीपवारिजी । साधु
श्रीनिक्रमदासजी आदिक अनेक उपरतिशील महात्मा-
ओंका दर्शन भाषण भया ॥ महाराजकी यज्ञशालाका
भी इष्टिसहित दर्शन भया ॥ फेर चलनैके पहिले दिन
सायंकालमैं पंडित शिवकुमारजी । राखालदासन्याय-
रत्नभट्टाचार्य । कैलासचन्द्रभट्टाचार्य आदिक उत्तम-
पंडितनकी सभा करवाई थी। तिन विद्वद्वरोंका दर्शन
संभाषण भया ॥ पंडितनके विदा हुए पीछे स्वकृत
आशीर्वचनरूप श्लोक महाराजके समक्ष अर्थसहित
उचार्‍या ॥

॥ श्लोकः ॥

श्रीमत्कृष्णप्रतापतुल्यनृपति-
लोंकेऽधुना दुर्लभः
श्रीमद्रामसमोऽस्त्यसौ शुभगुणै-
स्सद्धर्मसत्सेतुकृत् ।
स्वाज्ञानैकक्रुरावणस्य कहरो
मुक्त्येकलंकासुजित
शांतिश्रीजनकात्मजाप्तिसहितो
भूयात्स्वधामैकराट् ॥ १ ॥

सो चतुर्धा अर्थसहित सुनिके पंडितसभासहित नृपति परमप्रसन्न भये ॥ उत्थान करिके अभिवदन किया । आनंदसैं आलिंगित होयके मिले भेटे औ पोशाक समर्पिके विदा करी । प्रातःकालमैं वहांसैं प्रयाण करिके पंडितजी श्रीमुंबईमैं पधारे ॥ पीछे श्रीकच्छदेशमैं पधारे ॥ फेर संवत्

१९५१ के वर्षमें प्रभासादियात्राकी जिगमिषा करिके गृहसैं निर्गत हुए अगनबोट (धूमनौका) सैं वेरावल पधारे। तहां रावबहादुर जूनागढके दीवानजी-साहेब श्रीहरिदास बिहारीदास जालीबोटमैं विठायके वंदरपर लेगये ॥ वहां शेठ शरीफ साले-महंमदादि सद्गृहस्थोंका मिलाप भया ॥ तिनकी भावनासैं २५ रोज तक श्रीजूनागढसरकारके मकानमैं निवास भया॥ मध्यमैं प्रभास औ प्राची-नामक तीर्थकी यात्रा करि आये ॥ फेर धूम्र-शकटिकाद्वारा श्रीजूनागढ पधारे। तहां श्रीदिवान-साहेबकी आज्ञासैं शकटिकासैं छापखानेका मेनेजर महादेवभाई सामने आयके लेगया ॥ औ नायब-दिवानसाहेब श्रीपुरुषोत्तमरायके नवीन गृहमैं निवास करवाया ॥ तहां एक मासभर रहे ॥ वहां श्रीनरसिंहमेहेता, दामोदरकुंड, मुचुकुंदगुफा और शहरके सुंदर स्थानोंका प्रदर्शन भया और

रैवताचल (गिरिनारपर्वत) की यात्रा भई ॥ एकत्र भई सभाके मध्य श्रीदिवानसाहेबके गृहमैं पंडितजीका वेदांतविषयक संभाषण भया ॥ फेर वहांसैं विदा होयके वेरावल आये ॥ तहां वैवटदारसाहेब और व्यापाराधिकारी शेठ शरीफ-भाई रेलपर सामने आयके निवासस्थानमैं लेगये ॥

फेर वहांसैं धूम्रनौकाद्वारा श्रीमुंबईमैं आगमन भया । तहां महाराज श्रीजयकृष्णजी तथा साधु श्रीसंगतिदासजी और परमसुहृत् श्रीमनःसुखराम सूर्यरामजीआदिक सज्जनोंका समागम भया ॥ और स्वकीय दो पौत्रनके मौंजीबंधनके प्रसंगसैं चारि यज्ञकी चिकीर्षाके लिए सर्वसामग्री संपादन-करिके स्वदेशमैं पधारे ॥

संवत् १९५२ के वैशाख कृष्णाद्वितीया द्वादशीपर्यंत श्रीगायत्रीपुरश्चरण । श्रीमहारुद्रयज्ञ । विष्णुयज्ञ औ शतचंडी ये चारि यज्ञ किये ॥ तहां स्वामी श्रीआत्मानंदजी और केइक संत अरु सत्समागमियोंका बी आगमन भया था ॥ अनंतर संवत् १९५४ सालसैं आरंभकरिके गढसीसासैं सार्द्धैककोशपर पूर्वदिशामैं प्राचीन बिल्ववनविषै प्राचीनकालमैं आविर्भूत देशप्रतिष्ठित स्वयंभू श्रीबिल्वेश्वर नामक महादेवका मंदिर स्वल्प होनेतैं श्रावणमासमैं बहुत पूजक ब्राह्मणोंके समावेशके अयोग्य जानिके और तहां जन्माष्टमीके दिन होते मेलामैं विष्णुदर्शनका अलाभ अरु दर्शनार्थीजनोंकूं मार्गका कष्ट जानिके कच्छदेशमैं पर्यटन करिके राज्यादिकसैं प्राप्त द्रव्यसैं विस्तीर्ण सुंदर शिवालय तथा विष्णुमंदिर तथा वहांसैं गढसीसा तोडी सड़क करावते भये ॥

अंबी संवत् १९५६ के वर्षमैं आप स्वदेशमैं ही जीवन्मुक्तिके विलक्षणआनंदअर्थ अल्पायास-युक्त हुए स्थित भये हैं ॥

उक्तप्रकारके सत्कर्मोंके करनैकी इच्छा इनकूं सर्वदा रहती है ॥ ये महात्मा राग, द्वेष, मत्सर, वैर, विपमता, निंदा, असूया—आदिक दुर्गुणोंतैं रहित है। और अमानित्व, अदंभित्व, अहिंसा, क्षमा, सौशील्य, सौजन्य, अक्रोध, शांति, धैर्य, मोहशोकराहित्य, आस्तिक्य, भक्ति, वैराग्य, ज्ञान अरु उपरति आदिक अनेकसद्गुणोंकरि अलंकृत हैं ॥ इति ॥

ॐ

॥ श्रीविचारचंद्रोदय ॥

॥ अष्टमआवृत्तिकी अनुक्रमणिका ॥

आरंभ-पृष्ठांक.

॥ षोडशकला प्रथमविभागः ॥

॥ श्रीश्रुतिषड्लिंगसंग्रहकी अनुक्रमणिका ॥

पृष्टांक.

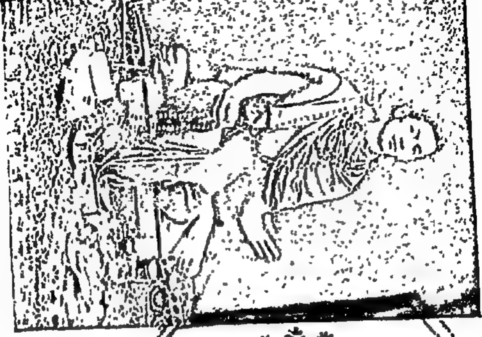
ॐ

॥ श्रीविचारचंद्रोदय ॥

अष्टमआवृत्तिकी अकारादिअनुक्रमणिका ॥

टिः—टिप्पणांकनकूं सूचन करैहैं ॥

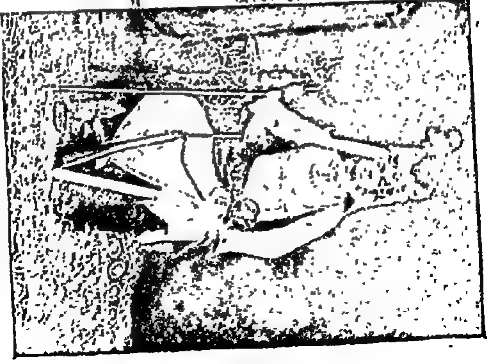
अन्य सर्व अंक पृष्ठांकनकूं सूचन करैहैं ॥



* ॐ *

र.वी मोतीलाल भास्कर

[illegible]वाला.





* ॐ *

[illegible]

[illegible]



॥ ॐगुरुपरमात्मने नमः ॥

॥ श्रीविचारचंद्रोदय ॥

॥ अथ प्रथमकलाप्रारंभः ॥ १ ॥

॥ उपोद्घातवर्णन ॥

॥ मनहर छंद ॥

पुरुपइच्छाविपय पुरुपार्थ जोई सोई ।
दुःखनाश सुखप्राप्तिरूप मोक्ष मानहु ॥
हेतु ताको ब्रह्मज्ञान सो परोक्ष अपरोक्ष ।
तामैं अपरोक्ष दृढ अदृढ दो गानहु ॥
मोक्षको साक्षात्‌हेतु दृढअपरोक्षज्ञान ।
हेतु ता विचार जीवब्रह्मजग जानहु ॥
तीनवस्तुरूप जड चेतनदो जड मिथ्या-
माया ब्रह्मचित् "सो मैं" पीतांवर ऐंयानहु१

* १ प्रश्नः–पुरुषार्थ सो क्या है ?

उत्तरः–सर्वपुरुषनकी इच्छाका जो विषय । सो पुरुषार्थ है ॥

* २ प्रश्नः–सर्वपुरुषनकूं किसकी इच्छा होवैहै ?

उत्तरः–सर्वपुरुषनकूं सर्वदुःखनकी निवृत्ति औ परमानंदकी प्राप्तिकी इच्छा होवैहै ॥

* ३ प्रश्नः–सर्वदुःखनकी निवृत्ति औ परमानंदकी प्राप्ति सो क्या है ?

उत्तरः–सर्वदुःखनकी निवृत्ति औ परमानंदकी प्राप्ति । यह **मोक्षका स्वरूप** है ॥

॥ १ ॥ प्रतिपादन करनैयोग्य अर्थकूं मनमैं राखिके तिसके अर्थ अन्यअर्थका प्रतिपादन **उपोद्घात** है ॥ जैसैं किसीकूं दूसरेके गृहसैं छांछ लेनैकी होवै । तब वह बात मनमैं राखिके तिसके अर्थ "तुम्हारी गौ दुग्ध देतीहै वा नहीं ?" इत्यादिरूप अन्यवार्ताका कथन **उपोद्घात** है ॥ **तैसैं** इहां प्रतिपादन करनैयोग्य

जो विचार । ताकूं मनमैं राखिके तिसके आरंभअर्थ अन्य मोक्षआदिकपदार्थनका कथन **उपोद्घात** है ॥

॥ २ ॥ कोईवी रागके ध्रुवपदमैं गाया जावैहै ॥

॥ ३ ॥ अन्वयः–ता (दृढअपरोक्षज्ञानका) हेतु विचार है ॥

॥ ४ ॥ ऐसैं निश्चय करो ॥

॥ ५ ॥ धर्म अर्थ काम मोक्ष । इन च्यारीका नाम **पुरुषार्थ** है ॥ तिनमैं प्रथमके तीन गौण हैं । तिनकूं छोडिके इहां अंतके मुख्यपुरुषार्थका ग्रहण है ॥

॥ ६ ॥ अज्ञानसहित जन्ममरणादिक दुःख कहियेहै ॥

॥ ७ ॥ मिथ्यापनेका निश्चयरूप बाध **निवृत्ति** है ॥

॥ ८ ॥ परमप्रेमका विषय **परमानंद** है ॥

॥ ९ ॥ इहां कंठभूषणकी न्यांई नित्यप्राप्तकी प्राप्ति मानी है ॥

॥ १० ॥ कर्त्ताभोक्तापनेआदिकअन्यथाभावकूं छोडिके स्वस्वरूपसैं स्थितिहीं **मोक्ष** है ॥ कितनेक लोक तौ स्वर्ग वैकुंठ गोलोक ब्रह्मलोक आदिककी प्राप्तिकूं मोक्ष

* ४ प्रश्नः—मोक्ष किससैं होवैहै ?

उत्तरः—मोक्ष ब्रह्मज्ञानसैं होवैहै ॥

* ५ प्रश्नः—ब्रह्मज्ञान सो क्या ?

उत्तरः—ब्रह्मज्ञान । सो ब्रह्मस्वरूपकूं यथार्थ जानना ॥

* ६ प्रश्नः—ब्रह्मज्ञान कितने प्रकारका है ?

उत्तरः—ब्रह्मज्ञान । परोक्ष औ अपरोक्ष भेदतैं दोप्रकारका है ॥

* ७ प्रश्नः—परोक्षब्रह्मज्ञान सो क्या है ?

उत्तरः—(१ परोक्षब्रह्मज्ञानका स्वरूप)

जानतेहै । सो वेदसैं विरुद्ध है ॥ ऊपर कह्या मोक्षका स्वरूप वेदअनुसारी है ॥

॥ ११ ॥ कर्म औ उपासनासैं चित्तकी शुद्धि औ एकाग्रतारूप ज्ञानके साधन होवैहैं । मोक्ष नहीं ॥

॥ १२ ॥ ब्रह्मसैं अभिन्न आत्माका ज्ञान । मोक्षका हेतु है ॥

"सच्चिदानंदरूप ब्रह्म है" ऐसा जो जानना। सो परोक्षब्रह्मज्ञान है ॥

* ८ प्रश्नः–परोक्षब्रह्मज्ञान किससैं होवैहै ?

उत्तरः–(२ परोक्षब्रह्मज्ञानका हेतु)

सद्गुरु औ सत्‌शास्त्रके वचनमैं विश्वासके रखनेसैं परोक्षब्रह्मज्ञान होवैहै ॥

* ९ प्रश्नः–परोक्षब्रह्मज्ञानसैं क्या होवैहै ?

उत्तरः–(३ परोक्षब्रह्मज्ञानका फल)

असत्त्वापादकआवरणकी निवृत्ति होवैहै ॥

* १० प्रश्नः–परोक्षब्रह्मज्ञान कब पूर्ण होवैहै ?

॥ १३ ॥ परोक्षज्ञान । "तत्त्वमसि" महावाक्यगत "तत्" पदके अर्थकूं जनावताहै । यातैं सो अपरोक्ष-अद्वैतज्ञानविषै उपयोगी है ॥

॥ १४ ॥ "ब्रह्म नहीं है" इसरीतिसैं ब्रह्मके असद्भाव-का आपादक कहिये संपादक आवरण । असत्त्वा-पादकआवरण है ॥

उत्तरः--(४ परोक्षब्रह्मज्ञानकी अवधि)
परोक्षब्रह्मज्ञान । ब्रह्मनिष्ठगुरु औ वेदांत-शास्त्रके अनुसार ब्रह्मस्वरूपके निर्धार किये पूर्ण होवैहै ॥

* ११ प्रश्नः–अपरोक्षब्रह्मज्ञान सो क्या है ?

उत्तरः–"सच्चिदानंदरूप ब्रह्म मैं हूं" ऐसा जो जानना । सो **अपरोक्षब्रह्मज्ञान** है ॥

* १२ प्रश्नः–अपरोक्षब्रह्मज्ञान किससैं होवैहै ?

उत्तरः–गुरुके मुखसैं "तत्त्वमसि आदिक-महावाक्यके श्रवणसैं अपरोक्षब्रह्मज्ञान होवैहै ॥

* १३ प्रश्नः–अपरोक्षब्रह्मज्ञान कितने प्रकारका है ?

उत्तरः–अपरोक्षब्रह्मज्ञान अदृढ औ दृढ इसभेदतैं दोप्रकारका है ॥

* १४ प्रश्नः–अदृढअपरोक्षब्रह्मज्ञान सो क्या है ?

उत्तरः–

(१ अदृढअपरोक्षब्रह्मज्ञानका स्वरूप)

[15]असंभावना औ विपरीतभावना[16]सहित जो ब्रह्मआत्माकी एकताका निश्चय होवै । सो

अदृढअपरोक्षब्रह्मज्ञान है ॥

* १५ प्रश्नः—अदृढअपरोक्षब्रह्मज्ञान किससैं होवैहै ?

उत्तरः—

(२ अदृढअपरोक्षब्रह्मज्ञानका हेतु)

॥ १५ ॥

१ "वेदांतविषै जीवब्रह्मका भेद प्रतिपादन किया है किंवा अभेद ?" यह **प्रमाणगतसंशय** है ॥ औ

२ "जीवब्रह्मका भेद सत्य है वा अभेद सत्य है ?" यह **प्रमेयगतसंशय** है ॥

यह दोनूं प्रकारका संशय **असंभावना** कहिये है ॥

॥१६॥ "जीवब्रह्मका भेद सत्य है औ देहादिप्रपंच सत्य है" ऐसा जो विपरीतनिश्चय । सो **विपरीतभावना** है ॥

१ कछुक मलविक्षेपदोपके होते श्रुतिनानात्वका ज्ञान। औ

२ ब्रह्मकी अद्वैतताके असंभवका ज्ञान औ

३ भेदवादी अरु पामरपुरुषनके संगके संस्कार। इनकरि सहित पुरुपकूं गुरुमुखद्वारा महावाक्यके श्रवणसैं अदृढअपरोक्षब्रह्मज्ञान होवैहै ॥

* १६ प्रश्नः—अदृढअपरोक्षब्रह्मज्ञानसैं क्या होवैहै ?

उत्तरः—

(३ अदृढअपरोक्षब्रह्मज्ञानका फल)

अदृढअपरोक्षब्रह्मज्ञानसैं

१ उत्तमलोककी प्राप्ति होवैहै। औ

२ पवित्रश्रीमान्‌कुलविषै जन्म होवैहै। अथवा निष्कामताके हुये ज्ञानीपुरुषके कुलविषै जन्म होवैहै ॥

* १७ प्रश्नः—अदृढअपरोक्षब्रह्मज्ञान कब पूर्ण होवैहै ?

उत्तरः—

(४ अदृढअपरोक्षब्रह्मज्ञानकी अवधि)

सत्–चित्–आनंद आदिक ब्रह्मके विशेषणनके अपरोक्षभान हुये बी संशय औ विपरीत भावनाका सद्भाव होवै । तब अदृढअपरोक्षब्रह्मज्ञान पूर्ण होवैहै ॥

* १८ प्रश्नः–दृढअपरोक्षब्रह्मज्ञान सो क्या है ?

उत्तरः—

(१ दृढअपरोक्षब्रह्मज्ञानका स्वरूप)

असंभावना औ विपरीतभावनासैं रहित जो ब्रह्मआत्माकी एकताका निश्चय होवै । सो **दृढअपरोक्षब्रह्मज्ञान** है ॥

* १९ प्रश्नः–दृढअपरोक्षब्रह्मज्ञान किससैं होवैहै ?

॥ १७ ॥ दोकोटिवाला ज्ञान **संशय** कहिये है ॥
॥ १८ ॥ विपरीतनिश्चयकूं **विपरीतभावना** कहैहै ॥

उत्तरः—

(२ दृढअपरोक्षब्रह्मज्ञानका हेतु)

गुरुमुखसैं महावाक्यके[19] अर्थके श्रवण मनन औ निदिध्यासनरूप विचारके कियेसैं दृढअपरोक्षब्रह्मज्ञान होवै है ॥

* २० प्रश्नः—दृढअपरोक्षब्रह्मज्ञानसैं क्या होवै है ?

उत्तरः—

(३ दृढअपरोक्षब्रह्मज्ञानका फल)

अभानापादकआवरण[20] औ विक्षेपरूप[21] कार्य-

॥ १९ ॥ जीवब्रह्मकी एकताके बोधक वाक्य । **महावाक्य** कहिये है ॥

॥ २० ॥ "ब्रह्म भासता नहीं" इसरीतिसैं अभान जो ब्रह्मकी अप्रतीति । ताका आपादक कहिये संपादन करनैवाला आवरण । **अभानापादकआवरण** है ॥

॥ २१ ॥ स्थूलसूक्ष्मशरीरसहित चिदाभास औ ताके धर्म कर्त्तापना भोक्तापना जन्ममरणआदिका **विक्षेप** है ।

सहित् अविद्याकी कहिये अज्ञानकी निवृत्ति होयके ब्रह्मकी प्राप्तिरूप **मोक्ष** होवैहै ॥

* २१ प्रश्नः–दृढअपरोक्षब्रह्मज्ञान कब पूर्ण होवैहै ?

उत्तरः—

(४ दृढअपरोक्षब्रह्मज्ञानकी अवधि)

देहविषै अहंपनैके ज्ञानकी न्यांई । इस ज्ञानका बाधकरिके ब्रह्मसैं अभिन्न आत्माविषै जब ज्ञान होवै। तब दृढअपरोक्षब्रह्मज्ञान पूर्ण होवै है ॥

* २२ प्रश्नः—विचार सो क्या है ?

उत्तरः—(१ विचारका स्वरूप)

आत्मा औ अनात्माकूं भिन्नकरिके जानना । सो **विचार** है ।

* प्रश्नः—यह विचार किससैं होवै है ?

उत्तरः—(२ विचारका हेतु)

यह विचार । ईश्वर । वेद । गुरु औ अपना अंतःकरण । इन च्यारीकी कृपासैं होवै है ॥

* २४ प्रश्नः—इस विचारसैं क्या होवै है ?

उत्तरः—(३ विचारका फल)

इस विचारसैं दृढअपरोक्षब्रह्मज्ञान होवै है ॥

* २५ प्रश्नः—यह विचार कब पूर्ण होवै है ?

उत्तरः—(४ विचारकी अवधि)

॥ २२ ॥

१ सद्गुरुआदिकज्ञानसामग्रीकी प्राप्ति ईश्वरकृपा है ॥

२ शास्त्रअर्थके धारणकी शक्ति वेदकृपा है ।

३ शास्त्र औ स्वअनुभवके अनुसार यथार्थ उपदेशका करना गुरुकृपा है ॥ औ

४ शास्त्रगुरुके वचनअनुसार साधनोंका संपादन करना अपने अंतःकरणकी कृपा है ।

यह विचार दृढअपरोक्षब्रह्मज्ञानके भये पूर्ण होवैहै ॥

* २६ प्रश्नः–विचार किसका करना ?

उत्तरः–(५ विचारका विषय)

१ मैं कौन हूं ? २ ब्रह्म कौन है ? औ ३ प्रपंच क्या है ? इन तीनवस्तुनका विचार करना ॥

* प्रश्नः–इन तीनवस्तुका साधारणरूप क्या है ?

उत्तरः–

१–२ "मैं औ ब्रह्म" सो चैतन्य हैं । अरु
३ प्रपंच[23] सो जड है ॥

* २८ प्रश्नः–चैतन्य सो क्या है ?

उत्तरः–

(१) जो ज्ञानरूप है । औ

॥ २३ ॥ समष्टिव्यष्टिस्थूलसूक्ष्मकारणदेह औ तिनकी अवस्था अरु धर्म । **प्रपंच** कहियेहै ॥

(२) सर्वघटादिकप्रपंचकूं जानताहै । औ

(३) जिसकूं अन्य मनइंद्रियआदिक कोई जानि सकते नहीं ।

सो चैतन्य है ॥

* २९ प्रश्नः-जड सो क्या है ?

उत्तरः-

(१) जो आपकूं न जानै । औ

(२) दूसरेकूं वी न जानै

ऐसे जो अज्ञान[२४] औ तिनके कार्य भूत[२५] भौतिकपदार्थ[२६] । सो जड है

॥ २४ ॥ "नहीं जानताहूं" ऐसे व्यवहारका हेतु आवरणविक्षेपशक्तिवाला अनादिभावरूप अज्ञान पदार्थ है ॥

॥२५॥ आकाशादिकपांचभूत ॥

॥२६॥ भूतनके कार्य पिंडब्रह्मांडादिक सो भौतिक हैं ॥

* ३० प्रश्नः–ऊपर कहे तीनवस्तुके विचारका किसरीतिसैं उपयोग है ?

उत्तरः—(६ विचारका उपयोग)

१ "तत्त्वमसि" महावाक्यमैं स्थित "त्वं" पद औ "तत्" पदका वाच्यअर्थ जो जीव[27] औ ईश्वर[28] । तिनकी उपाधिरूप जो प्रपंच[29] । तिसकूं जेवरीमैं सर्पकी न्यांई औ ठौंठमैं पुरुषकी न्यांई औ मरुभूमिमैं मृगजलकी न्यांई । विचारकरि मिथ्या जानिके त्याग करना । यह **प्रपंचके विचारका उपयोग** है ॥

॥ २७ ॥ चिदाभासयुक्त अंतःकरणसहित कूटस्थचैतन्य । सो **जीव** है ॥

॥ २८ ॥ चिदाभासयुक्त मायासहित ब्रह्मचैतन्य । सो **ईश्वर** है ॥

॥ २९ ॥ समष्टि औ व्यष्टिरूप तीनशरीर । पंचकोश । तीन अवस्थाआदिकनामरूप । **प्रपंच** कहिये है ॥

२ "मैं जो ("त्वं" पदका लक्ष्यार्थ) आत्मा । सो ("तत्" पदका लक्ष्यार्थ) ब्रह्म हूं ।" इस-रीतिसैं ब्रह्मआत्माकी एकताकूं विचारकरि सत्य जानिके अवशेष रखना । यह " **मैं कौन हूं"** **औ "ब्रह्म कौन है" इस विचारका उपयोग (फल) है ॥**

* **२१ प्रश्नः–इस विचारका अधिकारी कौन है औ सो क्या करै ?**

उत्तरः—(७ विचारका अधिकारी)

१ इस विचारका अधिकारी ³⁰उत्तमजिज्ञासु है ॥

२ सो अधिकारी सद्गुरुकी कृपासैं उपोद्घात-

॥ ३० ॥ विवेक वैराग्य षट्संपत्ति औ मुमुक्षुता । इन च्यारीसाधनकरि सहित होवै औ ब्रह्मवित्गुरु अरु वेदांतशास्त्रके वचनविषै परमविश्वासी होवै । कुतर्क कदाचित् करै नहीं । ऐसा जो स्वरूपके जाननैकी तीव्रइच्छावाला अधिकारी सो **उत्तमजिज्ञासु** है ॥

आदिकको प्रक्रियाकूं[३१] विचारिके " मैंहीं आप ब्रह्म हूं " इसरीतिसैं ब्रह्मआत्माकूं **अपरोक्ष जानै** ॥

* **३२ प्रश्नः**—तिन प्रक्रियाके नाम कौन हैं ?

उत्तरः—

(१) उपोद्घात ॥
(२) प्रपंचका आरोप औ अपवाद ॥
(३) देह तीनका मैं द्रष्टा हूं ॥
(४) मैं पंचकोशातीत हूं ॥
(५) तीनअवस्थाका मैं साक्षी हूं ॥
(६) प्रपंचका मिथ्यापना ॥
(७) आत्माके विशेषण ॥
(८) सच्चिदानंदविशेषवर्णन ॥
(९) अवाच्यसिद्धांतवर्णन ॥

॥ ३१ ॥ अद्वैतके बोध करनैका कोइ बी प्रकार सो **प्रक्रिया** है ॥

(१०) सामान्यचैतन्य औ विशेषचैतन्य ॥

(११) " त्वं " पद औ " तत् " पदका वाच्यअर्थ औ लक्ष्यअर्थ अरु दोनूंके लक्ष्यअर्थकी एकता ॥

(१२) ज्ञानीके कर्मकी निवृत्ति ॥

(१३) सप्तज्ञानभूमिका ॥

(१४) जीवन्मुक्ति औ विदेहमुक्ति ॥

(१५) वेदांतप्रमेय ॥

(१६) श्रीश्रुतिषड्लिंगसंग्रहः ॥

ये तिन प्रक्रियाके नाम हैं ॥

इति श्रीविचारचंद्रोदये उपोद्घातवर्णन-नामिका प्रथमकला समाप्ता ॥ १ ॥

॥ ३२ ॥

१ **प्रपंचका विचार** प्रथम द्वितीय षष्ठ द्वादश औ त्रयोदशवीं प्रक्रियाविषै किया है । औ

२ " **प्रपंचसहित मैं कौन हूं ?** " **याका विचार** तृतीय चतुर्थ औ पंचम प्रक्रियाविषै किया है। औ

३ **परमात्मा कौन है ? याका विचार** दशम प्रक्रियाविषै किया है। औ

४ **ब्रह्म-आत्मा दोनूंके स्वरूपका विचार** सप्तम अष्टम नवम एकादश औ चतुर्दशवीं प्रक्रियाविषै किया है। औ

५ **प्रपंच औ ब्रह्मआत्माके स्वरूपका विचार** पंचदशवीं प्रक्रियाविषै किया है ॥

सर्वप्रक्रियाका " तत् " " त्वं " पदार्थका शोधन औ तिनकी एकताका निश्चय प्रयोजन है ॥

॥ अथ द्वितीयकलाप्रारंभः ॥ २ ॥
॥ प्रपंचारोपापवाद ॥



॥ मनहर छंद ॥

प्रपंचारोपापवाद करि निष्प्रपंच वस्तु
ब्रह्मजानिके अवस्तु—मायादिक भानिये. ॥
ब्रह्म माया संबंध रु जीवईश भेद तिन ।
षट् ये अनादि तामैं ब्रह्मानंत मानिये ॥
वस्तुमैं अवस्तु कर कथन आरोप बाधि-[33]
अवस्तु वस्तुकथन अपवाद गानिये ॥
गुरुके प्रसाद यह युक्ति जानि पीतांबर ।
तज[34] तमका रज आरज निज जानिये ॥ २ ॥

॥ ३३ ॥ अन्वयः—अवस्तु बाधि वस्तुकथन अपवाद जानिये ॥

॥ ३४ ॥ अन्वयः—हे आरज कहिये विवेकी ! तमका रज तज । निज (स्वरूप) जानिये ॥

* ३३ प्रश्नः–शुद्धब्रह्मविषै प्रपंचका आरोप[35] कैसे हुवा है ?

उत्तरः–अनादिशुद्धब्रह्मकेविषै अनादि-[36] कल्पितप्रकृति[37] है ॥ तिस प्रकृतिका ब्रह्मके साथि अनादिकल्पिततादात्म्यसंबंध है कहिये कल्पित-भेदसहित वास्तवअभेदरूप संबंध है ॥

सो प्रकृति १ माया औ २ अविद्या औ ३ तमः-

॥ ३५ ॥ ब्रह्मरूप वस्तुविषै अज्ञानतत्कार्यरूप अवस्तुका कथन **आरोप** है । याहीकूं **अध्यारोप** बी कहै हैं ॥

॥ ३६ ॥ उत्पत्तिरहित वस्तु । **स्वरूपसैं** अनादि है ॥ ऐसे शुद्धब्रह्म । प्रकृति । तिनका संबंध । ईश्वर । जीव औ तिनका भेद । ये षट् हैं । अरु प्रवाहरूपसैं प्रपंच बी अनादि है ॥

॥ ३७ ॥ जो होवै नहीं औ स्वप्नपदार्थकी न्यांई भ्रांतिसैं भासै सो **कल्पित** है ॥

प्रधानप्रकृतिरूपकरि विभागकूं पावती है ॥ तिनमैं
१ जो शुद्धसत्वगुणयुक्त । सो **माया** है । औ
२ जो मलिनसत्वगुणयुक्त सो **अविद्या** है । औ
३ जो तमोगुणकी मुख्यताकरि युक्त है । सो **तमःप्रधानप्रकृति** है ॥

१ मायाविषै जो ब्रह्मका प्रतिबिंब है । सो अधिष्ठान (ब्रह्म) औ मायासहित जगत्कर्त्ता **सर्वज्ञईश्वर** कहियेहै ॥ औ

२ अविद्याविषै जो ब्रह्मका प्रतिबिंब है । सो अधिष्ठान (कूटस्थ) औ अविद्यासहित भोक्ता **अल्पज्ञजीव** कहियेहै ॥

१ सो ईश्वर औ जीव वी अनादिकल्पित हैं ॥ तिनमैं **ईश्वरकी उपाधि** माया एक है औ आपेक्षिकव्यापक है । तिसतैं ईश्वर वी एक है औ व्यापक है ॥ औ

॥३८॥ क्षत्रिय औ शूद्ररूप मंत्रीनसैं ब्राह्मणरूप राजाकी न्यांई जो रजतमसैं दबै नहीं । किंतु रजतमकूं आप दबावै । ऐसा सत्वगुण । **शुद्धसत्वगुण** है ॥

॥३९॥ जो रजतमकूं दबावै नहीं । किंतु शूद्ररूप दोनूंराजकुमारनसैं ब्राह्मणरूप एकमंत्रीकी न्यांई रजतमसैं आप दबै। ऐसा सत्वगुण । **मलिनसत्व गुण** है ॥

॥४०॥ इहां **मायाशब्दकरि** माया औ तमःप्रधानप्रकृति । इन दोनूं ईश्वरकी उपाधिनका ग्रहण है तिनमैं

१ मायाउपाधिकूं लेके ईश्वर । कुलालकी न्यांई **जगत्‌का निमित्तकारण** है । औ

२ तमःप्रधानप्रकृतिकूं लेके ईश्वर । मृत्तिकाकी न्यांई **जगत्‌का उपादानकारण** है ॥

॥४१॥ जो किसीकी अपेक्षासैं व्यापक होवै औ किसीकी अपेक्षासैं परिच्छिन्न होवै । सो **आपेक्षिकव्यापक** कहियेहै ॥ जैसैं गृह जो है । सो घटादिककी अपेक्षासैं **व्यापक** है औ ग्रामकी अपेक्षासैं

२ जीवकी उपाधि अविद्या नाना हैं औ परिच्छिन्न हैं। तिसतैं जीव बी नाना हैं औ परिच्छिन्न हैं ॥

तिन जीवईश्वरका अनादिकल्पितभेद है ॥

१ सृष्टिसैं पूर्व सो जीवनकी उपाधि अविद्या। जीवनके कर्मसहितहीं मायाविषै लीन होयके रहतीहै ॥ सो माया सुपुप्तिविषै अविद्याकी न्यांई ब्रह्मसैं भिन्न प्रतीत नाम सिद्ध होवै नहीं। यातैं सृष्टिसैं पहिले सजातीय विजातीय स्वगत भेदरहित एकहीं अद्वितीय सच्चिदानन्द-रूप ब्रह्म था ॥

परिच्छिन्न हैं। यातैं आपेक्षिकव्यापक है ॥ तैसैं माया बी पृथ्वीआदिककी अपेक्षासैं व्यापक कहीये अधिकदेशवर्ती है सो ब्रह्मकी अपेक्षासे परिच्छिन्न है। यातैं आपेक्षिकव्यापक है ॥

२ तिस ब्रह्मकूं सृष्टिके आरंभविषै जीवनके परिपक्व भये कर्मरूप निमित्तसैं "मैं एक हूं सो बहुरूप होऊं" ऐसी इच्छा भयी ॥

३ तिस इच्छासैं ब्रह्मकी उपाधि मायाविषै क्षोभ होयके क्रमतैं आकाश वायु तेज जल औ पृथ्वी । ये पंचमहाभूत उत्पन्न भये ॥

४ तिनका पंचीकरण नहीं भयाथा । तब अपंची कृत थे ।. तिनतैं समष्टिव्यष्टिरूप सूक्ष्मसृष्टि होयके । पीछे ईश्वरकी इच्छासैं जब तिनका पंचीकरण भया । तब सो भूत पंचीकृत भये । तिनतैं समष्टिव्यष्टिरूप स्थूलसृष्टि भयी ॥

५ तिनमैं समष्टिस्थूलसूक्ष्मकारणप्रपंचका अभिमानी जीवकी दृष्टिसैं ईश्वर है औ व्यष्टिस्थूलसूक्ष्मकारणप्रपंचका अभिमानी जीव है ।

तिनमैं ईश्वर सर्वज्ञ होनैतैं नित्यमुक्त है औ
जीव अल्पज्ञ होनैतैं बद्ध है ॥

इसरीतिसैं शुद्धब्रह्मविषै प्रपंचका आरोप
हुवाहै ॥

* ३४ प्रश्नः—यह आरोप सत्य है वा मिथ्या है ?

उत्तरः—यह आरोप जेवरीविषै सर्पकी न्यांई
औ साक्षीविषै स्वप्नकी न्यांई औ दर्पणविषै
नगरके प्रतिबिंबकी न्यांई मिथ्या है ॥

* ३५ प्रश्नः-यह आरोप किससैं होवैहै ?

उत्तरः—यह आरोप अज्ञानसैं होवैहै ॥

* ३६ प्रश्नः-यह आरोप कबका औ काहेकूं हुवा
होवैगा । यह विचार कैसैं होवै ?

उत्तरः-जैसैं कोई पुरुषके वस्त्र ऊपर तैलका
दाग लग्याहोवै । तिसकूं जानिके ताकूं मिटावनै
का उपाय कियाचाहिये औ " यह दाग कबका

काहेकूं लग्याहोवैगा ?" इस विचारका कछु प्रयोजन नहीं है ॥ तैसैं "यह प्रपंचका आरोप कबका औ काहेकूं हुवा होवैगा ?" इस विचारका बी कछु प्रयोजन नहीं है। परंतु इसकी निवृत्तिका उपाय करना योग्य है ॥

*** ३७ प्रश्नः—इस सर्वआरोपकी निवृत्ति किसरीतिसैं होवैहै ?**

उत्तरः—

१ ब्रह्मज्ञानसैं माया औ अविद्याकी निवृत्ति होवैहै।

२ तिसतैं कार्यसहित प्रकृतिकी निवृत्ति होवैहै।

३ तिसतैं प्रकृति औ ब्रह्मके संबंधकी निवृत्ति होवैहै।

४ तिसतैं जीवभाव औ ईश्वरभावकी निवृत्ति होवैहै।

५ तिसतें जीवईश्वरके भेदकी निवृत्ति होवैहै ॥

६ तिसतें बंधकी निवृत्ति होयके मोक्ष सिद्ध होवैहै ॥

इसरीतिसैं एककालविषैहीं सर्वआरोपकी निवृत्ति-रूप [42]अपवाद होवैहै ॥

* ३८ प्रश्नः—यह ब्रह्मज्ञान किससैं होवैहै ?

उत्तरः—यह ब्रह्मज्ञान आगे कहियेगा जो विचार । तिससैं होवैहैं ॥

इति श्रीविचारचंद्रोदये प्रपंचारोपापवाद-वर्णननामिका द्वितीयकला समाप्ता ॥ २ ॥

॥ ४२ ॥ सर्पका औ ताके ज्ञानका बाधकरिके रज्जुरूप अधिष्ठानके अवशेषकी न्यांई । प्रपंच औ ताके ज्ञानका बाधकरिके अधिष्ठानरूप शुद्धब्रह्मका जो अवशेष । सो अपवाद है ॥

॥ अथ तृतीयकलाप्रारंभः ॥ ३ ॥

॥ देह तीनका मैं द्रष्टा हूं ॥



॥ मनहर छंद ॥

द्रष्टा तींनदेहको मैं स्थूल सूक्ष्म कारण ये
तीनदेह दृश्य अरु अनातमा मानियो ॥
पंचीकृतपंचभूतके पचीसतत्त्वनको
स्थूलदेह एह भोगआयतन गानियो ॥
अपंचीकृतभूतके सप्तदशतत्त्वनको
सूक्ष्मदेह होई भोगसाधन प्रमानियो ॥
अज्ञान कारणदेह घटवत दृश्य एह ।
पीतांबर द्रष्टा आप जानि दृश्य भानियो ३

* ३९ प्रश्नः—पहिली प्रक्रिया । "देह तीनका मैं द्रष्टा हूं" ॥ सो देह तीन कौनसे हैं ?

उत्तरः—स्थूलदेह सूक्ष्मदेह औ कारणदेह। ये देह तीन हैं

॥ १ ॥ स्थूलदेहका मैं द्रष्टा हूं ॥

* ४० प्रश्नः—स्थूलदेह सो क्या है ?

उत्तरः—पंचीकृतपंचमहाभूतके पचीसतत्त्वनका स्थूलदेह है ॥

* ४१ प्रश्नः—पंचमहाभूत कौनसे हैं ?

उत्तरः—आकाश, वायु, तेज, जल औ पृथ्वी। ये पंचमहाभूत हैं ॥

* ४२ प्रश्नः—पंचमहाभूतके पचीसतत्त्व नाम पदार्थ कौनसे हैं ?

उत्तरः—

१–५ आकाशके पांचतत्त्वः—काम[४३], क्रोध, शोक मोह[४४] औ भय ॥

॥ ४३ ॥ कोई वी भोगकी इच्छा। काम कहिये है ॥
॥ ४४ ॥ अहंताममतारूप बुद्धि। सो मोह है ॥

६–१० **वायुके पांच तत्त्वः**—चलन, वलन, धावन, प्रसारण औ आकुंचन ॥

११—१५ **तेजके पांचतत्त्वः**—क्षुधा, तृषा, आलस्य, निद्रा औ कांति ॥

१६—२० **जलके पांचतत्त्वः**—शुक्र कहिये वीर्य । शोणित नाम रुधिर । लाल । मूत्र औ स्वेद कहिये पसीना ॥

२१—२५ **पृथ्वीके पांचतत्त्वः**—अस्थि नाम हाड । मांस, नाडी, त्वचा औ रोम ॥

ये **पंचमहाभूतके पचीसतत्त्वनके** नाम हैं ॥

* ४३ **प्रश्नः–पंचीकृतपंचमहाभूत कौनकूं कहिये ?**

उत्तरः–जिन भूतनका पंचीकरण भयाहै तिन भूतनकूं **पंचीकृतपंचमहाभूत** कहियेहैं ॥

॥४५॥ प्रथम अपंचीकृतपंचमहाभूत थे । तिनका ईश्वरकी इच्छासैं स्थूलसृष्टिद्वारा जीवनके भोगअर्थ परस्परमिलापरूप पंचीकरण भयाहै ॥

* ४४ प्रश्नः—पंचीकरण सो क्या है ?

उत्तरः—पंचभूतनमैंसैं एकएकके दोदोभाग किये । सो भये दश ॥ तिनमैंसैं पहिलेपांचभाग रहनेदिये औ दूसरेपांचभागनमैंसैं एकएकभागके च्यारीच्यारीभाग किये ॥ सो च्यारीच्यारी-भाग । आकाशादिकभूतनका आपआपका जो अर्धअर्धमुख्यभाग रहनेदिया है । तिसविषै न मिलायके आपआपसैं भिन्न च्यारीभूतनके अर्धअर्धभागनविषै मिले । सो **पंचीकरण** कहियेहै ॥

* ४५ प्रश्नः—पांचभूतनका परस्परमिलाप किसरीतिसैं है ?

उत्तरः—दृष्टांतः—जैसैं कोईक पांचमित्र । आंबकेलाआदिक एकएक फलकूं इकठे खानैलागे । तब सर्व आपआपके फलके दोदोभाग करीके अर्धअर्धभाग आपके वास्ते रखे औ अवशेष

अर्धअर्धभागमैंसैं च्यारीच्यारीभाग करीके च्यारी-मित्रनकूं विभाग करीदेवैं। तब पांचफलनका पर-स्परमिलाप होवैहै। तैसैं

सिद्धांतः–

१ आकाशके दोभाग किये। तिनमैंसैं

(१) एकभाग रहनैदिया। औ

(२) दूसरेभागके च्यारीभाग किये।
तिनमैंसैं आकाशविषै न मिले। औ

[१] एक वायुविषै मिले।

[२] एक तेजविषै मिले।

[३] एक जलविषै मिले। अरु

[४] एक पृथ्वीविषै मिले॥

२ ऐसैहीं वायुके दोभाग किये। तिनमैंसैं

(१) एकभाग रहनैदिया। औ

(२) दूसरेभागके च्यारीभाग किये ।
तिनमैंसैं वायुविषै न मिले । औ
[१] एक आकाशविषै मिले ।
[२] एक तेजविषै मिले ।
[३] एक जलविषै मिले । अरु
[४] एक पृथ्वीविषै मिले ॥

३ ऐसैहीं तेजके दोभाग किये । तिनमैंसैं
(१) एकभाग रहनैदिया । औ
(२) दूसरेभागके च्यारीभाग किये ।
तिनमैंसैं तेजविषै न मिले । औ
[१] एक आकाशविषै मिले ।
[२] एक वायुविषै मिले ।
[३] एक जलविषै मिले । अरु
[४] एक पृथ्वीविषै मिले ॥

४ ऐसैहीं जलके दोभाग किये । तिनमैंसैं
  (१) एकभाग रहनेदिया । औ
  (२) दूसरेभागके च्यारीभाग किये ।
    तिनमैंसैं जलविषै न मिले । औ
    [१] एक आकाशविषै मिले ।
    [२] एक वायुविषै मिले ।
    [३] एक तेजविषै मिले । अरु
    [४] एक पृथ्वीविषै मिले ॥

५ ऐसैहीं पृथ्वीके दोभाग किये । तिनमैंसैं
  (१) एकभाग रहनेदिया । औ
  (२) दूसरेभागके च्यारीभाग किये ।
    तिनमैंसैं पृथ्वीविषै न मिले । औ
    [१] एक आकाशविषै मिले ।
    [२] एक वायुविषै मिले ।
    [३] एक तेजविषै मिले । अरु
    [४] एक जलविषै मिले ॥

इसरीतिसैं पचीसतत्त्व होयके पंचमहाभूतनका परस्परमिलाप है ॥

* ४६ प्रश्नः-पंचमहाभूतनके पचीसतत्त्व कैसैं भये ?

उत्तरः—सर्वभूतनका आपका एकएक मुख्य-भाग है औ अमुख्यच्यारीभाग अन्यभूतनके मिलेहैं॥ तिसतैं एकएकभूतके पांचपांचतत्त्व भये। सो सर्वमिलिके पचीसतत्त्व भये ॥

* ४७ प्रश्नः-स्थूलदेहविषे ये पचीसतत्त्व कैसैं रहतेहैं ?

उत्तरः—

१-५ आकाशके पांचतत्त्वः-(१) शोक (२) काम (३) क्रोध (४) मोह औ (५) भय। तिनमैं

॥४६॥ कोई ग्रंथविषै शिर कंठ हृदय उदर कटि-देशगत आकाश। ये आकाशके पांचतत्त्व हैं। तिनमैं

१ शिरोदेशगतआकाश आकाशका मुख्यभाग है। अनाहतशब्दका आश्रय होनैतें ॥

२ कंठदेशगतआकाश वायुका भाग है। श्वासप्रश्वासका आश्रय होनैतें ॥

३ हृदयदेशगतआकाश तेजका भाग है। पित्तका आश्रय होनैतें ॥

४ उदरदेशगतआकाश जलका भाग है। पान किये जलका आश्रय होनैतें ॥

५ कटिदेशगतआकाश पृथ्वीका भाग है। गंधका आश्रय होनैतें ॥

इसरीतिसैं कामक्रोधादिक स्थूलदेहके तत्त्व नहीं। किंतु लिंगदेहके धर्म हैं औ अन्यग्रंथनकी रीतिसैं तौ कामादिक लिंगदेहके मुख्यधर्म हैं औ स्थूलदेहविषै घटमैं जलकी शीतलताके आवेशकी न्यांई इनका आवेश होवैहै। यातैं स्थूलदेहके बी गौणधर्म कहियेहैं ॥

(१) शोकः—आकाशका मुख्यभाग है । काहेतैं शोक उत्पन्न होवै तब शरीर शून्य जैसा होवैहै औ आकाश बी शून्य जैसा है । यातैं यह आकाशका मुख्यभाग है ॥

(२) कामः—आकाशविषे वायुका भाग

॥४७॥ **यद्यपि** वायुआदिकभूतनके भागनविषै बी आकाशके अन्यच्यारीभागनमैंसैं एकएकभाग मिल्याहै । सो आकाशका मुख्यभाग नहीं कहियेहै । **तथापि** शोक औ आकाशकी अतिशयतुल्यता है । यातैं शोक **आकाशका मुख्यभाग** है ।

कहिंक लोभ बी आकाशकी न्यांई पदार्थकी प्राप्ति-करि अपूर्ण होनैतैं **आकाशका मुख्यभाग** कहाहै । इसरीतिसैं अन्यभूतनविषै बी जानि लेना ॥

॥४८॥ पिताके तुल्य पुत्रकी न्यांई । काम । वायुके तुल्य है । यातैं **वायुका भाग** है । ऐसैं अन्यतत्त्वनविषै बी जानि लेना ॥

मिल्याहै । काहेतें कामनारूप वृत्ति चंचल है औ वायु बी चंचल है। यातें यह वायुका भाग है ॥

(३) क्रोधः—आकाशविषै तेजका भाग मिल्याहै। काहेतें क्रोध आवताहै तब शरीर तपायमान होताहै औ तेज बी तपायमान है। यातें यह तेजका भाग है ॥

(४) मोहः—आकाशविषै जलका भाग मिल्याहै । काहेतें मोह पुत्रादिकविषै प्रसरता है औ जलका बिंदु बी प्रसरता है। यातें यह जलका भाग है ॥

(५) भयः—आकाशविषै पृथ्वीका भाग मिल्याहै । काहेतें भय होवै तब शरीर जड कहिये अक्रिय होयके रहताहै औ पृथ्वी बी जडतास्वभाववाली है । यातें यह पृथ्वीका भाग है ॥

६–१० वायुके पांचतत्त्वः–(६) प्रसारण (७) धावन (८) वलन (९) चलन औ (१०) आकुंचन । तिनमैंसैं

(६) **प्रसारणः**–वायुविषे **आकाशका भाग** मिल्याहै । काहेतैं प्रसारण नाम प्रसरनैका है औ आकाश बी प्रसन्या हुवाहै । **यातैं** यह आकाशका भाग है ॥

(७) **धावनः–वायुका मुख्यभाग है ।** काहेतैं धावन नाम दौडनैका है औ वायु बी दौडताहै । **यातैं** यह वायुका मुख्य-भाग है ॥

(८) **वलनः**–वायुविषे **तेजका** भाग मिल्या-है । काहेतैं वलन नाम अंगके वालनैका है । औ तेजका प्रकाश बी वलताहै । **यातैं** यह तेजका भाग है ॥

(९) चलनः—वायुविषै जलका भाग मिल्याहै । काहेतें चलन नाम चलनेका है औ जल बी चलताहै । यातें यह जलका भाग है ॥

(१०) आकुंचनः—वायुविषै पृथ्वीका भाग मिल्याहै । काहेतें आकुंचन नाम संकोच करनेका है औ पृथ्वी बी संकोचकूं पायी हुयी है । यातें यह पृथ्वीका भाग है ॥

११-१५ तेजके पांचतत्त्वः-(११) निद्रा (१२) तृषा (१३) क्षुधा (१४) कांति औ (१५) आलस्य । तिनमेंसें ।

(११) निद्राः—तेजविषै आकाशका भाग मिल्याहै । काहेतें निद्रा आवे तब शरीर शून्य होवैहै औ आकाश बी शून्यतावाला है । यातें यह आकाशका भाग है ॥

(१२) **तृषाः**—तेजविषै **वायुका भाग** मिल्या- है । काहेतैं तृषा कंठकूं शोषण करैहै औ वायु बी गीलेवस्त्रादिककूं सुकावैहै । **यातैं** यह वायुका भाग है ॥

(१३) **क्षुधाः**—**तेजका मुख्यभाग** है । काहेतैं क्षुधा लगे तब जो खावैं सो भस्म होवैहै औ अग्निविषै बी जो डारैं सो भस्म होवैहै । **यातैं** यह तेजका मुख्यभाग है ॥

(१४) **कांतिः**—तेजविषै **जलका भाग** मिल्या- है । काहेतैं कांति धूपसैं घटैहै औ जल बी धूपसैं घटैहै । **यातैं** यह जलका भाग है ॥

(१५) **आलस्यः**—तेजविषै **पृथ्वीका भाग** मिल्याहै । काहेतैं आलस्य आवै तब शरीर जड होय जावैहै औ पृथ्वी बी जडस्वभाव- वाली है । **यातैं** यह पृथ्वीका भाग है ॥

१६–२० जलके पांचतत्त्वः–(१६) लाळ (१७) स्वेद (१८) मूत्र (१९) शुक्र औ (२०) शोणित। तिनमैंसैं

(१६) लाळः–जलविषै आकाशका भाग मिल्याहै। काहेतैं लाळ ऊंचा नीचा होवैहै औ आकाश बी ऊंचा नीचा है। यातैं यह आकाशका भाग है॥

(१७) स्वेदः–जलविषै वायुका भाग मिल्याहै। काहेतैं पसीना श्रम करनैसैं होवैहै औ वायु बी पंखाआदिकसैं श्रम करनैसैं होवैहै। यातैं यह वायुका भाग है॥

(१८) मूत्रः–जलविषै तेजका भाग मिल्याहै। काहेतैं घर्म है औ तेज बी घर्म है। यातैं यह तेजका भाग है॥

(१९) शुक्रः–जलका मुख्यभाग है। काहेतैं

शुक्र श्वेतवर्ण है औ गर्भका हेतु है अरु जल बी श्वेतवर्ण है औ वृक्षका हेतु है। यातैं यह जलका मुख्यभाग है।

(२०) शोणितः—जलविषै पृथ्वीका भाग मिल्याहै। काहेतैं शोणित रक्तवर्ण है औ पृथ्वी बी कहिंक रक्त है। यातैं यह पृथ्वीका भाग है॥

२१–२५ पृथ्वीके पांचतत्त्वः–(२१) रोम (२२) त्वचा (२३) नाडी (२४) मांस। औ (२५) अस्थि। तिनमैंसैं

(२१) रोमेः--पृथ्वीविषै आकाशका भाग मिल्याहै। काहेतैं रोम शून्य है। काटनैसैं पीडा होवै नहीं औ आकाश बी शून्य है। यातैं यह आकाशका भाग है॥

॥ ४९ ॥ केश जो मस्तकके बाल। ताका रोम नाम शरीरके बालविषै अंतर्भाव है।

(२२) त्वचाः—पृथ्वीविषे वायुका भाग मिल्याहै । काहेतें त्वचासें शीत उष्ण कठिन कोमल स्पर्शकी मालुम होवैहै औ वायु वी स्पर्शगुणवाला है । यातें यह वायुका भाग है ॥

(२३) नाडीः—पृथ्वीविषे तेजका भाग मिल्याहै । काहेतें नाडीसें तापकी परीक्षा होवैहै । औ तेज वी तापरूप है । यातें यह तेजका भाग है ॥

(२४) मांसः—पृथ्वीविषे जलका भाग मिल्याहै । काहेतें मांस गीला है औ जल वी गीला है । यातें यह जलका भाग है ।

(२५) अँस्थिः—पृथ्वीका मुख्यभाग है ।

॥ ५०॥ नख औ दंतनका इसीमें अंतर्भाव है ॥

काहेतैं कठिन है औ पीतवर्ण है औ पृथ्वी
वी कठिन है अरु कहींक पीतरंगवाली
है। यातैं यह पृथ्वीका मुख्यभाग है ॥

इसरीतिसैं स्थूलदेहविषै पचीसतत्त्व रहतेहैं ॥

*** ४७ प्रश्नः—पचीसतत्त्व जाननैका क्या प्रयोजन है ?**

उत्तरः—

१ पचीसतत्त्व मैं नहीं। औ
२ ये पचीसतत्त्व मेरे नहीं।
३ ये पचीसतत्त्व पंचीकृतपंचमहाभूतके हैं ॥
४ इन पचीसतत्त्वनका जाननैहारा मैं द्रष्टा
घटद्रष्टाकी न्यांई इनतैं न्यारा हूं।

ऐसा निश्चय करना। यह पचीसतत्त्व जाननैका प्रयोजन है ॥

*** ४८ प्रश्नः—" पचीसतत्त्व मैं नहीं औ ये मेरे नहीं" सो किसरीतिसैं जानना ?**

उत्तरः—

१–५ आकाशके पांचतत्त्वविषैः—

१ (१) शोक होवै तब बी मैं जानताहूं । औ
(२) शोक न होवै तब तिसके अभावकूं
बी मैं जानताहूं ।

यातैं

(१) यह शोक मैं नहीं । औ
(२) यह शोक मेरा नहीं ।
(३) यह शोक आकाशका है ।
(४) मैं इस शोकका जाननैहारा द्रष्टा घट-
द्रष्टाकी न्यांई इसतैं न्यारा हूं ॥

ऐसैं शोक मैं नहीं औ मेरा नहीं । यह जानना ॥

२ (१) काम होवै तब बी मैं जानताहूं । औ
(२) काम न होवै तब तिसके अभावकूं
बी मैं जानताहूं ।

॥ ५१ ॥

१ कार्यकी उत्पत्तिसैं पूर्व जो अभाव। सो प्रागभाव है ॥

याते

(१) यह काम मैं नहीं । औ

(२) यह काम मेरा नहीं ।

(३) यह काम आकाशका है ।

(४) मैं इस कामका जाननैहारा द्रष्टा घट-द्रष्टाकी न्यांई इसतैं न्यारा हूं ॥

ऐसैं काम मैं नहीं औ मेरा नहीं । यह जानना ॥

३ (१) क्रोध होवै तब बी मैं जानताहूं । औ

(२) क्रोध न होवै तब तिसके अभावकूं बी मैं जानताहूं ।

थातैं

२ नाशके अनंतर जो अभाव सो प्रध्वंसाभाव है ॥

३ तीनकालमैं जो अभाव सो अत्यंताभाव है ॥

४ अन्यवस्तुमैं जो अन्यवस्तुका भेद । सो अन्योन्याभाव है ॥

इसरीतिसैं अभाव च्यारीप्रकारका है ॥

(१) यह क्रोध मैं नहीं । औ
(२) यह क्रोध मेरा नहीं ।
(३) यह क्रोध आकाशका है ।
(४) मैं इस क्रोधका जाननैहारा द्रष्टा घटद्रष्टाकी न्यांई इसतैं न्यारा हूं ॥

ऐसैं क्रोध मैं नहीं औ मेरा नहीं। यह जानना॥

४ (१) मोह होवै तब वी मैं जानताहूं । औ
(२) मोह न होवै तब तिसके अभावकूं वी मैं जानताहूं ।

यातैं

(१) यह मोह मैं नहीं । औ
(२) यह मोह मेरा नहीं ।
(३) यह मोह आकाशका है ।
(४) मैं इस मोहका जाननैहारा द्रष्टा घटद्रष्टाकी न्यांई इसतैं न्यारा हूं ॥

ऐसैं मोह मैं नहीं औ मेरा नहीं । यह जानना ॥

५ (१) भय होवै तब वी मैं जानताहूं । औ
(२) भय न होवै तब तिसके अभावकूं वी मैं जानताहूं ।

यातैं

(१) यह भय मैं नहीं । औ
(२) यह भय मेरा नहीं ।
(३) यह भय आकाशका है ।
(४) मैं इस भयका जाननैहारा द्रष्टा घट-द्रष्टाकी न्यांई इसतैं न्यारा हूं ॥

ऐसैं भय मैं नहीं औ मेरा नहीं। यह जानना ॥

६–१० वायुके पांचतत्त्वविषैः--

६ (१) प्रसारणः--शरीर प्रसरै तब वी मैं जानताहूं । औ
(२) शरीर न प्रसरै तब तिस प्रसरणेके अभावकूं वी मैं जानताहूं ।

यातैं

(१) यह प्रसारण मैं नहीं । औ
(२) यह प्रसारण मेरा नहीं ।
(३) यह प्रसारण वायुका है ।
(४) मैं इस प्रसारणका जाननैहारा द्रष्टा घटद्रष्टाकी न्यांई इसतैं न्यारा हूं ॥

ऐसैं प्रसारण मैं नहीं औ मेरा नहीं यह जानना ॥

७ (१) धावनः—शरीर दौडै तब बी मैं जानताहूं । औ
(२) शरीर न दौडै तब तिस दौडनैके अभावकूं बी मैं जानताहूं । यातैं
(१) यह धावन मैं नहीं । औ
(२) यह धावन मेरा नहीं ।
(३) यह धावन वायुका है ।
(४) मैं इस धावनका जाननैहारा द्रष्टा घटद्रष्टाकी न्यांई इसतैं न्यारा हूं ॥

ऐसैं धावन मैं नहीं औ मेरा नहीं । यह जानना ॥

८ (१) **वलनः**—शरीर वलै तब वी मैं जानताहूं । औ

(२) शरीर न वलै तब तिस वलनैके अभावकूं वी मैं जानताहूं ।

यातैं

(१) यह वलन मैं नहीं । औ

(२) यह वलन मेरा नहीं ।

(३) यह वलन वायुका है ।

(४) मैं इस वलनका जाननैहारा द्रष्टा घटद्रष्टाकी न्यांई इसतैं न्यारा हूं ॥

ऐसैं वलन मैं नहीं औ मेरा नहीं । यह जानना ॥

९ (१) **चलनः**—शरीर चलै तब वी मैं जानताहूं । औ

(२) शरीर न चलै तब तिस चलनैके अभावकूं वी मैं जानताहूं ।

यातैं

(१) यह चलन मैं नहीं । औ

(२) यह चलन मेरा नहीं ।

(३) यह चलन वायुका है ।

(४) मैं इस चलनका जाननैहारा द्रष्टा घटद्रष्टाकी न्यांई इसतैं न्यारा हूं ॥

ऐसैं चलन मैं नहीं औ मेरा नहीं । यह जानना ॥

१० (१) आकुंचनः—शरीर संकोचकूं पावै तब बी मैं जानताहूं । औ

(२) शरीर संकोचकूं न पावै तब तिसके अभावकूं बी मैं जानताहूं । यातैं

(१) यह आकुंचन मैं नहीं । औ

(२) यह आकुंचन मेरा नहीं ।

(३) यह आकुंचन वायुका है ।

(४) मैं इस आकुंचनका जाननैहारा द्रष्टा घटद्रष्टाकी न्यांई इसतैं न्यारा हूं ॥

ऐसैं आकुंचन मैं नहीं औ मेरा नहीं । यह जानना॥

११--१५ तेजके पांचतत्त्वविषैः—

११(१) निद्रा होवै तिसकूं बी मैं जानताहूं। औ
(२) निद्रा न होवै तब तिसके अभावकूं
वी मैं जानताहूं ।

यातैं

(१) यह निद्रा मैं नहीं । औ
(२) यह निद्रा मेरी नहीं ।
(३) यह निद्रा तेजकी है ।
(४) मैं इस निद्राका जाननैहारा द्रष्टा
घटद्रष्टाकी न्यांई इसतैं न्यारा हूं ॥

ऐसैं निद्रा मैं नहीं औ मेरी नहीं। यह जानना ॥

१२ (१) तृषा लगै तिसकूं वी मैं जानताहूं । औ
(२) तृषा न होवै तब तिसके अभावकूं
वी मैं जानताहूं ।

यातैं

(१) यह तृषा मैं नहीं । औ
(२) यह तृषा मेरी नहीं ।
(३) यह तृषा तेजकी है ।
(४) मैं इस तृषाका जाननैहारा द्रष्टा घट-
द्रष्टाकी न्यांई इसतैं न्यारा हूं ॥

ऐसैं तृषा मैं नहीं औ मेरी नहीं । यह जानना ॥

१३ (१) **क्षुधा** लगै तिसकूं बी मैं जानताहूं । औ
(२) क्षुधा न होवै तब तिसके अभावकूं
बी मैं जानताहूं ।

यातैं

(१) यह क्षुधा मैं नहीं । औ
(२) यह क्षुधा मेरी नहीं ।
(३) यह क्षुधा तेजकी है ।
(४) मैं इस क्षुधाका जाननैहारा द्रष्टा घट-
द्रष्टाकी न्यांई इसतैं न्यारा हूं ॥

ऐसैं क्षुधा मैं नहीं औ मेरी नहीं । यह जानना ॥

१४(१) कांति होवै तिसकूं बी मैं जानताहूं । औ

(२) कांति न होवै तब तिसके अभावकूं बी मैं जानताहूं ।

यातैं

(१) यह कांति मैं नहीं । औ

(२) यह कांति मेरी नहीं ।

(३) यह कांति तेजकी है ।

(४) मैं इस कांतिका जाननैहारा द्रष्टा घटद्रष्टाकी न्याई इसतैं न्यारा हूं ॥

ऐसैं कांति मैं नहीं औ मेरी नहीं । यह जानना ॥

१५(१) आलस्य होवै तिसकूं बी मैं जानताहूं । औ

(२) आलस्य न होवै तब तिसके अभावकूं बी मैं जानताहूं ।

यातैं

(१) यह आलस्य मैं नहीं । औ
(२) यह आलस्य मेरा नहीं ।
(३) यह आलस्य तेजका है ।
(४) मैं इस आलस्यका जाननैहारा द्रष्टा घटद्रष्टाकी न्यांई इसतैं न्यारा हूं ॥

ऐसैं आलस्य मैं नहीं औ मेरा नहीं । यह जानना ॥

१६--२० जलके पांचतत्त्वविषैः—

१६(१) लाळ गिरे तिसकूं बी मैं जानताहूं । औ
(२) लाळ न गिरे तब तिसके अभावकूं बी मैं जानताहूं । यातैं
(१) यह लाळ मैं नहीं । औ
(२) यह लाळ मेरा नहीं ।
(३) यह लाळ जलका है ।
(४) मैं इस लाळका जाननैहारा द्रष्टा घटद्रष्टाकी न्यांई इसतैं न्यारा हूं ॥

ऐसैं लाळ मैं नहीं औ मेरा नहीं । यह जानना ॥

१७ (१) स्वेद नाम प्रसीना होवै तिसकूं बी
मैं जानताहूं । औ

(२) प्रसीना न होवै तब तिसके अभाव-
कूं वी मैं जानताहूं ।

यातैं

(१) यह प्रसीना मैं नहीं । औ

(२) यह प्रसीना मेरा नहीं ।

(३) यह प्रसीना जलका है ।

(४) मैं इस प्रसीनेका जाननैहारा द्रष्टा
घटद्रष्टाकी न्यांई इसतैं न्यारा हूं ॥

ऐसैं स्वेद मैं नहीं औ मेरा नहीं । यह जानना ॥

१८(१) मूत्र आवै तिसकूं मैं जानताहूं । औ

(२) मूत्र न आवै तब तिसके अभावकूं
वी मैं जानताहूं ।

यातैं

(१) यह मूत्र मैं नहीं । औ
(२) यह मूत्र मेरा नहीं ।
(३) यह मूत्र जलका है ।
(४) मैं इस मूत्रका जाननेहारा द्रष्टा घट-
द्रष्टाकी न्याई इसतैं न्यारा हूं ॥
ऐसैं मूत्र मैं नहीं औ मेरा नहीं । यह जानना ॥

१९(१) शुक्र कहिये वीर्य शरीरविषै बढै
तिसकूं बी मैं जानताहूं । औ
(२) वीर्य घटै तब तिसके अभावकूं बी
मैं जानताहूं । यातैं
(१) यह वीर्य मैं नहीं । औ
(२) यह वीर्य मेरा नहीं ।
(३) यह वीर्य जलका है ।
(४) मैं इस वीर्यका जाननेहारा द्रष्टा घट-
द्रष्टाकी न्याई इसतैं न्यारा हूं ॥
ऐसैं शुक्र मैं नहीं औ मेरा नहीं । यह जानना॥

२०(१) **शोणित** नाम रुधिर शरीरविषै वढै तिसकूं वी मैं जानताहूं । औ
(२) रुधिर घटै तव तिसके अभावकूं वी मैं जानताहूं ।

यातैं

(१) यह रुधिर मैं नहीं । औ
(२) यह रुधिर मेरा नहीं ।
(३) यह रुधिर जलका है ।
(४) मैं इस रुधिरका जाननैहारा द्रष्टा घटद्रष्टाकी न्यांई इसतैं न्यारा हूं ॥

ऐसैं शोणित मैं नहीं औ मेरा नहीं । यह जानना॥

२१-२५ पृथ्वीके पांचतत्त्वविषैः—

२१(१) **रोम** वहुत होवैं तिनकूं वी मैं जानताहूं । औ
(२) रोम कमती होवैं तव तिनके कमती-पनैंकूं वी मैं जानताहूं । **यातैं**

(१) ये रोम मैं नहीं । औ
(२) ये रोम मेरे नहीं ।
(३) ये रोम पृथिवीके हैं ।
(४) मैं इन रोमनका जाननैहारा द्रष्टा घट-द्रष्टाकी न्यांई इनतैं न्यारा हूं ॥

ऐसैं रोम मैं नहीं औ मेरे नहीं । यह जानना ॥

२२(१) त्वचा स्पर्शकूं ग्रहण करै तिसकूं बी मैं जानताहूं । औ
(२) स्पर्शकूं ग्रहण न करै तब तिसके अभावकूं बी मैं जानताहूं । यातैं
(१) यह त्वचा मैं नहीं । औ
(२) यह त्वचा मेरी नहीं ।
(३) यह त्वचा पृथिवीकी है ।
(४) मैं इस त्वचाका जाननैहारा द्रष्टा घट-द्रष्टाकी न्यांई इसतैं न्यारा हूं ॥

ऐसैं त्वचा मैं नहीं औ मेरी नहीं । यह जानना ॥

२३(१) **नाडी** चलै तिनकूं वी मैं जानताहूं । औ
(२) नाडी न चलै तव तिनके अभावकूं वी मैं जानताहूं । **यातैं**
(१) ये नाडी मैं नहीं । औ
(२) ये नाडी मेरी नहीं ।
(३) ये नाडी पृथ्वीकी है ।
(४) मैं इन नाडीनका जाननैहारा द्रष्टा घट-द्रष्टाकी न्यांई इनतैं न्यारा हूं ॥

ऐसैं नाडी मैं नहीं औ मेरी नहीं । यह जानना ॥

२४(१) **मांस** बढै तिसकूं वी मैं जानताहूं । औ
(२) मांस घटै तव तिसके अभावकूं वी मैं जानताहूं ।

यातैं
(१) यह मांस मैं नहीं । औ
(२) यह मांस मेरा नहीं ।
(३) यह मांस पृथ्वीका है ।

(४) मैं इस मांसका जाननैहारा द्रष्टा घट-
द्रष्टाकी न्यांई इसतैं न्यारा हूं ॥

ऐसैं मांस मैं नहीं औ मेरा नहीं। यह जानना॥

२५ (१) अस्थि नाम हाड सूधे होवैं तिसकूं
वी मैं जानताहूं। औ

(२) हाड सूधे न होवैं तब तिनके अभा-
वकूं वी मैं जानताहूं।

यातैं

(१) ये हाड मैं नहीं। औ

(२) ये हाड मेरे नहीं।

(३) ये हाड पृथ्वीके हैं।

(४) मैं इन हाडनका जाननैहारा द्रष्टा घट-
द्रष्टाकी न्यांई इनतैं न्यारा हूं॥

ऐसैं हाड मैं नहीं औ मेरे नहीं। यह जानना॥

इसरीतिसैं पचीसतत्त्व मैं नहीं औ मेरे नहीं। यह
जानना॥

***४९ प्रश्नः—" पचीसतत्त्व मैं नहीं औ मेरे नहीं " इस जाननैसैं क्या निश्चय भया ?**

उत्तरः—स्थूलदेह औ तिसके धर्म १ नाम । २ जाति । ३ आश्रम । ४ वर्ण । ५ संबंध । ६ परिमाण । ७ जन्ममरण । इत्यादिक बी मैं नहीं औ मेरे नहीं । यह निश्चय भया ॥

*** ५० प्रश्नः—१ नाम मैं नहीं औ मेरा नहीं । यह कैसैं जानना ?**

उत्तरः—

१ जन्मसैं प्रथम नाम नहीं था । औ

२ जन्मके अनंतर नाम कल्पित है । औ

३ शरीरके भिन्नभिन्न अंगनविषै विचार कियेतैं नाम मिलता नहीं ।

यातैं

१ यह नाम मैं नहीं । औ

२ यह नाम मेरा नहीं ।

३ यह नाम स्थूलदेहविषै कल्पित है ।

४ मैं इस नामका जाननैहारा द्रष्टा घटद्रष्टाकी न्यांई इसतैं न्यारा हूं ॥

ऐसैं नाम मैं नहीं औ मेरा नहीं । यह जानना ॥

*** ५१ प्रश्नः—२ जाति जो वर्ण सो मैं नहीं औ मेरी नहीं । यह कैसैं जानना ?**

उत्तरः—

१ ब्राह्मणादिकजाति स्थूलदेहका धर्म है । सूक्ष्मदेह औ आत्माका धर्म नहीं । काहेतैं लिंगदेह औ आत्मा तौ जो पूर्वदेहविषै होवै सोई इस वर्त्तमानदेहविषै औ भावीदेहविषै रहताहै औ जाति तौ जो पूर्वदेहविषै थी सो इस देहविषै नहीं है औ जो इस देहविषै है सो आगिलेदेहविषै रहेगी नहीं । यातैं जाति स्थूलदेहकाही धर्म है । लिंगदेहका औ आत्माका धर्म नहीं है औ ॥

२

२ शरीरके अंगनविषै विचारिके देखिये तौ स्थूलदेहविषै जाति मिलै नहीं ।

यातैं

१ यह जाति मैं नहीं । औ
२ यह जाति मेरी नहीं ।
३ यह जाति स्थूलदेहविषै आरोपित है ।
४ मैं इस जातिका जाननैहारा द्रष्टा घटद्रष्टाकी न्यांई इसतैं न्यारा हूं ॥

ऐसैं जाति मैं नहीं औ मेरी नहीं । यह जानना ॥

॥ ५२ प्रश्नः—३ आश्रम मैं नहीं औ मेरा नहीं । यह कैसैं जानना ?

उत्तरः—

१ ब्रह्मचारी गृहस्थ वानप्रस्थ औ संन्यासी । ये च्यारीआश्रम भिन्नभिन्नकर्म करावनेके लिये आरोपकरिके स्थूलदेहविषै मानेहैं ।
२ सो भी मनुष्यमात्रविषै संभवतै नहीं । यातैं

१ ये आश्रम मैं नहीं। औ २ ये आश्रम मेरे नहीं।
३ ये आश्रम स्थूलदेहविषै आरोपित हैं।
४ मैं इन आश्रमनका जाननैहारा द्रष्टा घट-
द्रष्टाकी न्यांई इनतैं न्यारा हूं॥
ऐसैं आश्रम मैं नहीं औ मेरे नहीं । यह जानना ॥

*** ५३ प्रश्नः-४ वर्ण नाम रंग मैं नहीं औ मेरे नहीं। यह कैसैं जानना ?**

उत्तरः-

१ गौर श्याम रक्त पीत इत्यादि जो रंग हैं।
सो स्थूलदेहविषै प्रत्यक्ष देखियेहैं। औ
२ सो स्थूलदेह मैं नहीं। यातैं
१ ये रंग मैं नहीं । औ २ ये रंग मेरे नहीं।
३ ये रंग स्थूलदेहके हैं।
४ मैं इन रंगोंका जाननैहारा द्रष्टा घटद्रष्टाकी
न्यांई इनतैं न्यारा हूं॥
ऐसैं वर्ण मैं नहीं औ मेरे नहीं । यह जानना ॥

* ५४ प्रश्नः–५ संबंध मैं नहीं औ मेरे नहीं । यह कैसैं जाननां ?

उत्तरः–

१ पितापुत्र गुरुशिष्य स्त्रीपुरुष स्वामिसेवक । इत्यादिसंबंध स्थूलदेहके परस्पर प्रसिद्ध मिथ्या मानेहैं ।

२ विचार कियेसै मिलते नहीं । औ

३ मैं स्थूलदेहसैं न्यारा असंग हूं ।

यातैं

१ ये संबंध मैं नहीं । औ

२ ये संबंध मेरे नहीं ।

३ ये संबंध स्थूलदेहविषै आरोपित हैं ।

४ मैं इन संबंधोंका जाननैहारा द्रष्टा घटद्रष्टाकी न्यांई इनतैं न्यारा हूं ॥

ऐसैं संबंध मैं नहीं औ मेरे नहीं । यह जानना ॥

* ५५ प्रश्नः–६ परिमाण जो आकार सो मैं नहीं औ मेरे नहीं। यह कैसैं जानना?

उत्तरः–

१ लंबाटूंका जाडापतला टेढासूधा । इत्यादि-आकार बी प्रसिद्ध स्थूलदेहविषै देखियेहैं। औ

२ मैं स्थूलदेहतैं न्यारा निराकार हूं।

यातैं

१ ये आकार मैं नहीं। औ

२ ये आकार मेरे नहीं।

३ ये आकार स्थूलदेहके हैं।

४ मैं इन आकारोंका जाननैहारा द्रष्टा घट-द्रष्टाकी न्यांई इनतैं न्यारा हूं॥

ऐसैं परिमाण मैं नहीं औ मेरे नहीं। यह जानना॥

* ५६ प्रश्नः–७ मैं जन्ममरणवान् नहीं औ मेरेकूं जन्ममरण होवै नहीं। यह कैसैं जानना?

उत्तरः—

१ आत्माका जन्म मानिये तौ आत्मा अनित्य होवैगा । सो वार्ता मीमांसकसैं आदिलेके परलोकवादी जे आस्तिक हैं। तिनकूं इष्ट नहीं। काहेतैं जो आत्मा उत्पत्तिवान् होवै तौ नाशवान् बी होवैगा । तातैं

(१) पूर्वजन्मविषै नहीं किये कर्मसैं सुख-दुःखका भोग। औ

(२) इसजन्मविषै किये कर्मका भोगसैं विना नाश ।

ये दोदूषण होवैंगे। यातैं कर्मवादीके मतसैं आत्माकूं जो कर्त्ताभोक्ता मानिये। तौ बी जन्ममरणरहितहीं मानना होवैगा । औ

२ आत्माके जन्मका कोई कारण बी संभवै नहीं। काहेतैं आत्माका जो कारण होवै सो आत्मातैं भिन्नहीं चाहिये । औ

(१) आत्मातैं भिन्न तौ अनात्मा नामरूप हैं । सो तौ आत्माविषै रज्जुसर्पकी न्यांई कल्पित हैं । यातैं कारण बनै नहीं । औ

(२) ब्रह्म तौ घटाकाशके स्वरूप महाकाश-की न्यांई आत्माका स्वरूपही है । तिसतैं भिन्न नहीं । यातैं सो कारण बनै नहीं ।

तातैं **आत्माका जन्म नहीं** ॥ औ

३ जातैं जन्म नहीं तातैं **आत्माका मरण बी नहीं** । औ

४ जातैं आत्माविषै जन्ममरणका अभाव है । तातैं जायते (जन्म) । अस्ति (प्रगटता) वर्धते (वृद्धि) । विपरिणमते (विपरिणाम) अपक्षीयते (अपक्षय) । नश्यति (मरण) । इन **षट्विकारनतैं बी आत्मा रहित है** ॥

यातैं

१ मैं जन्ममरणवान् नहीं । औ

२ मेरेकूं जन्ममरण होवै नहीं ।

३ ये जन्ममरण स्थूलदेहकूं कर्मसैं होवैहैं ।

४ मैं इन जन्ममरणोंका जाननैहारा द्रष्टा घट-द्रष्टाकी न्यांई इनतैं न्यारा हूं ॥

ऐसैं मैं जन्ममरणवान् नहीं औ मेरेकूं जन्ममरण होवै नहीं । यह जानना ॥

* ५७ प्रश्नः–पंचमहाभूतनकी निवृत्तिविषै दृष्टांत क्या है ?

उत्तरः—दृष्टांतः—जैसैं कोईकूं भूत लग्याहोवै । सो धानककूं नाम पारधीकूं बुलायके । डमरु बजायके । लवणादिपांचवस्तु मिलायके । तिसका बलिदान देके । भूतकी निवृत्ति करैहै ॥

सिद्धांतः— तैसैं आकाशादिकपंचमहाभूत शरीररूप होयके जीवकूं लगेहैं । तिनकी निवृत्ति

वास्ते ब्रह्मनिष्ठगुरुरूप **धानन**के विधिपूर्वक शरण जायके । वेदशास्त्ररूप **डमरु** कहिये डाक बजायके ऊपर कहे जो पचीसतत्त्व तिनमैंसैं **पांच-पांच**तत्त्वरूप **बलिदान** एकएकभूतकूं आप-आपका भाग अर्पण करिके । मैं इन पचीसतत्त्वनका

॥ ५२ ॥ विवेकादिशुभगुणसहित मोक्षकी इच्छा-वाला अधिकारी

१ हाथमैं भेटा लेके गुरुके शरण होयके

२ साष्टांग नमस्कार करीके ।

३ " हे भगवन् । मेरेकूं ब्रह्मविद्याका उपदेश करो । " ऐसैं कहिके " बंध किसकूं कहिये ? मोक्ष किसकूं कहिये ? अविद्या किसकूं कहिये ? औ विद्या किसकूं कहिये ? " इत्यादिप्रश्न करै । औ

३ गुरुकी प्रसन्नता वास्ते तन मन धन वाणी अर्पण-करिके सेवा करै ।

यह ब्रह्मविद्याके ग्रहणका विधि है ॥

द्रष्टा हूं । इसरीतिसैं निश्चय करनैतैं इन **पंचमहाभूतनकी** अत्यंतनिवृत्ति होवैहै ॥

इसरीतिसैं स्थूलदेहका मैं द्रष्टा हूं ॥

॥ २ ॥ सूक्ष्मदेहका मैं द्रष्टा हूं ॥

* **५८ प्रश्नः—सूक्ष्मदेह सो क्या है ?**

उत्तरः—अपंचीकृतपंचमहाभूतके सतरातत्त्वनका **सूक्ष्मदेह** है ॥

* **५९ प्रश्नः—सूक्ष्मदेहके सतरातत्त्व कौनसैं हैं ?**

उत्तरः—१—५ पांचज्ञानइंद्रिय । ६—१० पांचकर्मइंद्रिय । ११—१५ पांचप्राण । १६ मन औ १७ बुद्धि । ये **सतरातत्त्व** हैं ॥

* **६० प्रश्नः—पांचज्ञानइंद्रिय कौनसैं हैं ?**

उत्तरः— १—५ श्रोत्र त्वचा चक्षु जिव्हा औ घ्राण । ये **पंचज्ञानइंद्रिय** हैं ॥

॥ ५३ ॥ पीछे लगै नहीं । यह अत्यंतनिवृत्ति है ।
॥ ५४ ॥ ज्ञानके साधन इंद्रिय. ज्ञानइंद्रिय है ।

*** ६१ प्रश्नः–पांचकर्मइंद्रिय कौनसें हैं ?**

उत्तरः—६–१० वाक् पाणि पाद उपस्थ औ गुद । ये **पंचकर्मइंद्रिय** हैं ॥

*** ६२ प्रश्नः—पांचप्राण कौनसें हैं ?**

उत्तरः–११–१५ प्राण अपान समान उदान औ व्यान । ये **पांचप्राण** हैं ॥

*** ६३ प्रश्नः— मन कौनकूं कहिये ?**

उत्तरः—१६ संकल्पविकल्प रूपजो वृत्ति । ताकूं **मन** कहिये ॥

*** ६४ प्रश्नः—बुद्धि किसकूं कहिये ?**

उत्तरः--१७ निश्चयरूप जो वृत्ति । ताकूं **बुद्धि** कहिये ॥

*** ६५ प्रश्नः– अपंचीकृतपंचमहाभूत कौनकूं कहिये ?**

॥ ५५ ॥ कर्मके साधन इंद्रिय **कर्मइंद्रिय** है ॥

उत्तरः—जिन भूतनका पूर्व कही रीतिसैं पंचीकरण न भयाहोवै ।

१ तिन भूतनकूं **अपंचीकृतपंचमहाभूत** कहेहैं ।

२ तिनहींकूं **सूक्ष्मभूत** कहेहैं । औ

३ तिनहींकूं **तन्मात्रा** बी कहेहैं ॥

* ६६ **प्रश्नः**– अपंचीकृतपंचमहाभूतनके सतरातत्त्व कैसें जानने ?

उत्तरः—

पांचज्ञानइंद्रिय औ पांचकर्मइंद्रियविषैः—

१ आकाशके सत्त्वगुणका भाग **श्रोत्र** है ।

२ आकाशके रजोगुणका भाग **वाक्** है ॥

(१) श्रोत्रइंद्रिय शब्दकूं **सुनताहै** । औ

(२) वाक्इंद्रिय शब्दकूं **बोलताहै** ॥

(१) श्रोत्र **ज्ञानइंद्रिय** है । औ

---

* ॥ ५६ ॥ सर्वपदार्थनमैं सत्त्व रज तम । ये तीन-गुण वर्त्ततेहैं ॥

(२) वाक् कर्मइंद्रिय है ।
इन दोनूंकी मित्रता है ॥
३ वायुके सत्वगुणका भाग त्वचा है । औ
४ वायुके रजोगुणका भाग पाणि है ॥
(१) त्वचाइंद्रिय स्पर्शकूं ग्रहण करैहै । औ
(२) हस्तइंद्रिय तिसका निर्वाह करैहै ॥
(१) त्वचा ज्ञानेंद्रिय है । औ
(२) हस्त कर्मेंद्रिय है ॥
इन दोनूंकी मित्रता है ॥
५ तेजके सत्वगुणका भाग चक्षु है ॥
६ तेजके रजोगुणका भाग पाद है ॥
(१) चक्षुइंद्रिय रूपका ग्रहण करैहै । औ
(२) पादइंद्रिय तहां गमन करैहै ॥
(१) चक्षु ज्ञानेंद्रिय है । औ
(२) पाद कर्मेंद्रिय है ॥
इन दोनूंकी मित्रता है ॥

७ जलके सत्वगुणका भाग जिव्हा है ।
८ जलके रजोगुणका भाग उपस्थ है ॥
(१) जिव्हाइंद्रिय **रसका ग्रहण** करैहै । औ
(२) उपस्थइंद्रिय **रसका त्याग** करैहै ॥
(१) जिव्हा (रसना) **ज्ञानेंद्रिय** है । औ
(२) उपस्थ **कर्मेंद्रिय** है ॥

इन दोनूंकी मित्रता है ॥

९ पृथिवीके सत्वगुणका भाग घ्राण है ।
१० पृथिवीके रजोगुणका भाग गुद है ॥
(१) घ्राणइंद्रिय **गंधका ग्रहण** करैहै । औ
(२) गुदइंद्रिय **गंधका त्याग** करैहै ॥
(१) घ्राण **ज्ञानेंद्रिय** है । औ
(२) गुद (पायु) **कर्मेंद्रिय** है ॥

इन दोनूंकी मित्रता है ॥

सिद्धांतः—तैसैं (१) स्थूलदेहरूप **नृत्यशाला**विषै (२) साक्षीरूप जो मैं **दीपक** हूं । (३) सो चिदाभासरूप **राजा** औ (४) मनरूप **प्रधान** औ (५) पंचप्राणरूप **अनुचर** औ (६) बुद्धिरूप **नायिका** औ (७) दशइंद्रियरूप **वाजंत्री** औ (८) शब्दादिपंचविषयरूप **सभाके लोक** । (९) ये जाग्रत्स्वप्नसमयविषै होवैं तब इनकूं प्रकाशताहूं औ (१०) सुषुप्तिसमयविषै ये न होवैं तब तिनके अभावकूं बी मैं प्रकाशताहूं ॥

इसविषे यह उक्त दृष्टांत समजना ॥

७० प्रश्नः—सो कैसें समजना ?

उत्तरः—

१ **जाग्रत्‌अवस्थाविषैं** इंद्रिय औ अंतःकरण दोनूंकी सहायतासैं मैं प्रकाशताहूं कहियें जानताहूं । औ

* ६८ प्रश्नः–ये सतरातत्व मैं नहीं औ मेरे नहीं। यह किस कारणसैं जानना ?

उत्तरः–इन सतरातत्त्वनका मैं जाननैहारा हूं ॥ जो जिसकूं जानै सो तिसतैं न्यारा होवैहै। यह नियम है ॥ इस कारणसै ये सतरातत्त्व मैं नहीं औ मेरे नहीं। यह जानना ॥

* ६९ प्रश्नः–इसविषै दृष्टांत क्या समजना ?

उत्तरः–

दृष्टांतः–जैसैं (१) नृत्यशालाविषै स्थित। (२) दीपक। (३) राजा। (४) प्रधान। (५) अनुचर। (६) नायिका। (७) वाजंत्री औ (८) अन्य सभाके लोक (९) वे बैठेहोवैं तब बी प्रकाशैहै औ (१०) सर्व उठि जावैं तब शून्यगृहकूं बी प्रकाशैहै ॥

सिद्धांतः—तैसैं (१) स्थूलदेहरूप **नृत्यशाला**विषै (२) साक्षीरूप जो मैं **दीपक** हूं । (३) सो चिदाभासरूप **राजा** औ (४) मनरूप **प्रधान** औ (५) पांचप्राणरूप **अनुचर** औ (६) बुद्धिरूप **नायिका** औ (७) दशइंद्रियरूप **वाजंत्री** औ (८) शब्दादिपंचविषयरूप **सभाके लोक** । (९) ये जाग्रत्स्वप्नसमयविषै होवैं तब इनकूं प्रकाशताहूं औ (१०) सुषुप्तिसमयविषै ये न होवैं तब तिनके अभावकूं बी मैं प्रकाशताहूं ॥

इसविषै यह उक्त दृष्टांत समजना ॥

* ७० **प्रश्नः—सो कैसैं समजना ?**

उत्तरः—

१ **जाग्रत्अवस्थाविषै** इंद्रिय औ अंतःकरण दोनूंकी सहायतासैं मैं प्रकाशताहूं कहिये जानताहूं । औ

२ **स्वप्नअवस्थाविषै** इंद्रियनसैं विना केवल अंतःकरणकी सहायतासैं मैं प्रकाशताहूं । औ
३ **सुषुप्तिअवस्थाविषै** इंद्रिय औ अंतःकरण दोनूंकी सहायता विना केवल मैंही प्रकाशताहूं । ऐसैं समजना ॥

* **७१ प्रश्नः—इसविषै और दृष्टांत क्या है ?**

उत्तरः—दृष्टांतः—जैसैं (१) पांचछिद्र-वाले **घटके** भीतर **पात्र तैल** औ **वत्तीसहित दीपक** जलताहै । (२) सो दीपक । पात्र तैल बत्ती घटके भीतरके अवयव औ घटके छिद्रनकूं प्रकाशताहुया घटके बाहिर छिद्रनके सन्मुख क्रमतैं धरे जो वीणा । पुष्पनका गुच्छ । मणि । रस-पात्र औ । अत्तरकी सीसी । तिन सर्वकूं छिद्र-द्वारा प्रकाशताहै औ (३) सूर्यरूपसैं सारे ब्रह्मांडकूं प्रकाशताहै । औ (४) महातेजमय सामान्यरूपसैं सर्वव्यापी है ॥

सिद्धांतः— तैसैं (१) पांचज्ञानेंद्रियरूप छिद्रवाले स्थूलदेहरूप **घट**के भीतर हृदयकमल-रूप **पात्र** है । तामैं मनरूप **तैल** है औ बुद्धिरूप **बत्ती** है । तापर आरूढ आत्मारूप **दीपक** है ॥ (२) सो हृदयरूप पात्रकूं औ मनरूप तैलकूं औ बुद्धिरूप बत्तीकूं औ देहके भीतरके अवय-वनकूं औ इंद्रियरूप छिद्रनकूं प्रकाशता (जानता) हुया । इंद्रियनसैं संबंधवाले शब्दादिकविषयन-कूं बी इंद्रियद्वारा प्रकाशताहै औ (३) ईश्वर-रूपसैं ब्रह्मांडादिसर्वबाह्यप्रपंचकूं प्रकाशताहै औ (४) सामान्यचैतन्य ब्रह्मरूपसैं सर्वव्यापी है ॥

यह इसविषै और दृष्टांत है ॥

॥ ५७ ॥ इहां और यज्ञशालाका दृष्टांत है । सो आगे ७ वी कलाविषै उपद्रष्टारूप आत्माके विशेषणके प्रसंगमैं कहियेगा ॥

*** ७२ प्रश्नः–ऐसैं कहनैसैं क्या निर्णय भया ?**

उत्तरः–ये कहे जे सतरातत्त्व वे मैं नहीं औ ये मेरे नहीं । ये पंचमहाभूतनके हैं ॥ मैं इनका जाननैहारा द्रष्टा घटद्रष्टाकी न्यांई इनसैं न्यारा हूं । यह निर्णय भया ॥

*** ७३ प्रश्नः–सतरातत्त्व मैं नहीं औ मेरे नहीं । सो किसरीतिसैं समजना ?**

उत्तरः—

॥ १–५ ॥ पांचज्ञानइंद्रियविषैः—

१ श्रोत्रः—

(१) शब्दकूं सुनै तिसकूं वी मैं जानताहूं ।

(२) न सुनै तब तिस सुननैके अभावकूं वी मैं जानताहूं ।

यातें यह श्रोत्र मैं नहीं औ मेरा नहीं । यह आकाशका है । मैं इसका जाननैहारा द्रष्टा घटद्रष्टाकी न्यांई इसतें न्यारा हूं ॥

२ त्वचाः–

(१) स्पर्शकूं ग्रहण करै तिसकूं बी मैं जानताहूं । औ

(२) ग्रहण न करै तब तिस ग्रहण करनैके अभावकूं बी मैं जानताहूं ।

यातैं यह त्वचा मैं नहीं औ मेरी नहीं । यह वायुकी है । मैं इसका जाननैहारा द्रष्टा घटद्रष्टाकी न्यांई इसतैं न्यारा हूं ॥

३ चक्षुः–

(१) रूपकूं देखै तिसकूं बी मैं जानताहूं । औ

(२) न देखै तब तिस देखनैके अभावकूं बी मैं जानताहूं ।

यातैं यह चक्षु मैं नहीं औ मेरा नहीं । यह तेजका है । मैं इसका जाननैहारा द्रष्टा घटद्रष्टाकी न्यांई इसतैं न्यारा हूं ॥

४ जिव्हाः—

(१) रसका स्वाद लेवै तिसकूं बी मैं जानताहूं। औ

(२) स्वाद न लेवै तब तिस स्वाद लेनेके अभावकूं बी मैं जानताहूं।

यातैं यह जिव्हा मैं नहीं औ मेरी नहीं। यह जलकी है। मैं इसका जाननैहारा द्रष्टा घटद्रष्टाकी न्यांई इसतैं न्यारा हूं ॥

५ घ्राणः—

(१) गंधका ग्रहण करै तिसकूं बी मैं जानताहूं। औ

(२) न ग्रहण करै तब तिस ग्रहण करनैके अभावकूं बी मैं जानताहूं।

यातैं यह घ्राण मैं नहीं औ मेरा नहीं। यह पृथ्वीका है। मैं इसका जाननैहारा द्रष्टा घटद्रष्टाकी न्यांई इसतैं न्यारा हूं ॥

॥ ६–१० ॥ पांचकर्मइंद्रियविषैः—

६ वाक्ः–(वाचा)

(१) बोलै तिसकूं बी मैं जानताहूं। औ

(२) न बोलै तब तिसके अभावकूं बी मैं जानताहूं।

यातैं यह वाक् मैं नहीं औ मेरी नहीं। यह आकाशकी है। मैं इसका जाननैहारा द्रष्टा घटद्रष्टाकी न्यांई इसतैं न्यारा हूं ॥

७ पाणिः–(हस्त)

(१) लेना देना करै तिसकूं बी मैं जानताहूं। औ

(२) न करै तब तिसके अभावकूं बी मैं जानताहूं।

यातैं ये हस्त मैं नहीं औ मेरे नहीं। ये वायुके हैं। मैं इनका जाननैहारा द्रष्टा घटद्रष्टाकी न्यांई इनतैं न्यारा हूं ॥

८ पादः—

(१) चलैं तिसकूं वी मैं जानताहूं । औ
(२) न चलैं तव तिसके अभावकूं वी मैं जानताहूं ।

यातैं ये पाद मैं नहीं औ मेरे नहीं । ये तेजके हैं । मैं इनका जाननैहारा द्रष्टा घटद्रष्टाकी न्यांई इनतैं न्यारा हूं ॥

९ उपस्थः—

(१) रस (मूत्र और वीर्य) का त्याग करै तिसकूं वी मैं जानताहूं । औ
(२) त्याग न करै तव तिसके अभावकूं वी मैं जानताहूं ।

यातैं यह उपस्थ मैं नहीं औ मेरा नहीं । यह जलका है । मैं इसका जाननैहारा द्रष्टा घटद्रष्टाकी न्यांई इसतैं न्यारा हूं ॥

१० गुदः—

(१) मलका त्याग करै तब तिसकूं बी मैं जानताहूं । औ

(२) त्याग न करै तब तिसके अभावकूं बी मैं जानताहूं ।

यातैं यह गुद मैं नहीं औ मेरा नहीं । यह पृथ्वीका है । मैं इसका जाननैहारा द्रष्टा घटद्रष्टाकी न्यांई इसतैं न्यारा हूं ॥

॥ ११–१७ ॥ प्राण औ अंतःकरणविषै

११–१५ पांचप्राणः—

(१) क्रिया करैं तिसकूं बी मैं जानताहूं । औ

(२) क्रिया न करैं तब क्रियाके अभावकूं बी मैं जानताहूं ।

यातैं ये प्राण मैं नहीं औ मेरे नहीं । ये मिले-हुये पंचमहाभूतनके हैं । मैं इनका जाननैहारा द्रष्टा घटद्रष्टाकी न्यांई इनतैं न्यारा हूं ॥

१६ मनः—

(१) संकल्पविकल्प करै तिसकूं मैं जानताहूं

(२) संकल्पविकल्प न करै तब तिसके अभावकूं बी मैं जानताहूं ।

यातैं यह मन मैं नहीं औ मेरा नहीं । यह मिले-हुये पंचमहाभूतनका है । मैं इसका जाननै-हारा द्रष्टा घटद्रष्टाकी न्यांई इसतैं न्यारा हूं ॥

१७ बुद्धिः—

(१) निश्चय करै तिसकूं बी मैं जानताहूं औ

(२) निश्चय न करै तब तिसके अभावकूं बी मैं जानताहूं ।

यातैं यह बुद्धि मैं नहीं औ मेरी नहीं । यह मिले-हुये पंचमहाभूतनकी है । मैं इसका जाननै-हारा द्रष्टा घटद्रष्टाकी न्यांई इसतैं न्यारा हूं ॥

इसरीतिसैं ये सतरातत्त्व मैं नहीं औ मेरे नहीं । यह समजना ॥

* ७४ प्रश्नः–ऐसैं कहनैसैं क्या निश्चय भया ?

उत्तरः—

१ लिंगदेह औ तिसके धर्म पुण्यपापका कर्त्तापना । तिनके फल सुखदुःखका भोक्तापना। औ
२ इसलोक परलोकविषै गमनआगमन । औ
३ वैराग्यशमदमादिसात्त्विकीवृत्तियां औ रागद्वेषहर्षादिराजसीवृत्तियां । औ निद्राआलस्यप्रमादादितामसीवृत्तियां ।
४ तैसैं क्षुधातृषा अंधपनाआदि अरु मंदपना औ पटुपना

इत्यादिक मैं नहीं औ मेरे नहीं । यह निश्चय भया ॥

* ७५ प्रश्नः– पुण्यपापका कर्त्ता औ तिनके फल सुखदुःखका भोक्ता मैं कैसैं नहीं औ कर्त्तापना भोक्तापना मेरा धर्म नहीं । यह कैसैं जानना ?

उत्तरः—१ जो वस्तु विकारी होवै सो क्रियावान् होनैतैं कर्त्ता कहिये है ॥ मैं निर्विकार कूटस्थ होनैतैं क्रियाका आश्रय नहीं । यातैं पुण्यपापरूप क्रियाकां मैं कर्त्ता नहीं । औ जो कर्त्ता नहीं सो भोक्ता बी होवै नहीं । यातैं ये अंतःकरणके धर्म हैं । मेरे नहीं । मैं इनका जाननैहारा द्रष्टा घटद्रष्टाकीं न्यांई इनतैं न्यारा हूं । ऐसैं जानना ॥

*** ७६ प्रश्नः—इसलोक परलोकविषे गमनआगमन मेरे धर्म नहीं । यह कैसैं जानना ?**

उत्तरः—२ अंतःकरण (लिंगदेह) परिच्छिन्न है । तिसका प्रारब्धकर्मके बलसैं गमन-आगमन संभवै है औ मैं आकाशकी न्यांई व्यापक हूं । यातैं मेरे धर्म गमनआगमन नहीं । ऐसैं जानना ॥

* ७७ प्रश्नः—सात्विकी राजसी औ तामसी वृत्तियां मैं नहीं औ मेरा धर्म नहीं । यह कैसैं जानना ?

उत्तरः—३ दृष्टांत—जैसैं (१) किसी महलमैं बैठे (२) राजाके विनोदअर्थ (३) कोई कारीगर (४) कारंजा बनावैहै । (५) तिस कारंजेकी कलके खोलनैसैं जलकी तीन-धारा निकसतीयां हैं । (६) तिन तीनधाराके भीतर प्रवाहरूपसैं अनंतधारा निकसतीयां हैं । (७) जब सो कल बंध करिये तब तीनधारा बंध होयके अकेला राजाहीं बाकी रहताहै ।

सिद्धांतः—तैसैं (१) स्थूलशरीररूप महलमैं (२) अधिष्ठान कूटस्थरूपकरि स्थित परमात्मारूप राजा है । तिसके विनोदअर्थ

(३) माया (अज्ञान) रूप **कारीगरनै** (४) अंतःकरणरूप **कारंजा** कियाहै। (५) जाग्रत्-स्वप्नविषै तिसकी प्रारब्धरूप कलके खोलनैसैं तीनगुणके प्रवाहरूप **तीनधारा** निकसतीयां हैं। (६) तिन तीनधाराके भीतरसैं **अगणित-वृत्तियां** उठतीयां हैं । (७) औ सुषुप्तिविषै प्रारब्धकर्मरूप कलके बंध हुयेतैं तिन वृत्तियांके भावअभावका प्रकाशक आनंदस्वरूप केवलपर-मात्मारूप राजा **बाकी रहताहै** ॥ सोई मैं हूं। यातैं ये सात्विकी राजसी तामसी वृत्तियां मैं नहीं औ मेरी नहीं । ये अंतःकरणकी हैं। मैं इनका जाननैहारा द्रष्टा घटद्रष्टाकी न्यांई इनतैं न्यारा हूं। ऐसैं जानना ॥

* ७८ प्रश्नः–अंधपनाआदि अरु मंदपना औ पटुपना मैं नहीं औ मेरे नहीं । यह कैसें जानना ?

उत्तरः–४

(१) नेत्रादिकइंद्रिय आपआपके विषयकूं कछू बी ग्रहण न करैं सो तिनका **अंधपना**आदि है । तिसकूं बी मैं जानता हूं । औ

(२) विषयकूं स्वल्प ग्रहण करैं सो तिनका **मंदपना** है । तिसकूं बी मैं जानता हूं । औ

(३) विषयकूं स्पष्ट ग्रहण करैं सो तिनका **पटुपना** है । तिसकूं बी मैं जानता हूं ।

यातें ये मैं नहीं औ मेरे नहीं । ये इंद्रियनके धर्म हैं । मैं इनका जाननैहारा द्रष्टा घटद्रष्टाकी न्यांई इनतें न्यारा हूं ॥

इसरीतिसैं सूक्ष्मदेहका मैं द्रष्टा हूं ॥ २ ॥

॥ ३ ॥ कारणशरीरका मैं द्रष्टा हूं ॥

* ७९ प्रश्नः—कारणदेह सो क्या है ?

उत्तरः—

१ पुरुप जब सुषुप्तितैं ऊठे तब कहताहै कि "आज मैं कछू बी न जानताभया" ईंसतैं। सुषुप्तिविषै अज्ञान है। ऐसा सिद्ध होवैहै। औ

२ जाग्रत्‌विषै बी "मैं ब्रह्मकूं जानता नहीं" औ 'मेरी मुजकूं खबर नहीं है।' 'मैं यह नहीं जानताहूं।' 'मैं यह नहीं जानताहूं' इस अनुभवका विपय अज्ञान है। औ

॥ ५८ ॥ सुषुप्तिसैं उठ्या जो पुरुष। तिसकूं "मैं कछुबी न जानताभया" ऐसा ज्ञान होवैहै। सो ज्ञान अनुभवरूप नहीं है। किंतु सुषुप्तिकालविषै अनुभव किये अज्ञानकी स्मृति है॥ तिस स्मृतिका विषय सुषुप्तिकालका अज्ञान है॥

३ स्वप्नका कारण बी निद्रारूप अज्ञान है ।

ऐसा जो अज्ञान सो कारणदेह है ॥

* ८० प्रश्नः-कारणदेह मैं नहीं औ मेरा नहीं । यह कैसैं जानना ?

उत्तरः-" मैं जानताहूं " औ " मैं न जानताहूं " ऐसी जे अंतःकरणकी वृत्तियां हैं । तिनकूं

॥ ५९ ॥

१ अज्ञान । स्थूलसूक्ष्मदेहका हेतुहै । यातैं इसकूं कारण कहतेहैं ॥

२ तत्त्वज्ञानसैं इस अज्ञानका दाह होवैहै । यातैं इसकूं देह कहतैहैं ॥

यह अज्ञान गर्भमंदिरके अंधकारकी न्यांई ब्रह्मके आश्रित होयके ब्रह्मकूंहीं आवरण करताहै ॥

ज्ञातअज्ञातवस्तुरूप विषयसहित मैं जानताहूं । यातैं यह कारणदेह मैं नहीं औ मेरा नहीं । यह [६०] अज्ञानका है । मैं इसका जाननैहारा द्रष्टा घट-द्रष्टाकी न्यांई इसतैं न्यारा हूं । यह ऐसैं जानना ॥

इसरीतिसैं कारणदेहका मैं द्रष्टा हूं ॥ ३ ॥

इति श्रीविचारचंद्रोदये देहत्रयद्रष्टृवर्णन-नामिका तृतीयकला समाप्ता ॥ ३ ॥

॥ ६० ॥ कारणदेह आप अज्ञान है । तिसकूं "अज्ञानका है" ऐसैं जो कह्या । सो जैसैं राहुकूंहीं राहुका मस्तक कहतेहैं । तैसैं है ॥

॥ अथ चतुर्थकला प्रारंभः ॥ ४ ॥

॥ मैं पंचकोशातीत हूं ॥

॥ मनहर छंद ॥

पंचकोशातीत मैं हूं अन्न प्राण मनोमय
विज्ञान आनंदमय पंचकोश [६१]नातमा ॥
स्थूलदेह अन्नमय–कोश [६२]लिंगदेह प्राण–
मन रु विज्ञान तीनकोश कहैं मातमा ॥
कारण आनंदमय–कोश ये[६३] कारज जड ।
विकारी विनाशी व्यभिचारीहीं अनातमा ।
अज चित अविकारी नित्य व्यभिचारहीन ।
पीतांवर अनुभव करता मैं आतमा ॥ ४ ॥

*८१ प्रश्नः-पंचकोशातीत कहिये क्या ?

उत्तरः-पंचकोशातीत कहिये पांचकोशन-तैं मैं अतीत नाम न्यारा हूं ॥

* ८२ प्रश्नः-कोश कहिये क्या है ?

उत्तरः-

१ कोश नाम तलवारके म्यानका । औ

२ धनके भंडारका । औ

३ कोशकार नामक कीडेके गृहका है ॥

तिनकी न्याई पंचकोश आत्माकूं ढापैहैं । यातैं अन्नमयादिक बी कोश कहावैहैं ॥

* ८३ प्रश्नः-पांचकोशके नाम क्या है ?

॥ ६१ ॥ आत्मा नहीं । अर्थ यह जो अनात्मा है ॥

॥ ६२ ॥ महात्मा लिंगदेहकूं प्राण मन अरु विज्ञान तीनकोशरूप कहैहैं ॥

॥ ६३ ॥ पंचकोश ॥

उत्तरः—१ अन्नमयकोश । २ प्राणमयकोश । ३ मनोमयकोश । ४ विज्ञानमयकोश । औ ५ आनंदमयकोश । ये पांचकोशके नाम हैं।

* ८४ प्रश्नः—१ अन्नमयकोश सो क्या है ?

उत्तरः—

१ मातापितानै. खाया जो अन्न । तिसतैं भया जो रजवीर्य । तिसकरि जो माताके उदरविषै उत्पन्न होताहै ।

२ फेर जन्मके अनंतर क्षीरादिकअन्नकरिके जो वृद्धिकूं पावताहै ।

३ फेर मरणके अनंतर अन्नमयपृथिवीविषै लीन होताहै ।

ऐसा जो स्थूलदेह । सो अन्नमयकोश है ॥

* ८५ प्रश्नः—अन्नमयकोश कैसा है ?

उत्तरः—सुखदुःखके अनुभवरूप भोगका स्थान है ॥

* ८६ प्रश्नः—अन्नमयकोशतैं मैं न्यारा हूं । यह कैसैं जानना ?

उत्तरः—

१ जन्मतैं प्रथम औ मरणतैं पीछे अन्नमयकोश (स्थूलशरीर) का अभाव है । यातैं यह उत्पत्तिनाशवान् होनैतैं घटकी न्यांई कार्य है । औ

२ मैं सदा भावरूप हूं । तातैं उत्पत्तिनाशरहित होनैतैं इसतैं विलक्षण हूं ।

यातैं यह अन्नमयकोश मैं नहीं औ मेरा नहीं । यह स्थूलदेहरूप है । मैं इसका जाननैहारा आत्मा इसतैं न्यारा हूं ॥ इसरीतिसैं अन्नमयकोशतैं मैं न्यारा हूं । यह जानना ॥

* ८७ प्रश्नः—२ प्राणमयकोश सो क्या है ?

उत्तरः—पांचकर्मइंद्रियसहित पांचप्राण । सो प्राणमयकोश है ॥

* ८८ प्रश्नः-पांचकर्मइंद्रिय औ पांचप्राण कौनसे हैं ?

उत्तरः—पांचकर्मइंद्रिय औ पांचप्राण पूर्व सूक्ष्मदेहकी प्रक्रियाविषै कहेहैं ॥

* ८९ प्रश्नः-पांचप्राणके स्थान औ क्रिया कौन है ?

उत्तरः—

१ प्राणवायुः—

(१) हृदयस्थानविषै रहताहै । औ

(२) प्रत्येकदिनरात्रिविषै २१६०० श्वास-उच्छ्वास लेनैरूप क्रियाकूं करताहै ॥

२ अपानवायुः—

(१) गुदस्थानविषै रहताहै । औ

(२) मलमूत्रके उत्सर्ग (त्याग) रूप क्रियाकूं करताहै ॥

३ समानवायुः—

(१) नाभिस्थानविषै रहताहै । औ

(२) कूपजलकूं बगीचेविषै मालीकी न्यांई भोजन किये अन्नके रसकूं निकासिके नाडीद्वारा सर्वशरीरविषै पहुंचावनैरूप क्रियाकूं करताहै ॥

४ उदानवायुः—

(१) कंठस्थानविषै रहताहै । औ

(२) खाएपिए अन्नजलके विभागकूं करता-है । तथा स्वप्न हींचकी आदिकके दिखावनैरूप क्रियाकूं करताहै ।

५ व्यानवायुः—

(१) सर्वांगस्थानविषै रहताहै । औ

(२) सर्वअंगनकी संधिनके फेरनैरूप क्रियाकूं करताहै ॥

इसरीतिसैं पांचप्राणके मुख्यस्थान औ क्रिया है ॥

९० प्रश्नः-प्राणादिवायु शरीरविषै क्या करतेहैं ?

उत्तरः-प्राणादिवायु

१ सारेशरीरविषै पूर्ण होयके शरीरकूं बल देतेहैं । औ

२ इंद्रियनकूं आपआपके कार्यविषै प्रवृत्तिरूप क्रियाके साधन होतेहैं ॥

९१ प्रश्नः-प्राणमयकोशतैं मैं न्यारा हूं । यह कैसैं जानना ?

उत्तरः-

१ निद्राविषै पुरुष सोयाहोवै । तब प्राण जागता-है । तौ बी कोई स्नेही आवै तिसका सन्मान करता नहीं । औ

२ चोर भूषण लेजावै तिसकूं निषेध करता नहीं ।

तातैं यह प्राणवायु घटकी न्याईं जड है । औ

मैं चैतन्यरूप इसतैं विलक्षण हूं । यातैं यह प्राणमयकोश मैं नहीं औ मेरा नहीं । यह सूक्ष्म-देहरूप है ॥ मैं इसका जाननैहारा आत्मा इसतैं न्यारा हूं ॥ इसरीतिसैं प्राणमयकोशतैं मैं न्यारा हूं । यह जानना ॥

* ९२ प्रश्नः–३ मनोमयकोश सो क्या है ?

उत्तरः–पांचज्ञानइंद्रियसहित मन । सो मनोमयकोश है ॥

* ९३ प्रश्नः–पांचज्ञानइंद्रिय औ मन कौन हैं ?

उत्तरः–ये पूर्व सूक्ष्मदेहकी प्रक्रियाविषै कहेहैं ॥

* ९४ प्रश्नः–मन कैसा है ?

उत्तरः–देहविषै अहंता औ गृहादिकविषै ममतारूप अभिमानकूं करताहुवा इंद्रियद्वारा बाहीर गमन करताहुवा कारणरूप है ॥

* ९५ प्रश्नः—मनोमयकोशतें मैं न्यारा हूं। यह किसरीतिसें जानना ?

उत्तरः—

१ कामक्रोधादिवृत्तियुक्त होनेंतें मन नियमरहित-स्वभाववाला है तातें विकारी है। औ

२ मैं सर्ववृत्तिनका साक्षी निर्विकार हूं।

यातें यह मनोमयकोश मैं नहीं औ मेरा नहीं। यह सूक्ष्मदेहरूप है। मैं इसका जाननेंहारा आत्मा इसतें न्यारा हूं॥ इसरीतिसें मनोमय-कोशतें मैं न्यारा हूं। यह जानना॥

* ९६ प्रश्नः—४ विज्ञानमयकोश सो क्या है ?

उत्तरः—पांचज्ञानइंद्रियसहित बुद्धि है। सो विज्ञानमयकोश है॥

* ९७ प्रश्नः—ज्ञानइंद्रिय औ बुद्धि कौन है ?

उत्तरः—ये पूर्व लिंगदेहकी प्रक्रियाविषै कहेहैं॥

* ९८ प्रश्नः—बुद्धि कैसी है ?

उत्तरः—

१ सुषुप्तिविषै चिदाभासयुक्त बुद्धि विलीन होवैहै । औ

२ जाग्रत्‌विषै नखके अग्रभागसैं लेके शिखा-पर्यंत शरीरविषै व्यापिके वर्त्तीहुयी कर्त्ता-रूप है ॥

* ९९ प्रश्नः—विज्ञानमयकोशतैं मैं न्यारा हूं । यह कैसैं जानना ?

उत्तरः—

१ बुद्धि । घटादिककी न्यांई विलयआदिअवस्था-वाली होनैतैं विनाशी है । औ

२ मैं विलयआदिअवस्थारहित होनैतैं इसतैं विलक्षण अविनाशी हूं ।

यातैं यह विज्ञानमयकोश मैं नहीं औ मेरा नहीं । यह सूक्ष्मदेहरूप है । मैं इसका जाननै-

हारा आत्मा इसतैं न्यारा हूं ॥ इसरीतिसैं विज्ञानमयकोशतैं मैं न्यारा हूं ॥ यह जानना ॥

* १०० प्रश्नः—५ आनंदमयकोश सो क्या है ?

उत्तरः—

१ पुण्यकर्मफलके अनुभवकालविषै कदाचित् बुद्धिकी वृत्ति अंतर्मुख हुयी आत्मस्वरूपभूत आनंदके प्रतिबिंबकूं भजतीहै । औ

॥ ६४ ॥

१ जैसैं दीपकका प्रकाश औ आकाश अभिन्न प्रतीत होवैहैं । तौ वी भिन्न है । औ

२ जैसैं तप्तलोहविषै अग्नि औ लोह अभिन्न प्रतीत होवैहैं । तौ वी भिन्न हैं ।

तैसैं अंतःकरण औ आत्मा अभिन्न प्रतीत होवैहैं तौ वी भिन्न हैं । काहेतैं सुषुप्तिविषै अंतःकरणके लय हुवे आत्माकूं अज्ञानका साक्षी होनैकरि प्रतीयमान होनैतैं ॥

२ जो प्रिय मोद प्रमोदरूप कहियेहै ।

३ सोई वृत्ति पुण्यकर्मफलके भोगकी निवृत्तिके हुये निद्रारूपसैं विलीन होवैहै ।

सो वृत्ति **आनंदमयकोश** है ॥

* **१०१ प्रश्नः—आनंदमयकोश कैसा है ?**

उत्तरः—

१ इष्टवस्तुके दर्शनसैं उत्पन्न **प्रियवृत्ति** जिसका **शिर** है । औ

२ इष्टवस्तुके लाभतैं उत्पन्न **मोदवृत्ति** जिसका **एक** (दक्षिण) **पक्ष** है । औ

३ इष्टवस्तुके भोगसैं उत्पन्न **प्रमोदवृत्ति** जिसका **द्वितीय** (वाम) **पक्ष** है । औ

४ बुद्धि वा अज्ञानकी वृत्तिविषै आत्मस्वरूपभूत आनंदका प्रतिबिंब जिसका **स्वरूप** है । औ

५ चिद्रूप आत्माका स्वरूपभूत आनंद जिसका पुच्छ[६५] (आधार) है ।

ऐसा पक्षीरूप भोक्ता आनंदमयकोश[६६] है ॥

* १०२ प्रश्नः—आनंदमयकोशतैं मैं न्यारा हूं । यह किसरीतिसैं जानना ?

उत्तरः—

१ आनंदमयकोश बादलआदिकपदार्थनकी न्यांई कदाचित् होनैवाला है । यातैं क्षणिक है । औ

२ मैं सर्वदा स्थित होनैतैं नित्य हूं ।

॥ ६५ ॥ ब्रह्मरूप आनंद आधार होनैतैं तैत्तिरीय-श्रुतिविषै पुच्छशब्दकरि कह्याहै ॥

॥ ६६ ॥ ऐसैं अन्नमयादिकोशनकी पक्षीरूपता अस्मदादिकृत तैत्तिरीयउपनिषद्की भाषाटीकाविषै सविस्तर लिखीहै । जाकूं इच्छा होवै सो तहां देखलेवै ॥

यातैं यह आनंदमयकोश मैं नहीं औ मेरा नहीं। यह कारणदेहरूप है। मैं इसका जाननैहारा आत्मा इसतैं न्यारा हूं ॥ इसरीतिसैं आनंदमय-कोशतैं मैं न्यारा हूं। यह जानना ॥

* १०३ प्रश्नः–विद्यमानअन्नमयादिकोश जब आत्मा नहीं। तब कौन आत्मा है ?

उत्तरः–

१ बुद्धिआदिकविषै प्रतिबिंबरूपकरि स्थित। औ

२ प्रियआदिकशब्दसैं कहियेहै।

ऐसा जो आनंदमयकोश है। तिसका बिंबरूप कारण जो आनंद है। सो नित्य होनैतैं आत्मा है॥

* १०४ प्रश्नः–पांचकोश जे हैं वेहीं अनुभवविषै आवतेहैं। तिनतैं न्यारा कोई आत्मा अनुभवविषै आवता नहीं। यातैं पांचकोशतैं न्यारा आत्मा है। यह निश्चय कैसैं होवै ?

उत्तरः—यद्यपि पांचकोशहीं अनुभवविषै आवतेहैं। इनतैं न्यारा कोई आत्मा अनुभवविषै आवता नहीं। यह वार्त्ता सत्य है। तथापि जिस अनुभवतैं ये पांचकोश जानियेहैं। तिस अनुभवकूं कौन निवारण करैगा? कोई बी निवारण करिशके नहीं॥ यातैं पांचकोशनका अनुभवरूप जो चैतन्य है। सो पांचकोशनतैं न्यारा आत्मा है॥

* १०५ प्रश्नः—आत्मा कैसा है?

उत्तरः—सत् चित् आनंद आदि स्वरूप है॥

इति श्रीविचारचंद्रोदये पंचकोशातीतवर्णननामिका चतुर्थकला समाप्ता॥ ४॥

॥ अथ पंचमकला प्रारंभः ॥ ५ ॥

॥ तीनअवस्थाका मैं साक्षी हूं ॥

॥ मनहर छंद ॥

अवस्था तीनको साक्षी आतमा अँन्वय याको
व्यभिचारीअवस्थाको व्यँतिरेक पाईयो ॥
त्रिपुटी चतुरदश करि व्यवहार जहां ।
स्पष्ट सो जाग्रत् जूठ ताकूं दृश्य ध्याईयो ॥
देखे सुने वस्तुनके संस्कारसैं सृष्टि जहां ।
अस्पष्टप्रतीति स्वप्न मृषा लोक गाईयो ॥
सकलकरण लय होय जँहां सुषुप्ति सो ।
पीतांबर तुरीयहीं प्रँत्यक प्रँत्याईयो ॥ ५ ॥

* १०६ प्रश्नः–तीनअवस्था कौनसी हैं ?

उत्तरः–१ जाँग्रत् । २ स्वँप्न । औ ३ सुँषुप्ति । ये तीनअवस्था हैं ॥

॥ ६७ ॥ या (आत्मा) को अन्वय कहिये पुष्पमालामैं सूत्रकी न्यांई तीनअवस्थामैं अनस्यूतपना है। यह अर्थ है ॥

॥ ६८ ॥ पुष्पनकी न्यांई तीनअवस्थाका परस्पर औ अधिष्ठानतैं भेद ॥

॥ ६९ ॥ पदयोजनाः—जहां सकलकरण लय होय । सो सुषुप्ति है ॥

॥ ७० ॥ अंतरात्मा ॥ ७१ ॥ निश्चय कीयो ॥

॥ ७२ ॥ स्वप्न औ सुषुप्तितैं भिन्न इंद्रियजन्यज्ञानका औ इंद्रियजन्यज्ञानके संस्कारका आधारकाल । सो **जाग्रत्‌अवस्था** कहियेहै ॥

॥ ७३ ॥ इंद्रियनैं अजन्य । विषयगोचर अंतःकरणकी अपरोक्षवृत्तिका काल । **स्वप्नअवस्था** कहियेहै ॥

॥ ७४ ॥ सुखगोचर औ अविद्यागोचर अविद्याकी वृत्तिका काल । **सुषुप्तिअवस्था** कहियेहै ॥

॥ १ ॥ जाग्रत्‌अवस्थाका मैं साक्षी हूं ॥

* १०७ प्रश्नः–जाग्रत्‌अवस्था सो क्या है ?

उत्तरः–

१ चौदाइंद्रिय अध्यात्म हैं ॥

२ तिनके चौदादेवता अधिदैव हैं ॥

३ तिनके चौदाविषय अधिभूत हैं ॥

इन बेचालीसतत्त्वनसैं जिसविषै व्यवहार होवै । सो जाग्रत्‌अवस्था है ॥

॥ ७५ ॥ आत्माकूं आश्रयकरिके वर्त्तमान जे इंद्रियादिक । वे अध्यात्म कहियेहैं ॥

॥ ७६ ॥ स्वसंघातसैं भिन्न होवै औ चक्षुइंद्रियका अविषय होवै । सो अधिदैव कहियेहैं ॥

॥ ७७ ॥ स्वसंघातसैं भिन्न होवै औ चक्षुआदि-इंद्रियका विषय होवै । सो अधिभूत कहियेहैं ॥

॥ ७८ ॥ यह स्थूलदृष्टिवाले. पुरुषनकूं जाननै योग्य जाग्रत्‌का लक्षण है । तैसैंहीं स्वप्नसुषुप्तिविषै बी जानना॥

१०८ प्रश्नः–चौदाइंद्रिय कौनसी हैं ?

उत्तरः—

–५ ज्ञानइंद्रिय पांचः–१ श्रोत्र । २ त्वचा । ३ चक्षु । ४ जिव्हा । औ ५ घ्राण ॥

–१० कर्मइंद्रिय पांचः—६ वाक् । ७ पाणि । ८ पाद । ९ उपस्थ । औ १० गुद ॥

१–१४ अंतःकरण च्यारीः–११ मन । १२ बुद्धि । १३ चित्त । औ १४ अहंकार ॥

चौदाइंद्रिय अध्यात्म हैं ॥

१०९ प्रश्नः–चौदाइंद्रियनके चौदादेवता कौनसे हैं ?

उत्तरः—

१–५ ज्ञानइंद्रिय पांचके देवताः—

(१) श्रोत्रइंद्रियका देवता । दिशाँ ॥

(२) त्वचाइंद्रियका देवता । वायु ॥

(३) चक्षुइंद्रियका देवता । सूर्य ॥

दिग्भाग ॥

(४) जिव्हाइंद्रियका देवता । वरुण ॥
(५) घ्राणइंद्रियका देवता । अश्विनीकुमार ॥

६–१० कर्मइंद्रिय पांचके देवताः—

(६) वाक्इंद्रियका देवता । अग्नि ॥
(७) हस्तइंद्रियका देवता । इंद्र ॥
(८) पादइंद्रियका देवता । वामनजी ॥
(९) उपस्थइंद्रियका देवता । प्रजापति ॥
(१०) गुदइंद्रियका देवता । यम ॥

११–१४ अंतःकरण च्यारीके देवताः—

(११) मनइंद्रियका देवता । चंद्रमा ॥
(१२) बुद्धिइंद्रियका देवता । ब्रह्मा ॥
(१३) चित्तइंद्रियका देवता । वासुदेव ॥
(१४) अहंकारइंद्रियका देवता । रुद्र ॥

ये चौदादेवता अधिदैव हैं ॥

॥ ७९ ॥ अंतरिंद्रियरूप अंतःकरण ॥

* ११० प्रश्नः–चौदाइंद्रियनके चौदाविषय कौनसें हैं ?

उत्तरः–

१–५ ज्ञानइंद्रिय पांचके विषयः—
१ शब्द । २ स्पर्श । ३ रूप । ४ रस । ५ गंध ॥

६–१० कर्मइंद्रिय पांचके विषयः—
६ वचन । ७ आदान । ८ गमन । ९ रति-भोग । १० मलत्याग ॥

११–१४ अंतःकरण च्यारीके विषयः—
११ संकल्पविकल्प । १२ निश्चय । १३ चिंतन । १४ अहंपना ॥

ये चौदाविषय अधिभूत हैं ॥

॥ ८० ॥ मनका संकल्पविकल्प विषय नहीं । किंतु जिस वस्तुका संकल्प होवै । सो वस्तु विषय है ॥ तैसैंहीं बुद्धि चित्त अहंकार औ कर्मइंद्रियनविषै बी जानना ॥

* १११ प्रश्नः–अध्यात्म अधिदैव अधिभूत । ये तीनतीन मिलिके क्या कहियेहैं ?

उत्तरः–अध्यात्मादितीन–पुट (आकार) मिलिके त्रिपुटी कहियेहैं ॥

* ११२ प्रश्नः–चौदात्रिपुटी किसरीतिसैं जाननी ?

उत्तरः–

१–५ ज्ञानइंद्रियनकी त्रिपुटी ॥

इंद्रिय —	देवता —	विषय—
अध्यात्म ॥	अधिदैव ॥	अधिभूत ॥
(१) श्रोत्र ।	दिशा ।	शब्द ॥
(२) त्वचा ।	वायु ।	स्पर्श ॥
(३) चक्षु ।	सूर्य ।	रूप ॥
(४) जिव्हा ।	वरुण ।	रस ॥
(५) घ्राण ।	अश्विनीकुमार ।	गंध ॥

६–१० ॥ कर्मइंद्रियनकी त्रिपुटी ॥

इंद्रिय —	देवता —	विषय—
अध्यात्म ॥	अधिदैव ॥	अधिभूत ॥
(६) वाक् ।	अग्नि ।	वचन (क्रिया) ॥
(७) हस्त ।	इंद्र ।	लेना देना ॥
(८) पाद ।	वामनजी ।	गमन ॥
(९) उपस्थ ।	प्रजापति ।	रतिभोग ॥
(१०) गुद ।	यम ।	मलत्याग ॥

११–१४ ॥ अंतःकरण ४ की त्रिपुटी ॥

(११) मन ।	चंद्रमा ।	संकल्पविकल्प॥
(१२) बुद्धि ।	ब्रह्मा ।	निश्चय ॥
(१३) चित्त ।	वासुदेव ।	चिंतन ॥
(१४) अहंकार ।	रुद्र ।	अहंपना ॥

इसरीतिसैं चौदात्रिपुटी जाननी ॥

*** ११३ प्रश्नः—इन त्रिपुटीनका क्या स्वभाव है ?**

उत्तरः—तीनतीनपदार्थनकी जे त्रिपुटी हैं । तिनमेंसें एक न होवै तो तिसतिसका व्यवहार न चले । जैसें

१ इंद्रिय औ देवता होवै अरु तिसका विषय न होवै तौ वी व्यवहार न चले ।

२ विषय औ इंद्रिय होवै अरु देवता न होवै तौ बी व्यवहार न चले ।

ऐसें सर्व त्रिपुटीनविषै जानना ॥

*** ११४ प्रश्नः—मेरा क्या स्वभाव है । यह कैसें जानना ?**

उत्तरः—

१ त्रिपुटी पूर्ण होवै तिसकूं वी मैं जानताहूं । औ

२ त्रिपुटी अपूर्ण होवै तिसकूं बी मैं जानताहूं ।

३ तैसें त्रिपुटीसें व्यवहार चले तिसकूं बी मैं जानताहूं । औ

४ व्यवहार न चलै तिसकूं वी मैं जानताहूं। ऐसा मेरा स्वभाव है। यह जानना ॥

* ११५ प्रश्नः-इस कथनसैं क्या सिद्ध भया ?

उत्तरः—त्रिपुटीसैं जिसविषै व्यवहार चलता है ऐसी जाग्रत्अवस्था है। यह सिद्ध भया ॥

* ११६ प्रश्नः-जाग्रत्अवस्थाविषै जीवका स्थान वाचा भोग शक्ति गुण औ जाग्रत्के अभिमानसैं तिस (जीव) का नाम क्या है ?

उत्तरः—जाग्रत्अवस्थाविषै जीवका

१ नेत्र स्थान है।

२ वैखरी वाचा है।

॥ ८१ ॥ यद्यपि जाग्रत्विषै इस चिदाभासरूप जीवकी नखसैं लेके शिखापर्यंत सारेदेहविषै व्याप्ति है। तथापि मुख्यताकरिके सो नेत्रविषै रहताहै। यातैं ताका नेत्र स्थान कहियेहै ॥

३ स्थूल भोग है ।

४ क्रिया शक्ति है ।

५ रजो गुण है । औ

६ जाग्रत्के अभिमानसें विश्व नाम है ॥

*११७ प्रश्नः—जाग्रत्अवस्थाके कहनेसें क्या सिद्ध भया ?

उत्तरः—

१ यह जाग्रत्अवस्था होवै तिसकूं बी मैं जानताहूं । औ

२ स्वप्नसुषुप्तिविषे न होवै तब तिसके अभावकूं बी मैं जानताहूं ।

यातैं जाग्रत्अवस्था मैं नहीं औ मेरी नहीं । यह स्थूलदेहकी है । मैं इसका जाननैहारा साक्षी घटसाक्षीकी न्यांई इसतैं न्यारा हूं ।

इसरीतिसैं जाग्रत्अवस्थाका मैं साक्षी हूं ॥

॥ २ ॥ स्वप्नअवस्थाका मैं साक्षी हूं ॥

* ११८ प्रश्नः-स्वप्नअवस्था सो क्या है?

उत्तरः—जाग्रत्अवस्थाविषे जो पदार्थ देखेहोवैं । सुनेहोवैं । भोगेहोवैं । तिनका संस्कार बालके हजारवें भाग जैसी बारीक हितानामक नाडी जो कंठविषे है तिसविषे रहताहै। तिससैं निद्राकालमैं पांचविषयआदिकपदार्थ औ तिनका ज्ञान उपजताहै । तिनसैं जिसविषे व्यवहार होवै । सो स्वप्नअवस्था है ॥

* ११९ प्रश्नः—स्वप्नअवस्थाविषे जीवका स्थान वाचा भोग शक्ति गुण औ स्वप्नके अभिमानसैं तिस (जीव) का नाम क्या है ?

उत्तरः—स्वप्नअवस्थाविषे जीवका

१ कंठ स्थान है ।

२ मध्यमा वाचा है ।

३ सूक्ष्म (वासनामय) भोग है ।

४ ज्ञान शक्ति है ।

५ सत्व गुण है । औ

६ स्वप्नके अभिमानसैं तैजस नाम है ॥

*१२० प्रश्नः—स्वप्नअवस्थाके कहनैसैं क्या सिद्ध भया ?

उत्तरः—

१ स्वप्नअवस्था होवै तिसकूं वी मैं जानताहूं । औ

२ जाग्रत्सुषुप्तिविषै न होवै तब तिसके अभावकूं वी मैं जानताहूं ।

यातैं यह स्वप्नअवस्था मैं नहीं औ मेरी नहीं यह सूक्ष्मदेहकी है । मैं इसका जाननैहारा साक्षी घटसाक्षीकी न्यांई इसतैं न्यारा हूं । यह स्वप्नके कहनैसैं सिद्ध भया ॥

इसरीतिसैं स्वप्नअवस्थाका मैं साक्षी हूं ।

॥ ८२ ॥ कितनेक रजोगुण बी कहतेहैं ॥

॥ ३ ॥ सुषुप्तिअवस्थाका मैं साक्षी हूं ॥

* **१२१ प्रश्नः**—सुषुप्तिअवस्था सो क्या है ?

उत्तरः—पुरुष जब निद्रासैं जागिके उठे तब सुषुप्तिविषै अनुभव किये सुख औ अज्ञानका स्मरणकरिके कहताहै । जो "आज मैं सुखसैं सोयाथा औ कछु बी न जानताभया" यह सुख औ अज्ञानका प्रकाश साक्षीचेतनरूप अनुभवसैं जिसविषै होवैहै । ऐसी जो बुद्धिकी विलयअवस्था । सो सुषुप्तिअवस्था है ॥

* **१२२ प्रश्नः**—सुषुप्तिअवस्थाविषै जीवका स्थान वाचा भोग शक्ति गुण औ सुषुप्तिके अभिमानसैं तिस (जीव) का नाम क्या है ?

उत्तरः—सुषुप्तिअवस्थाविषै जीवका

१ हृदय स्थान है ।

२ पश्यंती वाचा है ।

३ आनंद भोग है ।

४ द्रव्य **शक्ति** है ।

५ तमो **गुण** है । औ

६ सुषुप्तिके अभिमानसैं **प्राज्ञ** नाम है ॥

* **१२३ प्रश्नः–सुषुप्तिअवस्थाविषै दृष्टांत क्या है ?**

उत्तरः–प्रथमदृष्टांत–(१) जैसैं कोईका भूषण कूपविषै गिऱ्याहोवै तिसके निकासनैकूं कोई तारूपुरुष कूपविषै गिरे । सो पुरुष भूषण मिले तिसकूं बी जानताहै औ भूषण न मिले तिसकूं बी जानताहै । (२) परंतु कहनैका साधन जो वाक्‌इंद्रिय है तिसके देवता अग्निका जलके साथि विरोध होनैतैं तिरोधान होवैहैं । यातैं कहता नहीं । औ (३) जब पुरुष जलसैं बाहीर निकसै तब कहनैका साधन देवतासहित वाक्‌इंद्रिय है । यातैं भूषण मिल्या अथवा न मिल्या सो कहताहै ॥

सिद्धांतः—तैसैं (१) सुषुप्तिअवस्थाविषै सुख औ अज्ञानका साक्षीचेतनरूप सामान्यज्ञान है। (२) परंतु विशेषज्ञानके साधन जे इंद्रिय औ अंतःकरण तिनका तब अभाव है। यातैं सुख औ अज्ञानका विशेषज्ञान होता नहीं। (३) जब पुरुष जागताहै तब विशेषज्ञानके साधन इंद्रिय औ अंतःकरण होवैहैं। यातैं सुषुप्तिविषै अनुभवकिये सुख औ अज्ञानका स्मृतिरूप विशेषज्ञान होवैहै ॥

द्वितीयदृष्टांतः—जैसैं (१) आतपविषै पिगल्या घृत होवै। (२) सो छायाविषै स्थित होवै तौ गट्ठारूप होवैहै। (३) फेर आतपविषै स्थित होवै तौ पिगळताहै ॥

सिद्धांतः—तैसैं (१) सुषुप्तिविषै कारणशरीररूप अज्ञान है। (२) सो जाग्रत्स्वप्नविषै बुद्धिरूप होवैहै। (३) फेर सुषुप्तिविषै अज्ञानरूप होवैहै ॥

तृतीयदृष्टांतः—जैसें (१) कोई बालक लड़कनके साथि खेल करनैकूं जावै । (२) सो जब श्रमकूं पावै तब माताके गोदमैं सोयके गृहके सुखका अनुभव करताहै । (३) फेर जब लडके बुलावैं तब बाहीर जायके खेलकूं करताहै ॥

सिद्धांतः—तैसें (१) कारणशरीर जो अज्ञान तिसरूप माता है । तिसका बुद्धिरूप बालक कर्म-रूप लडकनके साथि जाग्रत्स्वप्नरूप बहिर्भूमि-विषै व्यवहाररूप खेलकूं करताहै । (२) जब विक्षेपरूप श्रमकूं पावै । सुषुप्तिअवस्था-रूप गृहविषै अज्ञानरूप मातामैं लीन होयके ब्रह्मानंदका अनुभव करताहै । (३) फेर जब कर्मरूप लडके बुलावैं तब जाग्रत्स्वप्नरूप बहि-र्भूमिविषै व्यवहाररूप खेलकूं करताहै ॥

चतुर्थदृष्टांतः—जैसें (१) समुद्रजलकरि पूर्ण घटकूं (२) गलेमैं रस्सी बांधिके समुद्रविषै

लीन करैं (३) तब घटविषै स्थित जल समुद्रके जलसैं एकताकूं पावता है। (४) तौ बी घट-रूप उपाधिकरि भिन्नकी न्यांई है (५) फेर जब रस्सीकूं खीचीयें तब भेदकूं पावता है। (६) परंतु जलसहित घट औ समुद्रका आधार जो आकाश सो भिन्न होता नहीं। (७) किंतु तीनकालविषै एकरस है॥

सिद्धांतः—तैसैं (१) अज्ञानरूप समुद्र-जलकरि पूर्ण जो लिंगदेहरूप घट है। (२) सो अदृष्टरूप रस्सीसैं बांध्याहुया सुषुप्तिकालविषै औ तिसके अवांतरभेदरूप मरण मूर्छा अरु प्रलयकालविषै समष्टिअज्ञानरूप ईश्वरकी उपाधि मायाविषै लीन होवैहै। (३) तब सो व्यष्टि-अज्ञानरूप जीवकी उपाधि अविद्या। समष्टि-अज्ञानसैं एकताकूं पावैहै। (४) तौ बी लिंग-शरीरके संस्काररूप उपाधिकरि भिन्नकी न्यांई है।

(५) फेर जब अदृष्टरूप रस्सीकूं अंतर्यामी प्रेरता-है । तब भेदकूं पावैहै । (६) परंतु व्यष्टिअज्ञानरूप जलसहित लिंगदेहरूप घट औ समष्टिअज्ञानरूप समुद्रका आधार जो चिदाकाश सो भिन्न होता नहीं । (७) किंतु तीनकालविषे एकरस है ॥

* **१२४ प्रश्नः–सुषुप्तिके कहनैसैं क्या सिद्ध भया ?**

उत्तरः—

१ सुषुप्तिअवस्था होवै तिसकूं बी मैं जानताहूं । औ
२ जाग्रत्स्वप्नविषे यह न होवै तब तिसके अभावकूं बी मैं जानताहूं ।

थातैं यह सुषुप्तिअवस्था मैं नहीं औ मेरी नहीं । यह कारणदेहकी है । मैं इसका जाननैहारा साक्षी घटसाक्षीकी न्यांई इसतैं न्यारा हूं ॥

इसरीतिसैं सुषुप्तिअवस्थाका मैं साक्षी हूं ॥

इति श्रीविचारचंद्रोदये अवस्थात्रयसाक्षी-वर्णननामिका पंचमकला समाप्ता ॥ ५ ॥

॥ अथ षष्ठकलाप्रारंभः ॥ ६ ॥

॥ प्रपंचमिथ्यात्ववर्णन ॥

॥ ललित छंदः ॥

सकलदृश्य सो–ऽध्यास छोडना ।
जगअधारमैं चित्त जोडना ॥
त्रयदशाहि जो जाग्रदादि हैं ।
सबप्रपंच सो भिन्न नाहिं हैं ॥ ६ ॥

रजत आदि हैं सीपिमैं यथा ।
त्रयदशा सु हैं ब्रह्ममैं तथा ॥
रजतआदिवत् दृश्य ये मृषा ।
शुगतिकादिवत् ब्रह्म अमृषा ॥ ७ ॥

व्यभिचरैं मिथो रजतआदि ज्यों ।
इनहिकी मिथो व्यावृती जु त्यों ॥
शुगति सूत्रवत् अनुग एक जो ।
अनुवृतीयुतो ब्रह्म आप सो ॥ ८ ॥

शुगतिकामहीं तीनें[11]अंश ज्यूं ।
अजडब्रह्ममैं तीनअंश त्यूं ॥
उ[12]भयअंशकूं सत्य जानिले ।
त्रि[13]तिय त्यागदे मोक्ष तौ मिले ॥ ९ ॥
भिदें[14]भ्रमादि जो पंचधा[15]भवं ।
त्रिविधतापता तप्त सो द[16]वं ॥
प[17]रशु पंचधा—युक्तियों करी ।
करि विचार तूं छेद ना डरी ॥ १० ॥
नहि जु जाहिमैं तीनकालमैं ।
तहँहि भान व्है मध्यकालमैं ॥
शुगति रौप्यवत् ध्यास सो भ्रमं ।
अ[18]रथ ज्ञान दो—भांतिका क्रमं ॥ ११ ॥
द्विविधें[19]वेम है ज्ञान अर्थको ।
अ[20]रंथभ्रांति वा षड्विधा बको ॥
सकलध्यास जे जगतमैं द[21]ूसे ।
सबसु याहिक बीचमैं [22]धंसे ॥ १२ ॥

निज चिदात्मकूं ब्रह्म जानिके ।
सकलवेमको मूंल भानिके ॥
पेंरंमपमोदकूं आप बूजिले ।
इहहि मुक्ति पीतांवरो मिले ॥ १२ ॥

॥ ८३ ॥ श्रीमद्भागवतके दशमस्कंधके एकतीसवें अध्यायगत गोपिकागीतकी न्यांई यह छंद है ॥

॥ ८४ ॥ तीनअवस्था ॥

॥ ८५ ॥ सत्य ॥ ॥ ८६ ॥ परस्पर ॥

॥ ८७ ॥ इहां आदिशब्दकरि भोडल (अवरख) औ कागजका ग्रहण है ॥

॥ ८८ ॥ भेद कहिये अन्योन्याभाव ॥

॥ ८९ ॥ पुष्पमालामें सूत्रकी न्यांई ॥

॥ ९० ॥ अनुस्यूतताकरि युक्त ॥

॥ ९१ ॥ सामान्य । विशेष । कल्पितविशेष । ये तीनअंश हैं ॥

॥ ९२ ॥ सामान्य औ विशेष । इन दोअंशनकूं ॥

॥ ९३ ॥ तृतीय कल्पितअंशकूं ॥

॥ ९४ ॥ भेदभ्रांतिसैं आदिलेके ॥ इहां आदि-शब्दकरि कर्त्ताभोक्तापनैकी भ्रांति । संगभ्रांति । विकारभ्रांति । ब्रह्मतैं भिन्न जगत्के सत्यताकी भ्रांति । इन च्यारीभ्रांतिनका ग्रहण है ॥

॥ ९५ ॥ पांचप्रकारका संसार है ॥ ९६ ॥ वन है ।

॥ ९७ ॥ अन्वयः—पंचधा कहिये पांचप्रकारकी युक्तियां कहिये दृष्टांतरूप परशु कहिये कुठारकरि ॥

॥ ९८ ॥ अन्वयः—सो भ्रम कहिये अध्यास । अरथ कहिये अर्थाध्यास औ ज्ञान कहिये ज्ञानाध्यास । या क्रमसैं दोभांतिका है ॥

॥ ९९ ॥ अन्वयः—ज्ञान कहिये ज्ञानाध्यास औ अर्थ कहिये अर्थाध्यास । तिनको वेम कहिये अध्यास । प्रत्येक काहिये एक एक द्विविध है ॥

॥ १०० ॥ वा अरथभ्रांति कहिये अर्थाध्यास । षड्विधा कहिये षट्प्रकारको । वको नाम कहो ॥

॥ १०१ ॥ दिखाये ॥

॥ १०२ प्रवेशकूं पायेहैं ॥ ॥ १०३ ॥ अज्ञान ॥

॥ १०४ ॥ परमानंदरूप ब्रह्मकूं आत्मा जानीले ॥

* १२५ प्रश्नः–आत्माविषै तीनअवस्था किसकी न्यांई भासती हैं ?

उत्तरः–दृष्टांतः–जैसैं सीपीविषै रूपा अथवा भोडल (अभ्रक) अथवा कागज । ये तीन सीपीके अज्ञानसैं कल्पित भासतेहैं । तिन तीनवस्तुनका

१ परस्पर वा सीपीके साथि **व्यतिरेक** है । औ
२ सीपीका तीनवस्तुनविषै **अन्वय** है ॥

जैसैं किः–

१ (१) सीपीविषै जब रूपा भासै तब भोडल औ कागज भासता नहीं । औ

(२) जब भोडल भासै तब रूपा औ कागज भासता नहीं । औ

(३) जब कागज भासै तब रूपा औ भोडल भासता नहीं । यह तीनवस्तुनका परस्पर व्यतिरेक है ॥ सीपीविषै आदिमध्यअंतमें इन तीनवस्तुनका व्यावहारिक औ पारमार्थिक अत्यंत-अभाव है । यह सीपीविषै बी तिन तीनवस्तुनका व्यतिरेक है । औ

२ भ्रांतिकालविषै

(१) "यह रूपा है"

(२) "यह भोडल है"

(३) "यह कागज है"

इसरीतिसैं सीपीका इदंअंश तिन तीनवस्तुनविषै अनुस्यूत भासताहै । यह तिन तीनवस्तुनविषै सीपीका अन्वय है ॥

इहां सीपीके तीनअंश हैं:—१ सामान्यअंश । २ विशेषअंश । ३ कल्पितविशेषअंश ॥

१ इदंपना सामान्यअंश है काहेतैं । जो अधिक-कालविषै प्रतीत होवै सो **सामान्यअंश** है ॥ इदंपना जातैं

(१) भ्रांतिकालविषै प्रतीत होवैहै । औ

(२) भ्रांतिके अभावकाल विषै बी "यह सीपी है" ऐसैं प्रतीत होवैहै ।

यातैं यह इदंपना **सामान्यअंश** है औ **आधार** बी कहियेहै ॥

२ नीलपृष्ठतीनकोणयुक्त सीपी विशेषअंश है काहेतैं । जो न्यूनकालविषै प्रतीत होवै सो **विशेषअंश** है ॥

(१) भ्रांतिकालविषै इन नीलपृष्ठआदिककी प्रतीति होवै नहीं ।

(२) किंतु इनकी प्रतीतिसैं भ्रांतिकी निवृत्ति होवैहै ।

यातैं यह **विशेषअंश** है। औ **अधिष्ठान** बी कहियेहै ॥

३ रूपाआदिक कल्पितविशेषअंश है काहेतैं । जो अधिष्ठानके ज्ञानकालमैं प्रतीत होवै नहीं । सो **कल्पितविशेषअंश** है ॥ जैसैं

(१) रूपाआदिक । सीपीके अज्ञानकालविषै प्रतीत होवैहैं । औ

(२) सीपीके ज्ञानकालविषै इनकी प्रतीति होवै नहीं ।

(३) वा सीपीसैं व्यभिचारी है ।

यातैं यह **कल्पितविशेषअंश** है। औ **भ्रांति** बी कहियेहै ॥

सिद्धांतः—तैसें अधिष्ठानआत्माविषै जाग्रत् अथवा स्वप्न अथवा सुषुप्ति । ये तीनभ्रांति आत्माके अज्ञानसें होवैहैं । तिनका

१ परस्पर औ अधिष्ठानआत्माके साथि व्यतिरेक[१०५] है । औ

२ आत्माका तिनविषै अन्वय[१०६] है ॥

जैसें किः—

१ (१) जाग्रत् भासैहै तब स्वप्न औ सुषुप्ति भासैनहीं । औ

(२) स्वप्न भासैहै तब जाग्रत् औ सुषुप्ति भासैनहीं । औ

(३) सुषुप्ति भासैहै तब जाग्रत् औ स्वप्न भासैनहीं ।

यह तीनअवस्थाका **परस्परव्यतिरेक** है। औ

॥ १०५ ॥ अभाव वा व्यावृत्ति । सो **व्यतिरेक** है॥

॥ १०६ ॥ भाव वा अनुवृत्ति । सो **अन्वय** है॥

अधिष्ठानविषै इन तीनअवस्थाका पारमार्थिक-अत्यंतअभाव (नित्यनिवृत्ति) है ॥ यह तीन-अवस्थाका अधिष्ठानविषै **व्यतिरेक** है । औ

२ आत्मा इन तीनअवस्थाविषै अनुस्यूत होयके प्रकाशताहै । यह आत्माका तीनअवस्थाविषै **अन्वय** है ।

इहां आत्माके अविद्याउपाधिसैं आरोपित तीनअंश हैं:—१ सामान्यअंश । २ विशेषअंश । ३ कल्पितविशेषअंश ॥

१ सत् ("है" पनै) रूप सामान्यअंश है । काहेतैं

(१) "जाग्रत् है" "स्वप्न है" "सुषुप्ति है" । इसरीतिसैं आत्माका सत्पना भ्रांतिकालविषै बी प्रतीत होवैहै । औ

(२) भ्रांतिकी निवृत्तिकालविषे " मैं सत् हूं । मैं चित् हूं । मैं आनंद हूं । मैं परिपूर्ण हूं । मैं असंग हूं । मैं नित्य-मुक्त हूं । मैं ब्रह्म हूं " । इसरीतिसैं आत्माके सत्पनैकी प्रतीति होवैहै ।

यातैं यह सत्रूप **सामान्यअंश** है औ **आधार** बी कहियेहै ।

२ चेतन आनंद असंग अद्वितीयपनैसैं आदिलेके जे आत्माके विशेषण हैं । सो **विशेषअंश** है । काहेतैं

(१) भ्रांतिकालविषै इनकी प्रतीति होवै नहीं । किन्तु

(२) इनकी प्रतीतिसैं भ्रांतिकी निवृत्ति होवैहै ।

यातैं यह **विशेषअंश** है औ **अधिष्ठान** बी कहियेहै ॥

३ तीनअवस्थारूप प्रपंच कल्पितविशेषअंश है।

काहेतैं

(१) ब्रह्मसैं अभिन्न आत्माके अज्ञानकाल-विषै प्रतीत होवैहै। औ

(२) " मैं ब्रह्म हूं " ऐसैं आत्माके ज्ञानका-लमैं आत्मासैं भिन्न सत् प्रतीत होवै नहीं।

यातैं यह तीनअवस्थारूप प्रपंच **कल्पित-विशेषअंश** है औ **भ्रांति** बी कहियेहै ॥

इसरीतिसैं ये तीनअवस्था आत्माविषै मिथ्या प्रतीत होवैहैं ॥

*** १२६ प्रश्नः–आत्माविषै मिथ्याप्रपंचकी प्रतीतिमैं अन्यदृष्टांत कौनसे हैं ?**

उत्तरः—जैसैं

१ स्थाणुविषै पुरुष प्रतीत होवैहै। औ

२ साक्षीविषै स्वप्न प्रतीत होवैहै । औ

३ मरुभूमिविषै जल प्रतीत होवैहै । औ

४ आकाशविषै नीलता प्रतीत होवैहै । औ

५ रज्जुविषै सर्प प्रतीत होवैहै । औ

६ जलविषै अधोमुखपुरुष वा वृक्ष प्रतीत होवैहै । औ

७ दर्पणविषै नगरी प्रतीत होवैहै ।

सो मिथ्या है ॥

तैसैं आत्माविषै अपने अज्ञानतैं प्रपंच प्रतीत होवैहै । सो मिथ्या है ॥

इस रीतिसैं प्रपंचके मिथ्यापनैका निश्चय करना । सोई प्रपंचका बाध[१०७] है ॥

॥ १०७ ॥ मिथ्यापनैके निश्चयका नाम बाध है । सो शास्त्रीय यौक्तिक औ अपरोक्ष भेदतैं तीनभांतिका है ॥

* १२७ प्रश्नः--भ्रांतिरूप संसार कितनै प्रकारका है ?

उत्तरः—

१ भेद[108]भ्रांति।

२ कर्त्ता[109]भोक्तापनैकी भ्रांति।

३ संग[110]की भ्रांति।

४ विकार[111]की भ्रांति।

५ ब्रह्मसैं भिन्न जगत्के सत्यताकी भ्रांति।

यह पांचप्रकारका भ्रांतिरूप संसार है ॥

* १२८ प्रश्नः--पांचप्रकारके भ्रमकी निवृत्ति किन दृष्टांतनसैं होवैहै ?

उत्तरः—

१ बिंब[112]प्रतिबिंबके दृष्टांतसैं भेदभ्रमकी निवृत्ति होवैहै ॥

॥ १०८ ॥ जीवईश्वरका भेद। जीवनका परस्पर-भेद। जडनका परस्परभेद। जीवजडका भेद। औ जडईश्वरका भेद। यह पांचप्रकारकी भेदभ्रांति है ॥

॥ १०९ ॥ अंतःकरणके धर्म कर्त्तापनैभोक्तापनैकी आत्माविषै प्रतीति होवैहै । यह कर्त्ताभोक्तापनैकी भ्रांति है ॥

॥ ११० ॥ आत्माका देहादिकविषै अहंतारूप औ गृहादिकविषै ममतारूप संबंध है । वा; सजातीय विजातीय स्वगत वस्तुके साथि संबंधकी प्रतीति । सो संगभ्रांति है ।

॥ १११ ॥ दुग्धके विकार दधिकी न्यांई । ब्रह्मका विकार जीव तथा जगत् है । ऐसी जो प्रतीति । सो विकारभ्रांति है ॥

॥ ११२ ॥ सूत्रभाष्यके उपरि पंचपादिकानामक टीका पद्मपादाचार्यनै करीहै । तिस पंचपादिकाका व्याख्यानरूप विवरणनामग्रंथ है । तिसके कर्त्ता श्रीप्रकाशात्मचरणनामआचार्य है । तिसकी रीतिके अनुसार यह उपरि लिख्या बिंबप्रतिबिंबका दृष्टांत है ॥

२ स्फटिकविषै लालवस्त्रके लालरंगकी प्रतीतिके दृष्टांतसैं **कर्त्ताभोक्तापनैकी भ्रांतिकी निवृत्ति** होवैहै ॥

३ घटाकाशके दृष्टांतसैं **संगभ्रांतिकी निवृत्ति** होवैहै ॥

४ रज्जुविषै कल्पितसर्पके दृष्टांतसैं **विकार भ्रांतिकी निवृत्ति** होवैहै ॥

५ कनकविषै कुंडलकी प्रतीतिके दृष्टांतसैं ब्रह्मसैं भिन्न **जगत्के सत्यपनैकी भ्रांतिकी निवृत्ति** होवैहै ॥

*** १२९ प्रश्नः--बिंबप्रतिबिंबके दृष्टांतसैं भेदभ्रांतिकी निवृत्ति किसरीतिसैं होवैहै ?**

उत्तरः—जैसैं (१) दर्पणविषै मुखका प्रतिबिंब भासताहै सो प्रतिबिंब दर्पणविषै नहीं है। किंतु दर्पणकूं देखनैवास्ते निकसी जो नेत्रकी

वृत्ति सो दर्पणकूं स्पर्शकरिके पीछे लौटिके मुखकूंहीं देखतीहै । यातैं बिंब जो मुख तिसके साथि प्रतिबिंब अभिन्न है । तातें प्रतिबिंब मिथ्या नहीं । किंतु सत्य है । औ (२) प्रतिबिंबके धर्म जे बिंबसें भिन्नपना औ दर्पणविषै स्थितपना औ बिंबसें उलटेपना । ये तीन औ तिनकी प्रतीतिरूप ज्ञान सो भ्रांति है ॥ (३) यातैं इन धर्मनको मिथ्यापनैका निश्चयरूप बाध करिके बिंब औ प्रतिबिंबका सदाअभेद निश्चय होवैहै ॥

सिद्धांतः—तैसें (१) शुद्धब्रह्मरूप बिंब है । तिसका अज्ञानरूप दर्पणविषै जीवरूप प्रतिबिंब भासताहै । तिनमैं स्वप्नकी न्यांई एकजीव मुख्य है औ दूसरे स्थावरजंगमरूप नानाजीव भासतेहैं । वे **जीवाभास** हैं ॥ सो

जीवरूप प्रतिबिंब ईश्वररूप बिंबके साथि सदा-अभिन्न हैं ॥ परंतु (२) मायाके बलसैं तिस जीवके धर्म । बिंबरूप ईश्वरसैं भेद । जीवपना । अल्पज्ञपना । अल्पशक्तिपना । परिच्छिन्नपना । नानापना इत्यादि औ तिनकी प्रतीतिरूप ज्ञान । सो भ्रांति है ॥ (३) यातैं तिनका मिथ्यापनैका निश्चयरूप बाधकरिके । जीवरूप प्रतिबिंब औ ईश्वररूप बिंबका सदा अभेद निश्चय होवैहै ॥

इसरीतिसैं बिंबप्रतिबिंबके दृष्टांतसैं भेद[११३]भ्रांति-की निवृत्ति होवैहै ॥

॥ ११३ ॥ मुख्य जीवईश्वरके भेदके निषेधसैं तिसके अंतर्गत च्यारीभेदनका निषेध सहज सिद्ध हो-वैहै ॥ सर्व भेद उपाधिके कियेहैं । उपाधि सर्व मिथ्या हैं । तातैं तिनके किये भेद बी सर्व मिथ्या हैं । यातैं वास्तवअद्वैतब्रह्महीं अवशेष रहताहै ॥

* १३० प्रश्नः—२ स्फटिकविषै लालवस्त्रके लालरंगकी प्रतीतिके दृष्टांतसैं कर्त्ताभोक्तापनैकी भ्रांति किसरीतिसैं निवृत्त होवैहै ?

उत्तरः—जैसैं (१) लालवस्त्रके उपरि धरे स्फाटिकमणिविषै वस्त्रका लालरंग संयोगसंबंधसैं भासताहै। (२) परंतु सो वस्त्रका धर्म है। (३) वस्त्र औ स्फाटिकके वियोगके भये स्फाटिकविषै भासता नहीं। (४) यातैं स्फाटिकका धर्म नहीं है। (५) किंतु स्फाटिकविषै भ्रांतिसैं भासता है॥

सिद्धांतः—तैसैं (१) अंतःकरणका धर्म जो कर्त्ताभोक्तापना सो आत्माविषै तादात्म्यसंबंधसैं भासताहै। (२) परंतु सो अंतःकरणका धर्म है॥ (३) सुषुप्तिविषै अंतःकरण औ

आत्माके वियोगके भये आत्माविषै भासता नहीं। (४) यातैं आत्माका धर्म नहीं है ॥ (५) किंतु आत्माविषै भ्रांतिसैं भासताहै ॥

इसरीतिसैं स्फाटिकविषै लालरंगकी प्रतीतिके दृष्टांतसैं **कर्त्ताभोक्तापनैकी भ्रांतिकी निवृत्ति** होवैहै ॥

*** १३१ प्रश्नः—घटाकाशके दृष्टांतसैं संगभ्रांतिकी निवृत्ति किसरीतिसैं होवैहै ?**

उत्तरः—जैसैं (१) घटउपाधिवाला आकाश घटाकाश कहियेहै। (२) सो आकाश घटके संग भासताहै। (३) तौ बी घटके धर्म उत्पत्तिनाश गमनआगमनआदिक हैं। वे आकाशकूं स्पर्श करते नहीं। (४) यातैं आकाश असंग है। औ (५) आकाशका संबंध घटके साथि भासताहै। सो भ्रांति है ॥

सिद्धांतः—तैसैं (१) देहआदिकसंघात-रूप उपाधिवाला आत्मा **जीव** कहियेहै । (२) सो आत्मा संघातके संग भासताहै । (३) तौ वी संघातके धर्म जन्ममरणादिक हैं । वे आत्मा-कूं स्पर्श करते नहीं । काहेतें संघात दृश्य है औ आत्मा द्रष्टा है । (४) तातें आत्मा-संघातसैं न्यारा असंग है ॥ (५) जातें आत्मा संघातरूप नहीं । तातें आत्माका संघातकैं साथि अहंतारूप संबंध वी नहीं औ जातें आत्माका संघात नहीं । किंतु संघात पंच-महाभूतका है । तातें आत्माका संघातके साथि ममतारूप संबंध वी नहीं ॥ जातें आत्मा संघातसैं न्यारा है । तातें आत्माका संघातके संबंधी स्त्रीपुत्रगृहादिकनके साथि वी ममतारूप संबंध नहीं॥ ऐसैं आत्मा असंग है ॥ इसका संघातके साथि

अहंताममतारूप संबंध भ्रांति है ॥

इसरीतिसैं घटाकाशके दृष्टांतसैं **संगभ्रांतिकी निवृत्ति** होवैहै ॥

*** १३२ प्रश्नः—** रज्जुविषै कल्पितसर्पके दृष्टांतसैं विकारभ्रांतिकी निवृत्ति किसरीतिसैं होवैहै ?

उत्तरः—जैसैं (१) मंदअंधकारविषै रज्जु-स्थित होवै । तिसके देखनै वास्ते नेत्ररूप द्वारसैं अंतःकरणकी वृत्ति निकसै है। सो वृत्ति अंधकारादि दोषसैं रज्जुके आकारकूं पावती नहीं । यातैं तिस वृत्तिसैं रज्जुके आवरणका भंग होवै नहीं । तब रज्जुउपाधिवाले चैतन्यके आश्रित रही जो तूला[११४]अ-विद्या । सो क्षोभकूं पायके सर्परूप विकारकूं धारतीहै ॥ (२) सो सर्प । दुग्धके परिणाम दधिकी न्याांई अविद्याका परिणाम है ।

॥ ११४ ॥ घटादिरूप उपाधिवाले चैतन्यकूं आव-रण करनैवाली जो अविद्या । सो **तूलाअविद्या** है ॥

औ (३) रज्जुउपाधिवाले चैतन्यका विवर्त है । परिणाम (विकार) नहीं ॥

सिद्धांतः—तैसैं (१) ब्रह्मचैतन्यके आश्रित रही जो मूलाअविद्या[115] । सो प्रारब्धादिकनिमित्तसैं क्षोभकूं[116] पायके जड चैतन्य (चिदाभास) प्रपंच-रूप विकारकूं धारतीहै ॥ (२) सो प्रपंच अविद्याका परिणाम[1] है औ (३) अधिष्ठान-ब्रह्मचैतन्यका विवर्त[117] है । परिणाम नहीं ॥

इसरीतिसैं रज्जुविषै कल्पितसर्पके दृष्टांतसैं **विकारभ्रांतिकी निवृत्ति** होवैहै ॥

॥ ११५ ॥ शुद्धब्रह्म औ आत्माकूं आवरण करनै-वाली जो अविद्या । सो **मूलाअविद्या** है ॥

॥ ११६ ॥ कार्य करनैके सनमुख होनैकूं **क्षोभ** कहैहैं ॥

॥११७॥

१ पूर्वरूपकूं त्यागिके अन्यरूपकी प्राप्ति **परिणाम** है ॥

२ वा उपादानके समानसत्तावाला जो अन्यथारूप कहिये उपादानतैं औरप्रकारका आकार सो **परिणाम** है ॥

जैसैं दुग्धका परिणाम दधि है । याहीकूं **विकार** बी कहैहैं ॥

॥ ११८ ॥ जो आप निर्विकाररूपसैं स्थित होवै औ अविद्याकृत कल्पितकार्यका आश्रय होवै । सो **अधिष्ठान** है ॥ जैसैं कल्पितसर्पका अधिष्ठान रज्जु है । याहीकूं परिणामीउपादानसैं विलक्षण दूसरा **विवर्तउपादान** बी कहतेहैं ॥

॥ ११९ ॥ अधिष्ठानतैं विषमसत्तावाला कहिये अल्प अरु भिन्नसत्तावाला जो अधिष्ठानसैं अन्यथारूप नाम औरप्रकारका आकार सो **विवर्त** है ॥ जैसैं रज्जुका विवर्त सर्प है । याहीकूं **कल्पितकार्य** औ **कल्पितविशेष** बी कहतेहैं ॥

* १३३ प्रश्नः—५ कनकविषै कुंडलकी प्रतीतिके दृष्टांतसैं भिन्न जगत्के सत्यताकी भ्रांतिकी निवृत्ति किसरीतिसैं होवैहै ?

उत्तरः—जैसैं (१) कनक औ कुंडलका कार्यकारणभावकरि भेद भासता है सो कल्पित है। औ (२) कनकसैं कुंडलका भिन्नस्वरूप देखीता नहीं । (३) यातैं वास्तवअभेद है। (४) तातैं कनकसैं भिन्न कुंडलकी सत्ता नहीं है ॥

सिद्धांतः—तैसैं (१) ब्रह्म औ जगत्का कार्यकारणभावकरि अरु विशेषणकरि भेद भासता-है सो कल्पित है। औ (२) विचारकरि देखिये तौ अस्तिभातिप्रियसैं भिन्न नामरूपजगत् सत्य

सिद्ध होवै नहीं । किंतु मिथ्या सिद्ध होवैहै औ जो वस्तु जिसविषै कल्पित होवै सो वस्तु तिसतैं भिन्न सिद्ध होवै नहीं । (३) यातैं ब्रह्मसैं जगत्‌का वास्तवअभेद है । (४) तातैं ब्रह्मसैं जगत्‌की भिन्नसत्ता नहीं है ॥

इसरीतिसैं कनकविषै कुंडलकी प्रतीतिके दृष्टांतसैं **ब्रह्मसैं भिन्न जगत्‌के सत्यताकी भ्रांतिकी निवृत्ति** होवैहै ॥

*** १३४ प्रश्नः–भ्रांति सो क्या है ?**

उत्तरः–भ्रांति सो अध्यास है ॥

*** १३५ प्रश्नः–अध्यास सो क्या है ?**

उत्तरः–भ्रांतिज्ञानका विषय जो मिथ्यावस्तु औ भ्रांतिज्ञान । तिसका नाम **अध्यास** है ॥

* १३८ प्रश्नः–यह अध्यास कितनै प्रकारका है ?

उत्तरः–ज्ञानाध्यास औ अर्थाध्यास । इस-भेदतैं **अध्यास दोभांतिका** है ॥ तिनमैं अर्था-ध्यास । केवल[१२०]संबंधाध्यास । संबंधसैं[१२१]हित संबंधीका अध्यास । केवल[१२२]धर्माध्यास । धर्म[१२३]सहित धर्मीका अध्यास । अन्यो[१२४]न्याध्यास । अन्य[१२५]तराध्यास । इस भेदतैं षट्प्रकारका है ॥

अथवा स्व[१२६]रूपाध्यास औ संसर्गाध्या[१२७]स । इस भेदतैं **अर्थाध्यास दोप्रकारका** है ॥

१ ताके अंत[१२८]र्गत उक्तषड्भेद हैं । औ

२. उपरि लिखे भेदभ्रांतिआदिकपांचप्रकारके भ्रम बी याहीके अंत[१२९]र्गत हैं । औ

१ आगे नेडेहीं कहियेगा जो आत्माअनात्माके विशेषणोंका अन्योन्याध्यास सो बी याहीके अंतर्गत है । सो ताके टिप्पणविषे दिखाया-जावैगा ॥

॥ १२० ॥ अनात्माविषै आत्माका अध्यास होवैहै। तहां आत्माका अनात्माके साथि तादात्म्यसंबंध अध्यस्त है। आत्माका स्वरूप नहीं। यातैं अनात्माविषै आत्माका **केवलसंबंधाध्यास** है ॥

॥ १२१ ॥ आत्माविषै अनात्माका संबंध औ स्वरूप दोनूं अध्यस्त हैं। यातैं आत्माविषै अनात्माका **संबंधसहित संबंधीका अध्यास** है।

॥ १२२ ॥ स्थूलदेहके गौरताआदिक औ इंद्रियनके दर्शनआदिकधर्मकाहीं आत्माविषै अध्यास होवैहै। तिनके स्वरूपका नहीं। यातैं आत्माविषै देह औ इंद्रियनके **केवलधर्मका अध्यास** है।

॥ १२३ ॥ अंतःकरणके कर्त्तापनाआदिकधर्म औ स्वरूप दोनूं आत्माविषै अध्यस्त हैं। यातैं अंतःकरणका आत्माविषै **धर्मसहित धर्मीका अध्यास** है।

॥ १२४ ॥ लोह औ अग्निकी न्यांई आत्माविषै अनात्माका औ अनात्माविषै आत्माका जो अध्यास सो **अन्योन्याध्यास** है ॥

॥ १२५ ॥ अनात्माविषै आत्माका स्वरूप अध्यस्त नहीं । किंतु आत्माविषै अनात्माका स्वरूप अध्यस्त है । यहही **अन्यतराध्यास** है ॥ दोनूंमैंसैं एकका अध्यास **अन्यतराध्यास** कहियेहैं ॥

॥ १२६ ॥ ज्ञानसैं बाध होनैयोग्य वस्तु । अधिष्ठानविषै स्वरूपसैं अध्यस्त होवैहै । देहादिअनात्माका अधिष्ठानके ज्ञानसैं बाध होवैहै । यातैं ताका आत्माविषै **स्वरूपाध्यास** है ॥

॥ १२७ ॥ बाधके अयोग्य वस्तुका स्वरूप अध्यस्त होवै नहीं । किंतु ताका संबंध अध्यस्त होवैहै । यातैं अनात्माविषै आत्माका **संसर्गाध्यास** है । याहीकूं **संबंधाध्यास** बी कहैहैं ॥

॥ १२८ ॥ केवलधर्माध्यास । धर्मसहित धर्मीका अध्यास औ अन्यतराध्यास । ये तीन स्वरूपाध्यासके अंतर्गत हैं ॥

· केवलसंबंधाध्यास । संसर्गाध्यासहीं हैं ॥

संबंधसहित संबंधीका अध्यास । संसर्गाध्याससहित स्वरूपाध्यास है ॥

अन्योन्याध्यासमैं संसर्गाध्यास औ स्वरूपाध्यास दोनूं हैं । काहेतें

१ आत्माका स्वरूप तौ सत्य है । यातैं अध्यस्त नहीं । किंतु ताका संसर्ग कहिये तादात्म्यसंबंध अनात्माविषै अध्यस्त है । यातैं ताका **संसर्गाध्यास** है । औ

२ अनात्माका स्वरूपही आत्माविषै अध्यस्त है । यातैं ताका **स्वरूपाध्यास** है ॥

तातैं अन्योन्याध्यास दोनूंके अंतर्गत है ॥

॥ १२९ ॥ भेदभ्रांतिआदिकपांचप्रकारका भ्रम जो पूर्व लिख्याहै । तिनमैं

· संगभ्रांतिकूं छोडिके च्यारिप्रकारका भ्रम । स्वरूपाध्यासके अंतर्गत है । औ

पांचवी संगभ्रांति । संसर्गाध्यासके भीतर है ॥

* १३७ प्रश्नः–अहंकारादिक अनात्माका औ आत्माका अध्यास जाननेमें विशेषउपयोगी अर्थात् सर्वअध्यासोंमें अनुस्यूत कौन अध्यास है?

उत्तरः–अन्योन्याध्यास है ॥

* १३८ प्रश्नः–अन्योन्याध्यास सो क्या है?

उत्तरः–परस्परविषै परस्परके अध्यासका नाम अन्योन्याध्यास है ॥

* १३९ प्रश्नः–आत्मा औ अनात्माका परस्परअध्यास किसरीतिसें है?

उत्तरः–

१–४ सत् चित् आनंद औ अद्वैतपना । ये च्यारीविशेषण आत्माके हैं ॥

१–४ असत् जड दुःख औ द्वैतसहितपना । ये च्यारीविशेषण अनात्माके हैं ॥

तिनमें

॥ १३० ॥ इहां सर्वअध्यासनके स्वरूप औ उदाहरण विस्तारके भयसैं विशेष लिखे नहीं। किंतु संक्षेपसैं लिखेहैं । परंतु अन्योन्याध्यासका स्वरूप तौ विशेषउपयोगी जानिके स्पष्ट दिखायाहै ॥ तामैं

१ **अनात्माके धर्म** दुःख औ द्वैतसहितपना। आत्माके आनंद औ अद्वैतपनैविषै स्वरूपसैं अध्यस्त होयके तिनकूं ढांपे हैं । औ

२ **आत्माके धर्म** सत् अरु चित् । अनात्माके असत्ता औ जडताविषै संसर्ग (संबंध) द्वारा अध्यस्त होयके तिनकूं ढांपैहैं ॥

कार्यसहित अज्ञानसैं जो आवृत्त (ढांप्या) होवै। सो **अधिष्ठान** कहियेहै ॥

इसरीतिसैं आत्माका औ अनात्माका यह अन्योन्याध्यास बी संसर्गाध्यास औ स्वरूपाध्यासके अंतर्गत है ॥

१—२ अनात्माके दुःख औ द्वैतसहितपना। इन दोविशेषणोंनें आत्माके आनंद औ अद्वैतपनेकूं ढांपेहैं। तातें आत्माविषै

(१) "मैं आनंदरूप औ अद्वैतरूप हूं"। ऐसी प्रतीति होवै नहीं।

(२) किंतु "मैं दुःखी औ ईश्वरादिकसैं भिन्न हूं" ऐसी प्रतीति होवैहै ॥

३—४ आत्माके सत् औ चित्। इन दोविशेषणोंनें अनात्माके असत् औ जडपनेकूं ढांपेहैं। तातें अनात्मा जो अहंकारादिक। तिसविषै

(१) "असत् है। अभान (जड) रूप है"। ऐसी प्रतीति होवै नहीं।

(२) किंतु "विद्यमान है औ भासता (चेतन) है"। ऐसी प्रतीति होवैहै ॥

इसरीतिसैं आत्मा औ अनात्माका पर-स्पर[१३१] अध्यास है ॥

इति श्रीविचारचंद्रोदये प्रपंचमिथ्यात्व-वर्णननामिका षष्ठकला समाप्ता ॥ ६ ॥

॥ अथ सप्तमकलाप्रारंभः ॥ ७ ॥

॥ आत्माके विशेषण ॥



॥ इंद्रविजय[१३२] छंद ॥

आत्म विशेषण हैं जु दुभांति ।
विधेय निषेध्य कहों निरधारे ॥
वे[१३३] सब जानि भले गुरु शास्त्र सु ।
सो अपनो निजरूप निहारे ॥

॥ १३१ ॥ ब्रह्म औ ईश्वरका अरु कूटस्थ औ जीवका जो परस्पर अध्यास है । सो आगे ग्यारवीं-कलाविषे कहेंगे ॥

सच्चिदनंद रु ब्रह्म स्वयंपर-
काश कुटस्थ रु साक्षि विचारे ॥
द्रष्ट अरु उपद्रष्ट रु एकाहि ।
आदि विधेय विशेषण धारे ॥ १४ ॥
अंत[134]विहीन अखंड असंग रु ।
अद्वय जन्म[135]विना अविकारे ॥
चारि अकार[136]विना अरु व्यक्त ।
न मानन[137]को विषयो जु निकारे ॥
कर्म करीहि बढै न घटै इस
हेतुहि अव्यय वेद पुकारे ॥
अक्षर नाशविना कहिये इस ।
आदि निषेध्य पीतांबर सारे ॥ १५ ॥

॥ १३२ ॥ द्रुमविजयछंद ठुमरी औ लावनीमैं गाया जावैहै ॥ ॥ १३३ ॥ ये विधेय निषेध्य विशेषण ॥
॥ १३४ ॥ अनंत ॥ ॥ १३५ ॥ अजन्मा ॥
॥ १३६ ॥ निराकार ॥ ॥ १३७ ॥ अप्रमेय ॥

* १४० प्रश्नः—आत्माके विशेषण कितने प्रकारके हैं ?

उत्तरः—आत्माके विशेषण । विधेय[१३८] कहिये साक्षात्बोधक औ निषेध्य[१३९] कहिये प्रपंचके निषेधद्वारा बोधक भेदतैं दोप्रकारके हैं ॥

॥ १३८ ॥ जैसैं "सधवा" शब्द । विधवास्त्रीका निषेध करिके सुवासिनीस्त्रीका साक्षात्बोधक है । तैसैं "सत्" आदिकविधेयविशेषण "असत्" आदिक प्रपंचके विशेषणोंका निषेध करीके सदादिरूप ब्रह्मके साक्षात्बोधक हैं । यातैं "**विधेय**" कहियेहैं ॥

॥ १३९ ॥ जैसैं अविधवाशब्द विधवास्त्रीका निषेध करिके । अर्थात् तातैं विलक्षण सुवासिनीस्त्रीका बोधक है । तैसैं अनंतआदिक जे निषेध्यविशेषण हैं । वे अंतआदिक प्रपंचके धर्मोंका निषेधकरिके अर्थात् तिनतैं विलक्षण ब्रह्मके बोधक हैं । यातैं "**निषेध्य**" कहियेहैं ॥

* १४१ प्रश्नः-आत्माके विधेयविशेषण कौनसैं हैं ?

उत्तरः—१ सत् २ चित् ३ आनंद ४ ब्रह्म ५ स्वयंप्रकाश ६ कूटस्थ ७ साक्षी ८ द्रष्टा ९ उपद्रष्टा १० एक इत्यादिक हैं ॥

* १४२ प्रश्नः—सत् आत्मा कैसें है ?

उत्तरः—१ जिसकी ज्ञानसैं वा और किसीसैं वी निवृत्ति होवै नहीं । सो सत् है ॥

आत्माकी जातैं ज्ञानसैं वा और किसीसैं वी निवृत्ति होवै नहीं । यातैं आत्मा सत् है ॥

* १४३ प्रश्नः—चित् आत्मा कैसें है ?

उत्तरः—२ अलुप्तप्रकाश सो चित् है ॥

आत्मा जातैं अलुप्तप्रकाशरूप है । यातैं आत्मा चित् है ॥

* १४४ प्रश्नः—आनंद आत्मा कैसैं है ?

उत्तरः–३ परम कहिये सर्वसैं अधिक प्रीति-का जो विषय । सो आनंद है ॥

आत्माविषै जातैं सर्वकी परमप्रीति है । यातैं आत्मा आनंद है ॥

* १४५ प्रश्नः—ब्रह्मरूप आत्मा कैसैं है ?

उत्तरः— ४

(१) आत्मा सत्‌चित्‌आनंदरूप श्रुति युक्ति औ अनुभवसैं सिद्ध है । औ

(२) ब्रह्म बी शास्त्र (उपनिषद्) विषै सत्‌चित्‌आनंदरूप कह्याहै ।

तातैं आत्मा ब्रह्मरूप है ॥ किंवा

ब्रह्म नाम व्यापकका है ॥ जिसका देशतैं अंत न होवैं सो व्यापक कहियेहै ॥

(१) आत्मा जो ब्रह्मसैं भिन्न होवै तौ देशतैं अंतवाला होवैगा ।

(२) जिसका देशतैं अंत होवै तिसका कालतैं वी अंत होवैहै । यह नियम है ॥

जिसका देशकालतैं अंत होवै सो **अनित्य** कहियेहै । तातैं आत्मा अनित्य होवैगा । यातैं **आत्मा ब्रह्मसैं भिन्न नहीं** ॥ औ

(१) आत्मासैं भिन्न जो ब्रह्म होवै तौ ब्रह्म अनात्मा होवैगा ॥

(२) जो अनात्मा घटादिक हैं सो **जड** हैं । तातैं आत्मासैं भिन्न ब्रह्म । जड होवैगा ।

सो वार्ता श्रुतिसैं विरुद्ध है ॥

यातैं आत्मासैं भिन्न ब्रह्म नहीं । तातैं **ब्रह्मरूप आत्मा** है ॥

* १४६ प्रश्नः–स्वयंप्रकाश आत्मा कैसैं है ?

उत्तरः–५

(१) जो दीपककी न्यांई आपके प्रकाशनैविषै किसीकी बी अपेक्षा करै नहीं। औ

(२) आप सर्वका प्रकाशक होवै।

सो **स्वयंप्रकाश** कहियेहै ॥

ऐसा आत्माहीं है । यातैं **आत्मा स्वयंप्रकाश** है ॥

अथवा

(१) जो सदा अपरोक्षरूप होवै। औ

(२) किसी ज्ञानका विषय न होवै।

सो **स्वयंप्रकाश** कहियेहै ॥

आत्मा जातैं सदाअपरोक्षरूप है औ प्रकाशरूप होनैतैं किसी बी ज्ञानका विषय (प्रकाश्य) नहीं। यातैं **आत्मा स्वयंप्रकाश** है ॥

※ १४७ प्रश्नः–कूटस्थ आत्मा कैसैं है ?

उत्तरः–६ कूट नाम लोहारके अहिरनका है। ताकी न्यांई जो निर्विकार (अचल) रूपसैं स्थित होवै। सो कूटस्थ कहियेहै ॥

जैसैं लोहार अनेकघाट घडताहै तौ बी अहिरन ज्यूंका त्यूं रहताहै। तैसैं मनरूप लोहार व्यवहाररूप अनेकघाट घडताहै। तौ बी आत्मा ज्यूंका त्यूं रहताहै। यातैं आत्मा कूटस्थ है ॥

कूटस्थ कहनेसैं अचल औ अक्रिय अर्थसैं सिद्ध भया ॥

※ १४८ प्रश्नः–साक्षी आत्मा कैसैं है ?

उत्तरः–७

(१) लोकव्यवहारविषै

[१] उदासीन कहिये रागद्वेषरहित होवै।

[२] समीपवर्ती होवै। औ

[३] चेतन होवै ।
सो साक्षी कहियेहै ॥
जातैं आत्मा
[१] देहादिकसैं उदासीन है । औ
[२] समीपवर्ती है । औ
[३] चेतन कहिये अजडप्रकाश है ।
यातैं आत्मा साक्षी है ॥

(२) वा अंतःकरणरूप उपाधिवाला चेतन साक्षी कहियेहै ॥

(३) वा अंतःकरण औ अंतःकरणकी वृत्तिनविषै वर्त्तमान चेतनमात्र (केवल-चेतन) साक्षी कहियेहै ॥

ऐसा आत्मा है । यातैं साक्षी है ॥

* १४९ प्रश्नः–द्रष्टा आत्मा कैसैं है ?

उत्तरः—८ देखनैहारा जो होवै सो द्रष्टा कहियेहै ॥

आत्मा जातैं सर्वदृश्यका जाननैहारा है । यातैं आत्मा द्रष्टा है ॥

* १५० प्रश्नः–उपद्रष्टा आत्मा कैसैं है ?

उत्तरः—९ जैसैं

(१–१५) यज्ञशालाविषै यज्ञकार्यके करनैहारे १५ ऋत्विज होवैहैं । औ

(१६) सोलवां यजमान होवैहै । औ

(१७) सतरावीं यजमानकी स्त्री होवैहै । औ

(१८) अठारवां उपद्रष्टा कहिये पास बैठके देखनैहारा होवैहै । सो कछु बी कार्य करता नहीं ॥

तैसें

(१–१५) स्थूलदेहरूप यज्ञशालाविषे पांचज्ञानइंद्रिय पांचकर्मइंद्रिय औ पांच प्राण । ये १५ ऋत्विज हैं ।

(१६) सोलवां मनरूप यजमान है । औ

(१७) सतरावीं बुद्धिरूप यजमानकी स्त्री है।

(१८) ये सर्व आपआपके विषयके ग्रहण करनेरूप भोगमय यज्ञका कार्य करतेहैं औ इन सर्वका समीपवर्ती जाननेरूप आत्मा अठारवां उपद्रष्टा है ॥

* १५१ प्रश्नः–एक आत्मा कैसें है ?

उत्तरः—१० आत्माका सजातीय कहिये जातिवाला और आत्मा नहीं है । यातैं आत्मा एक है ॥

इत्यादिक आत्माके विधेयविशेषण हैं ॥

* १५२ प्रश्नः— आत्माके निषेध्यविशेषण कौनसै हैं ?

उत्तरः—१ अनंत २ अखंड ३ असंग ४ अद्वितीय ५ अजन्मा ६ निर्विकार ७ निराकार ८ अव्यक्त ९ अव्यय १० अक्षर इत्यादिक हैं ॥

* १५३ प्रश्नः—अनंत आत्मा कैसैं है ?

उत्तरः—१

(१) आत्मा व्यापक है । तातैं आत्माका **देशतैं अंत नहीं** । औ

(२) जातैं आत्मा नित्य है । तातैं आत्माका **कालतैं अंत नहीं** । औ

(३) जातैं आत्मा अधिष्ठान होनैतैं सर्वका स्वरूप है । तातैं आत्माका **वस्तुतैं अंत नहीं** । औ

जातैं आत्माका देश काल औ वस्तुतैं अंत नहीं कहिये परिच्छेद नहीं तातैं आत्मा अनंत है ॥

* १५४ प्रश्नः–अखंड आत्मा कैसैं है ?

उत्तरः–२

(१) जीवईश्वरका भेद । जीवनका परस्पर-भेद । जीवजडका भेद । जडईश्वरका भेद । जडजडका भेद । ये पांचभेद हैं । तिनतैं आत्मा रहित है । अथवा

(२) सजातीय विजातीय स्वगत भेदतैं आत्मा रहित है ।

यातैं आत्मा अखंड है ॥

* १५५ प्रश्नः–असंग आत्मा कैसैं है ?

उत्तरः–३ संग नाम संबंधका है ॥

सो संबंध तीन प्रकारका हैः–(१) सजातीय-संबंध (२) विजातीयसंबंध (३) स्वगतसंबंध ॥

(१) अपनी जातिवालेसैं जो संबंध है । सो **सजातीयसंबंध** है । जैसैं ब्राह्मणका अन्यब्राह्मणसैं संबंध है ॥

(२) अन्यजातिवालेसैं जो संबंध है । सो **विजातीयसंबंध** है । जैसैं ब्राह्मणका शूद्रसैं संबंध है ॥

(३) अपनै अवयवनसैं कहिये अंगनसैं जो संबंध है । सो **स्वगतसंबंध** है । जैसैं ब्राह्मणका अपनै हस्तपादमस्तक-आदिकअंगनसैं संबंध है ॥

(१) [१] आत्मा (चेतन) एक है । तातैं ताकी जाति नहीं । औ

[२] जीव ईश्वर ब्रह्मा विष्णु शिव मैं तूं इत्यादिकभेद तो उपाधिके कियेहैं । तातैं मिथ्या हैं ।

यातैं आत्माका काहूके साथि **सजातीयसंबंध बनै नहीं** ॥

(२) तैसैं आत्मा अद्वैत है औ सत् है । तिसतैं भिन्न माया (अज्ञान) औ मायाका

कार्य स्थूलसूक्ष्मप्रपंच प्रतीत होवैहै । सो असत् है औ असत् कछु वस्तु नहीं । यातें आत्माका काहूके साथि **विजातीयसंबंध बनै नहीं ॥**

(३) तैसें आत्मा निरवयव है औ सच्चिदानंदादिक तौ आत्माके अवयव नहीं । किंतु एकरूप होनैतें आत्माका स्वरूप है। तातें आत्माका काहूके साथि **स्वगतसंबंध बनै नहीं ॥**

इसरीतिसैं आत्मा सर्वसंबंधसैं रहित है । यातैं **असंग है ॥**

*** १५६ प्रश्नः—अद्वैत आत्मा कैसें है ?**

उत्तरः—४ द्वैत जो प्रपंच । सो स्वप्नकी न्यांई कल्पित होनैतैं वास्तव नहीं है । यातैं आत्मा द्वैतसैं रहित होनैतैं **आत्मा अद्वैत है ॥**

* १५७ प्रश्नः–अजन्मा आत्मा कैसें है ?

उत्तरः–५ स्थूलदेहका धर्म जन्म है ॥

सूक्ष्मदेहका धर्म बी नहीं तौ आत्माका धर्म जन्म कहांसें होवैगा ?

फेर जो आत्माका जन्म मानिये तौ आत्माका मरण बी मानना होवैगा । तातैं आत्मा अनित्य सिद्ध होवैगा । सो परलोकवादी आस्तिकनकूं अनिष्ट कहिये अवांछित है ॥ काहेतैं

(१) जन्ममरणवाला वस्तु है ताका आदि-अंतविषै अभाव है । तातैं पूर्वजन्म-विषै आत्मा नहीं था औ तिसके कर्म बी नहीं थे । तब इस जन्मविषै आत्माकूं कर्मसैं विना भोग होवैहै । औ

(२) मरणसैं अनंतर आत्मा नहीं होवैगा ।
तातैं इसजन्मविषै किये कर्मका भोगसैं
विना नाश होवैगा ।

तातैं वेदोक्तकर्मकी व्यर्थता होवैगी । यातैं आत्माका धर्म जन्म नहीं ॥ तातैं **आत्मा अजन्मा** है । औ

अजन्मा कहनैसैं **अजरअमर** अर्थसैं सिद्ध भया ॥

* १५८ प्रश्नः–निर्विकार आत्मा कैसैं है ?

उत्तरः—६ जैसैं (१) घटके जन्म (२) अस्तिपना कहिये प्रकटता (३) वृद्धि (४) विपरिणाम (५) अपक्षय (६) विनाश । ये षट्धर्म हैं । परंतु घटविषै स्थित औ घटसैं भिन्न जो आकाश है । तिसके धर्म नहीं ॥

तैसैं

(१) " देह जन्मताहै " यह जन्म ॥

(२) " देह जन्म्याहै " यह अस्तिपना

(पूर्व नहीं था । अव है) ॥

(३) " देह वालक भया " यह वृद्धि ॥

(४) " देह युवा भया " यह विपरिणाम॥

(५) " देह वृद्ध भया " यह अपक्षय ॥

(६) " देह मरणकूं पाया " यह विनाश॥

ये षट्विकार देहके धर्म हैं ॥ देहकूं जाननैहारा अरु देहसैं न्यारा जो आत्मा है । तिसके धर्म नहीं ॥

इसरीतिसैं षट्विकारनतैं रहित आत्मा **निर्विकार** है ॥

* १५९ प्रश्नः-निराकार आत्मा कैसैं है ?

उत्तरः—७ (१) स्थूल (२) सूक्ष्म (३) लंबा (४) टुंका कहिये छोटा। ये च्यारीप्रकारकेजगत्‌विषै आकार हैं ॥

(१) आत्मा । इंद्रिय औ मनका अविषय होनैतैं सूक्ष्म है। तातैं स्थूल नहीं ॥

(२) आत्मा व्यापक है। तातैं सूक्ष्म नहीं ॥ कहिये अणु नहीं ॥

(३–४) आत्मा सर्वठिकानै ओतप्रोत है। तातैं लंबा औ टुंका नहीं ॥

यातैं आत्मा निराकार है ॥

* १६० प्रश्नः—अव्यक्त आत्मा कैसैं है ?

उत्तरः—८ आत्मा । जातैं मनइंद्रिय-आदिकका अगोचर होनैतैं अस्पष्ट है । यातैं आत्मा अव्यक्त है ।

* १६१ प्रश्नः–अव्यय आत्मा कैसें है ?

उत्तरः–९ जैसें कोठेमें धान्यके निकासनै-करि धान्यका व्यय कहिये घटना होवैहै । तैसें आत्माका व्यय होवै नहीं । यातें आत्मा अव्यय है ॥

* १६२ प्रश्नः–अक्षर आत्मा कैसें है ?

उत्तरः–१० आत्मा जातें क्षर कहिये नाशतें रहित है । यातें आत्मा अक्षर है ॥ याहीकूं अक्षय । अमृत औ अविनाशी बी कहैहैं ॥

इसरीतिसें आत्माके निषेध्यविशेषण हैं ॥

* १६३ प्रश्नः–ये कहे जो आत्माके विशेषण । सो परस्परभिन्न किसरीतिसें हैं ?

उत्तरः–सच्चिदानंदादिक जो आत्माके गुण होवै तौ परस्परभिन्न होवैं । औ ये आत्माके गुण नहीं । किंतु स्वरूप हैं । यातें परस्परभिन्न नहीं । किंतु अभिन्न हैं । औ

१ एकहीं आत्मा नाशरहित है । यातैं सत् कहियेहै । औ
२ जडसैं विलक्षण प्रकाशरूप है । यातैं चित् कहियेहै । औ
३ दुःखसैं विलक्षण मुख्यप्रीतिका विषय है । यातैं आनंद कहियेहै ॥

ऐसैं सर्व विशेषणनविषे जानना ॥

दृष्टांतः--

जैसैं एकहीं पुरुष
१ पिताकी दृष्टिसैं पुत्र कहियेहै । औ
२ पितामहकी दृष्टिसैं पौत्र कहियेहै । औ
३ पितृभ्राताकी दृष्टिसैं भ्रातृज कहियेहै । औ
४ मातुलकी दृष्टिसैं भेणीज कहियेहै ।

किंवा जैसैं एकहीं संन्यासी ।

१ पशु स्त्री गृहस्थ अदंडी आदिकनकी दृष्टिसैं मनुष्य पुरुष त्यागी दंडी इत्यादी **विधेय-विशेषणोंकरिके** कहियेहैं । औ

२ घट पाषाण वृक्ष आदिककी दृष्टिसैं अघट अपाषाण अवृक्ष आदिक **निषेध्यविशेषणों-करिके** कहियेहैं ॥

तैसैं एकही आत्मा प्रपंचके विशेषण असत् जड दुःख औ अंत खंड संग आदिककी दृष्टिसैं सत् चित् आनंदादिक औ अनंतआदिक कहियेहैं ॥

इसरीतिसैं कहे जो आत्माके विशेषण सो परस्पर भिन्न नहीं । किंतु अभिन्न हैं ॥

इति श्रीविचारचंद्रोदये आत्मविशेषण-वर्णननामिका सप्तमकला समाप्ता ॥ ७ ॥

॥ अथ अष्टमकलाप्रारंभः ॥ ८ ॥

सत्‌चित्‌आनंदका विशेषवर्णन ॥ ८ ॥



इंद्रविजय छंदः ॥

सच्चिदनंदसरूपहि मैं यह ।
सद्गुरुके मुखसैं पहिचान्यो ॥
जागृत स्वप्न सुषुप्ति जु आदिक
तीनहुं कालहिमैं परमान्यो ॥
जागृतआदि लयाविध तीनहुं
कालहि हों इसतैं सत मान्यो ॥
तीनहुं कालविषै सब जानहुं ।
या हित मैं चिदरूपहि जान्यो ॥ १६ ॥

मैं प्रिय हुं धन पुत्र रु पुद्गल[140]—
आदिकतैं त्रयकाल अँगान्यो[141] ॥
आतमअर्थ सबे प्रिय आतम ।
आपहि है प्रिय दुःख नसान्यो ॥
या हित मैं सबतैं प्रियतम्म रु ।
हों परमानंद दुःखहि भान्यो ॥
देह देशादि[142] अतीत सु आतम ।
पूरणब्रह्म पीतांबर गान्यो ॥ १७ ॥

* १६४ प्रश्नः–सत् सो क्या है ?

उत्तरः--१ तीनकालमैं जो अबाधित होवै । सो सत् है ॥

* १६५ प्रश्नः–चित् सो क्या है ?

उत्तरः--२ तीनकालमैं जो सर्वकूं जानै । सो चित् है ॥

॥ १४० ॥ स्थूलशरीर ॥ ॥ १४१ तृप्त ॥
॥ १४२ ॥ अवस्थाआदिकतैं ॥

*** १६६ प्रश्नः—आनंद सो क्या है ?**

उत्तरः—२ तीनकालमैं जो परमप्रेमका विषय होवै । सो आनंद है ॥

*** १६७ प्रश्नः—मैं सत् हूं । यह कैसैं जानना ?**

उत्तरः—१ तीनकालविषै मैं हूं । यातैं मैं सत् हूं । यह ऐसैं जानना ॥

*** १६८ प्रश्नः—तीनकालविषै मैं हूं । यातैं सत् हूं । यह कैसैं जानना ?**

उत्तरः—

१ (१) जागृत्‌विषै मैं हूं ।
(२) स्वप्नविषै मैं हूं ।
(३) सुषुप्तिविषै मैं हूं ॥

२ (१) तैसैं प्रातःकालविषै मैं हूं ।
(२) मध्याह्नकालविषै मैं हूं ।
(३) सायंकालविषै मैं हूं ॥

३ (१) तैसैं दिवसविषे मैं हूं ।
(२) रात्रिविषे मैं हूं ।
(३) पक्षविषे मैं हूं ॥

४ (१) तैसैं मासविषे मैं हूं ।
(२) ऋतुविषे मैं हूं ।
(३) वर्षविषे मैं हूं ॥

५ (१) तैसैं बाल्यअवस्थाविषे मैं हूं ।
(२) यौवनअवस्थाविषे मैं हूं ।
(३) वृद्धअवस्थाविषे मैं हूं ॥

६ (१) तैसैं पूर्वदेहविषे मैं हूं* ।
(२) इसदेहविषे मैं हूं ।
(३) भावीदेहविषे मैं हूं ॥

---

* या प्रकरणविषे " था " अरु " होऊंगा " ऐसैं उच्चारण करनैके योग्य भूत औ भविष्यत्कालका बी " हूं " ऐसैं वर्त्तमानकी न्यांई उच्चारण कियाहै । सो

७ (१) तैसैं युगविषै मैं हूं ।

(२) मनुविषै मैं हूं ।

(३) कल्पविषै मैं हूं ॥

८ (१) तैसैं भूतकालविषै मैं हूं ।

(२) वर्त्तमानकालविषै मैं हूं ।

(३) भविष्यत्कालविषै मैं हूं ॥

इसरीतिसैं तीनकालविषै मैं हूं । यातैं सत् हूं । यह जानना ॥

भूतादिकालकी कल्पनामात्रता (मिथ्यात्व) के सूचन करनै अर्थ है ॥ औ आत्माकी सदादिरूपताविषै श्रुति-आदिकअनेकप्रमाणोंका सद्भाव है अरु ताकी किसी-कालमैं असत्तादिकविषै प्रमाणका अभाव है यातैं सर्व-कालोंविषै आत्मा सच्चिदानंदरूप सिद्ध है । यह जानना ॥

* १६९ प्रश्नः—मेरेसैं भिन्न नामरूपवस्तुसहिततीन-काल क्या जाननै ?

उत्तरः—मेरेसैं भिन्न नामरूपवस्तुसहित-तीनकाल असत् हैं । ऐसैं जाननै ॥

* १७० प्रश्नः—सत् औ असत्‌का निर्णय किससैं होवैहै ?

उत्तरः—सत् औ असत्‌का निर्णय अन्वयव्यतिरेकरूप युक्तिसैं होवैहै ॥

* १७१ प्रश्नः—सत्‌असत्‌के निर्णयविषै अन्वय-व्यतिरेकरूप युक्ति कैसैं जाननी ?

उत्तरः—

१ (अ) जो मैं जाग्रत्‌विषै हूं ।
सोई मैं स्वप्नविषै हूं ।
यातैं मैं **सत्** हूं ॥
(व्य) जाग्रत् मेरेविषै नहीं ।
यातैं यह **जाग्रत् असत्** है ।
(अ) जो मैं स्वप्नविषै हूं ।
सोई मैं सुषुप्तिविषै हूं ।
यातैं मैं **सत्** हूं ॥
(व्य) स्वप्न मेरेविषै नहीं ।
यातैं यह **स्वप्न असत्** है ॥
(अ) जो मैं सुषुप्तिविषै हूं ।
सोई मैं प्रातःकालविषै हूं ।
यातैं मैं **सत्** हूं ॥
(व्य) सुषुप्ति मेरेविषै नहीं ।
यातैं यह **सुषुप्ति असत्** है ॥

२ (अ) जो मैं प्रातःकालविषै हूं ।
सोई मैं मध्यान्हकालविषै हूं ।
यातें मैं सत् हूं ॥
(व्य) प्रातःकाल मेरेविषै नहीं ।
यातें यह प्रातःकाल असत् है ॥
(अ) जो मैं मध्यान्हकालविषै हूं ।
सोई मैं सायंकालविषै हूं ।
यातें मैं सत् हूं ॥
(व्य) मध्यान्हकाल मेरेविषै नहीं ।
यातें यह मध्यान्हकाल असत् है ॥
(अ) जो मैं सायंकालविषै हूं ।
सोई मैं दिवसविषै हूं ।
यातें मैं सत् हूं ॥
(व्य) सायंकाल मेरेविषै नहीं ।
यातें यह सायंकाल असत् है ॥

३ (अ) जो मैं दिवसविषै हूं ।
सोई मैं रात्रिविषै हूं ।
यातैं मैं सत् हूं ॥
(व्य) दिवस मेरेविषै नहीं ।
यातैं यह दिवस असत् है ॥
(अ) जो मैं रात्रिविषै हूं ।
सोई मैं पक्षविषै हूं ।
यातैं मैं सत् हूं ॥
(व्य) रात्रि मेरेविषै नहीं ।
यातैं यह रात्रि असत् है ॥
(अ) जो मैं पक्षविषै हूं ।
सोई मैं मासविषै हूं ।
यातैं मैं सत् हूं ॥
(व्य) पक्ष मेरेविषै नहीं ।
यातैं यह पक्ष असत् है ॥

४ (अ) जो मैं मासविषै हूं ।
सोई मैं ऋतुविषै हूं ।
यातैं मैं सत्‌ हूं ॥
(व्य) मास मेरेविषै नहीं ।
यातैं यह मास असत्‌ है ॥
(अ) जो मैं ऋतुविषै हूं ।
सोई मैं वर्षविषै हूं ।
यातैं मैं सत्‌ हूं ॥
(व्य) ऋतु मेरेविषै नहीं ।
यातैं यह ऋतु असत्‌ है ॥
(अ) जो मैं वर्षविषै हूं ।
सोई मैं बाल्यअवस्थाविषै हूं ।
यातैं मैं सत्‌ हूं ॥
(व्य) वर्ष मेरेविषै नहीं ।
यातैं यह वर्ष असत्‌ है ॥

५ (अ) जो मैं बाल्यअवस्थाविषै हूं ।
सोई मैं यौवनअवस्थाविषै हूं ।
यातें मैं सत् हूं ॥

(व्य) बाल्यअवस्था मेरेविषै नहीं ।
यातें यह बाल्यअवस्था असत् है ॥

(अ) जो मैं यौवनअवस्थाविषै हूं ।
सोई मैं वृद्धअवस्थाविषै हूं ।
यातें मैं सत् हूं ॥

(व्य) यौवनअवस्था मेरेविषै नहीं ।
यातें यह यौवनअवस्था असत् है ॥

(अ) जो मैं वृद्धअवस्थाविषै हूं ।
सोई मैं पूर्वदेहविषै हूं ।
यातें मैं सत् हूं ॥

(व्य) वृद्धअवस्था मेरेविषै नहीं ।
यातें यह वृद्धअवस्था असत् है ॥

६ (अ) जो मैं पूर्वदेहविषै हूं ।
सोई मैं इसदेहविषै हूं ।
यातैं **मैं सत्** हूं ॥

(व्य) पूर्वदेह मेरेविषै नहीं ।
यातैं यह **पूर्वदेह असत्** है ॥

(अ) जो मैं इसदेहविषै हूं ।
सोई मैं भावीदेहविषै हूं ॥
यातैं **मैं सत्** हूं ॥

(व्य) यह देह मेरविषै नहीं ।
यातैं **यह देह असत्** है ॥

(अ) जो मैं भावीदेहविषै हूं ।
सोई मैं युगविषै हूं ।
यातैं **मैं सत्** हूं ॥

(व्य) भावीदेह मेरेविषै नहीं ।
यातैं यह **भावीदेह असत्** है ॥

७ (अ) जो मैं युगविषै हूं ।
सोई मैं मनुविषै हूं ।
यातैं मैं सत् हूं ॥
(व्य) युग मेरेविषै नहीं ।
यातैं यह युग असत् है ॥
(अ) जो मैं मनुविषै हूं ।
सोई मैं कल्पविषै हूं ।
यातैं मैं सत् हूं ॥
(व्य) मनु मेरविषै नहीं ।
यातैं यह मनु असत् है ॥
(अ) जो मैं कल्पविषै हूं ।
सोई मैं भूतकालविषै हूं ।
यातैं मैं सत् हूं ॥
(व्य) कल्प मेरेविषै नहीं ।
यातैं यह कल्प असत् है ॥

८ (अ) जो मैं भूतकालविषै हूं । सोई मैं
भविष्यत्‌कालविषै हूं । यातैं **मैं सत् हूं॥**

(व्य) भूतकाल मेरेविषै नहीं ।
यातैं यह **भूतकाल असत् है** ॥

(अ) जो मैं भविष्यत्‌कालविषै हूं ।
सोई मैं वर्तमानकालविषै हूं ।
यातैं **मैं सत्** हूं ॥

(व्य) भविष्यत्‌काल मेरेविषै नहीं ।
यातैं यह **भविष्यत्काल असत् है** ।

(अ) जो मैं वर्त्तमानकालविषै हूं ।
सोई मैं सर्वकालविषै हूं ।
यातैं **मैं सत्** हूं ॥

(व्य) वर्त्तमानकाल मेरेविषै नहीं ।
यातैं यह **वर्त्तमानकाल असत् है** ॥

**इसरीतिसैं सत् असत्‌के निर्णयविषै अन्वय-
व्यतिरेकरूप युक्ति** जाननी ॥

* १७२ प्रश्नः-चित् कैसैं हूं ?

उत्तरः-२ तीनकालविषै मैं जानताहूं। यातैं मैं चित् हूं ॥

* १७३ प्रश्नः-तीनकालविषै मैं जानताहूं यातैं चित् हूं। यह कैसैं जानना ?

उत्तरः—

१ (१) जाग्रत्कूं मैं जानताहूं ।
(२) स्वप्नकूं मैं जानताहूं ।
(३) सुषुप्तिकूं मैं जानताहूं ।
२ (१) तैसैं प्रातःकालकूं मैं जानताहूं ।
(२) मध्यान्हकालकूं मैं जानताहूं ।
(३) सायंकालकूं मैं जानताहूं ॥
३ (१) तैसैं दिवसकूं मैं जानताहूं ।
(२) रात्रिकूं मैं जानता हूं ।
(३) पक्षकूं मैं जानताहूं ॥
४ (१) तैसैं मासकूं मैं जानताहूं ।

(२) ऋतुकूं मैं जानताहूं ।
(३) वर्षकूं मैं जानताहूं ॥
५ (१) तैसैं बाल्यअवस्थाकूं मैं जानताहूं ।
(२) यौवनअवस्थाकूं मैं जानताहूं ।
(३) वृद्धअवस्थाकूं मैं जानताहूं ॥
६ (१) तैसैं पूर्वदेहकूं मैं जानताहूं ।
(२) इस देहकूं मैं जानताहूं ।
(३) भावीदेहकूं मैं जानताहूं ॥
७ (१) तैसैं युगकूं मैं जानताहूं ।
(२) मनुकूं मैं जानताहूं ।
(३) कल्पकूं मैं जानताहूं ॥
८ (१) तैसैं भूतकालकूं मैं जानताहूं ।
(२) भविष्यत्कालकूं मैं जानताहूं ।
(३) वर्त्तमानकालकूं मैं जानताहूं ॥

इसरीतिसैं सर्वकालविषै मैं जानताहूं । यातैं **चित् हूं** । यह जानना ॥

* १७४ प्रश्नः–मेरेसैं भिन्न नामरूपवस्तुसहित तीनकाल क्या जाननै ?

उत्तरः—मेरेसैं भिन्न नामरूपवस्तुसहित तीनकाल जड हैं। ऐसैं जाननै ॥

* १७५ प्रश्नः–चित् औ जडका निर्णय किसैं होवैहै ?

उत्तरः–चित् औ जडका निर्णय अन्वयव्यतिरेकरूप युक्तिसैं होवैहै ॥

* १७६ प्रश्नः–चित् औ जडके निर्णयविषै अन्वय-व्यतिरेकरूप युक्ति कैसे जाननी ?

उत्तरः—

१ (अ) जो मैं जाग्रत्कूं जानताहूं।
सोई मैं स्वप्नकूं जानताहूं।
यातैं मैं चित् हूं॥
(व्य) जाग्रत् मेरेकूं जानै नहीं।
यातैं यह जाग्रत् जड है॥

(अ) जो मैं स्वप्नकूं जानताहूं ।

सोई मैं सुषुप्तिकूं जानताहूं ।

यातैं मैं चित् हूं ॥

(व्य) स्वप्न मेरेकूं जानै नहीं ।

यातैं यह स्वप्न जड है ।

इत्यादि इसरीतिसैं चित् औ जडके निर्णयविषै अन्वयव्यतिरेकरूप युक्ति जाननी ॥

* १७७ प्रश्नः--आनंद मैं कैसैं हूं ?

उत्तरः—२ तीनकालविषै मैं परमप्रिय हूं। यातैं मैं आनंद हूं ॥

* १७८ प्रश्नः--तीनकालविषै मैं प्रिय हूं यातैं आनंद हूं॥ यह कैसैं जानना ?

उत्तरः-

१ (१) जाग्रत्‌विषै मैं प्रिय हूं ।
(२) स्वप्नविषै मैं प्रिय हूं ।
(३) सुषुप्तिविषै मैं प्रिय हूं ॥

२ (१) तैसैं प्रातःकालविषै मैं प्रिय हूं ।
(२) मध्यान्हकालविषै मैं प्रिय हूं ।
(३) सायंकालविषै मैं प्रिय हूं ॥

३ (१) तैसैं दिवसविषै मैं प्रिय हूं ।
(२) रात्रिविषै मैं प्रिय हूं ।
(३) पक्षविषै मैं प्रिय हूं ॥

४ (१) तैसैं मासविषै मैं प्रिय हूं ।
(२) ऋतुविषै मैं प्रिय हूं ।
(३) वर्षविषै मैं प्रिय हूं ॥

५ (१) तैसैं बाल्यअवस्थाविषै मैं प्रिय हूं ।
(२) यौवनअवस्थाविषै मैं प्रिय हूं ।
(३) वृद्धअवस्थाविषै मैं प्रिय हूं ॥

६ (१) तैसैं पूर्वदेहविषै मैं प्रिय हूं ।
(२) इसदेहविषै मैं प्रिय हूं ।
(३) भावीदेहविषै मैं प्रिय हूं ॥
७ (१) तैसैं युगविषै मैं प्रिय हूं ।
(२) मनुविषै मैं प्रिय हूं ।
(३) कल्पविषै मैं प्रिय हूं ॥
८ (१) तैसैं भूतकालविषै मैं प्रिय हूं ।
(२) भविष्यत्कालविषै मैं प्रिय हूं ।
(३) वर्त्तमानकालविषै मैं प्रिय हूं ॥

इसरीतिसैं तीनकालविषै परमप्रिय हूं। यातैं मैं आनंद हूं । यह जानना ॥

***१७९ प्रश्नः–मेरेसैं भिन्न नामरूपवस्तुसहित तीनकाल क्या जानने?**

उत्तरः–मेरेसैं भिन्न नामरूपवस्तुसहित तीनकाल दुःख हैं ऐसैं जानना ॥

* १८० प्रश्नः–आनंद औ दुःखका निर्णय किसैं होवैहै ?

उत्तरः–आनंद औ दुःखका निर्णय अन्वयव्यतिरेकरूप युक्तिसैं होवै है ॥

* १८१ प्रश्नः–आनंद औ दुःखके निर्णयविषै अन्वय-व्यतिरेकरूप युक्ति कैसैं जाननी ?

उत्तरः–

(अ) जो मैं जाग्रत्‌विषै (परम) प्रिय हूं।
सोई मैं स्वप्नविषै प्रिय हूं।
यातैं मैं आनंद हूं ॥

(व्य) जाग्रत् मेरेकूं प्रिय नहीं।
यातैं यह जाग्रत् दुःख है ॥

इसरीतिसैं आनंद औ दुःखके निर्णयविषै अन्वयव्यतिरेकरूप युक्ति जाननी ॥

॥ १४३ ॥ जो जो जाग्रत्आदिककाल आत्माविषै

* १८२ प्रश्नः-मैं परमप्रिय हूं। यह कैसैं जानना ?

उत्तरः- दृष्टांत-

१ जैसैं पुत्रके मित्रविषैं प्रीति है। सो पुत्र-वास्ते है। औ

२ पुत्रविषै जो प्रीति है। सो तिसके मित्रवास्ते नहीं।

यातैं पुत्र अधिकप्रिय है॥

भासता है। सो सो काल यद्यपि दुःखरूप है। तथापि
१ अध्यासकरिके आत्माकूं चिदाभासद्वारा प्रिय भासता है॥ तब अन्यकाल प्रिय भासते नहीं। यातैं सर्वकालमैं व्यभिचारीप्रीति है। तातैं ये वास्तव दुःखरूपही है। औ

२ आत्मामैं कहिये आपमैं अव्यभिचारी (सर्वदा) प्रीति है। यातैं आत्मा आनंदरूप है॥

१ तैसैं धनपुत्रादिकविषै जो प्रीति है । सो आत्माके वास्ते है । औ

२ आत्माविषै जो प्रीति है । सो धनपुत्रादिकके वास्ते नहीं ।

यातैं आत्मा अधिकप्रिय है ॥

इसरीतिसैं मैं परमप्रिय हूं । यह जानना ॥

***१८३ प्रश्नः–प्रीतिका न्यून अधिकभाव कैसै जानना ?**

उत्तरः–

१ जाग्रत्‌विषै सर्वसैं **प्रिय द्रव्य** है । काहेतैं धनवास्ते पुरुष देश छोडिके परदेश जाताहै औ अनेकनीचकर्म करताहै । यातैं द्रव्य प्रिय है ॥

२ **द्रव्यतैं पुत्र प्रिय** है । काहेतैं पुत्र दुष्टकर्मकरिके राजगृहविषै बंधनकूं पायाहोवै तब तिसकूं धन देके छुडावताहै । यातैं धनतैं पुत्र प्रिय है ॥

३ पुत्रतैं शरीर प्रिय है । काहेतैं जब दुर्भिक्ष कहिये दुष्काल होवै । तब पुत्रकूं बेचके शरीरका निर्वाह करैहै । यातैं पुत्रतैं शरीर प्रिय है ॥

४ शरीरतैं इंद्रिय प्रिय है। काहेतैं कोई मारनै आवै तब इंद्रियनकूं छुपायके " मेरे शरीर-विषै मार। परंतु आंख कान नाक मुखविषै मारना नहीं " ऐसैं कहताहै । यातैं शरीरतैं इंद्रिय प्रिय है ॥

५ इंद्रियतैं प्राण (मन) प्रिय है । काहेतैं किसीकूं दुष्टकर्म करनैसैं राजाका हुकूम भयाहोवै कि " इसके प्राण लेने " तब कहता-है कि मेरे धन पुत्र स्त्री गृह लूट ल्यो ।

परंतु प्राण मत लेना। तौ बी राजाकी आज्ञा तौ प्राणके लेनैविषै है। तब कहताहै कि। "मेरा कान काटो। नाक काटो। हाथ काटो। पांउ काटो। परंतु मेरे प्राण मत लेना"। यातैं इंद्रियतैं प्राण प्रिय है॥

६ प्राणतैं आत्मा प्रिय है। काहेतैं किसीकूं अतिशयव्याधिसैं पीडा होतीहोवै। तब कहताहै कि "मेरे प्राण जावै तब मैं सुखी होउं" यातैं प्राणतैं आत्मा प्रिय है॥

इसरीतिसैं प्रीतिका न्यूनअधिकभाव जानना॥

इति श्रीविचारचंद्रोदये सच्चिदानंद-विशेषवर्णननामिका अष्टमकला समाप्ता॥८॥

॥ अथ नवमकलाप्रारंभः ॥ ९ ॥

॥ अवाच्यसिद्धांतवर्णन ॥

इंद्रविजय छंद ॥

ब्रह्म अहै मनबानि-अगोचर ।
शास्त्र रु संत कहैं अरु ध्यावैं ॥
वेद वदैं लछनादिकरीति रु
वृत्ति बिआप्ति जनो मन लावैं ॥
हैं जु सदादिविधेयविशेषण ।
वे असदादिक भिन्न कहावैं ॥
सत्य अपेक्षिक आदि विरोधि[144] जु
अंस तजी परमार्थ[145] लखावैं ॥ १८ ॥

॥ १४४ ॥ आपेक्षिकसत्य । वृत्तिज्ञान औ विषयानंदआदिक विरोधि जो अंश है । ताकूं त्यागिके ॥

॥ १४५ ॥ वास्तवरूप जो निरपेक्षसत्य । चेतनरूपज्ञान औ स्वरूपानंद आदिक । ताकूं लक्षणासैं बोधन करै हैं ॥

हैं जु अनंत अखंड असंग रु

अद्वयआदिनिषेध्य रहावैं ॥

वे परपंच निषेध करी अव-

शेषितवस्तु गिराविन गावैं ॥

यूं परमातम आतम देवही ।

वेद रु शास्त्र सबे सुरटावैं ॥

पंडित[१४६] त्यागि अभास पीतांबर ।

वृत्ति अहं अपरोक्षहि पावैं ॥ १९ ॥

॥ १४६ ॥ पंडितपीतांबर कहैहै कि– आभास (फलव्याप्तिकूं) त्यागिके अहंवृत्ति (वृत्तिव्याप्तिकरि) अपरोक्ष जानै ॥ यह अर्थ है ॥

* १८४ प्रश्नः-महात्मा जब वाणीका विषय नहीं । तब सत्चित्आनंदआदिकविशेषणनसैं कैसें कहियेहै ।

उत्तरः-ब्रह्मात्माके कितनैंक विधेयविशेषणें[147] हैं औ कितनैंक निषेध्यविशेषणें[148] हैं । तिनमैं

१ विधेयविशेषण जो सदादिक हैं । सो प्रपंच का निषेधकरिके अवशेष (बाकी रहे) ब्रह्मकूं लक्षणासैं साक्षात्बोधन करैहै । औ

२ निषेध्यविशेषण जो अनंतादिक हैं । सो तौ साक्षात्प्रपंचकाही निषेध करैहैं औ तिसतैं विलक्षण ब्रह्मात्मा अर्थतैं सिद्ध होवैहै ।

तातैं ब्रह्मात्मा अवाच्य होनेतैं किसी विशेषणसैं नहीं कहियेहै ॥

॥ १४७ ॥ " सत् है " । " चित् है " । इसप्रकार विधिमुखसैं ब्रह्मके बोधकपद विधेयविशेषण हैं ॥

॥ १४८ ॥ " अनंत (अंतवाला नहीं)" । " अखंड

(खंडवाला नहीं) " इसप्रकार निषेधमुखसैं ब्रह्मके बोधकपद **निषेध्यविशेषण** हैं ॥

॥ १४९ ॥

१ (वा) माया औ प्रपंचविषै आपेक्षिकसत्यता है औ ब्रह्मविषै निरपेक्षसत्यता है । दोनूं मिलिके **' सत् 'पदका वाच्य** है । औ

(ल) मायाकी सत्यताकूं त्यागिके केवलब्रह्मकी सत्यता **लक्ष्य** है ॥

२ (वा) अंतःकरणकी वृत्तिरूप ज्ञान औ चेतनरूप ज्ञान । दोनूं मिलिके **' चित्' पदका वाच्य** है ॥

(ल) वृत्तिज्ञानकूं छोडिके केवलचेतनरूप ज्ञान **लक्ष्य** है ॥

३ (वा) विषयानंद । वासनानंद औ ब्रह्मानंद । तीनूं मिलिके **' आनंद' पदका वाच्य** है ॥

(ल) दोनूंकूं छोडिके केवलब्रह्मानंद **आनंदपद-का लक्ष्य** है ॥

४ (वा) माया औ ताके कार्य आकाशादिकविषै आपेक्षिकव्यापकता है अरु ब्रह्म (आत्मा) विषै निरपेक्षव्यापकता है । दोनूं मिलिके 'ब्रह्म' (विभु) पदका वाच्य है ॥

(ल) केवलब्रह्म 'ब्रह्म' पदका लक्ष्य है ॥

५ (वा) साभासबुद्धिविषै आपेक्षिकस्वप्रकाशता है औ चेतनविषै निरपेक्षस्वप्रकाशता है । दोनूं मिलिके 'स्वयंप्रकाश' पदका वाच्य है॥

(ल) केवलचेतन 'स्वयंप्रकाश' लक्ष्य है ॥

६ (वा) रज्जुआदिकविषै आपेक्षिकअविकारिता है औ चेतनविषै निरपेक्षअविकारिता है । ये दोनूं मिलिके 'कूटस्थ' पदका वाच्य है। औ

(ल) केवलचेतन 'कूटस्थ' पदका लक्ष्य है ॥

७ (वा) लौकिकसाक्षी औ मायाअविद्याउपहितचेतन (ब्रह्म औ आत्मा) दोनूं मिलिके 'साक्षी' पदका वाच्य है। औ

(ल) केवलमायाअविद्याउपहितचेतन ‘ **साक्षी** ’-
पद्का लक्ष्य है ॥

८ (वा) साभासअंतःकरणकी वृत्तिरूप दृष्टिकरिके विशिष्ट (सहित) चेतन । ‘**द्रष्टा**’**पद्का वाच्य** है । औ

(ल) केवलचेतनभाग ‘**द्रष्टा**’**पद्का लक्ष्य** है ॥

९ (वा) यज्ञका उपद्रष्टा औ प्रत्यगात्मा दोनूं मिलिके ‘**उपद्रष्टा**’**पद्का वाच्य** है ॥

(ल) केवलप्रत्यगात्मा ‘**उपद्रष्टा**’**पद्का लक्ष्य** है।

१० (वा) लोकगत एकाकीपुरुष औ सजातीयभेदरहित ब्रह्म ‘**एक**’**पद्का वाच्य** है ॥

(ल) केवलब्रह्म ‘**एक**’**पद्का लक्ष्य** है ॥

ऐसैं अनुक्तअन्यविधेयविशेषणोंविषै बी जानीलेना ॥

इसरीतिसैं प्रपंचके ‘ असत् ’ आदिकविशेषणोंके निषेधक सदादिपदोंके अर्थविषै बी भागत्यागलक्षणाकी प्रवृत्ति है ॥

* १८५ प्रश्नः–सदादिकविधेयविशेषण । प्रपंचका निषेधकरिके अवशेषब्रह्मकूं कैसें बोधन करैहै ?

उत्तरः--

१ **सत्** कहनैसैं असत्का निषेध भया। बाकी रह्या सद्रूप। सो लक्षणासैं सिद्ध है ॥

२ **चित्** कहनैसैं जडका निषेध भया। बाकी रह्या चिद्रूप। सो लक्षणासैं सिद्ध है ॥

३ **आनंद** कहनैसैं दुःखका निषेध भया। बाकी रह्या आनंद (सुख) रूप। सो लक्षणासैं सिद्ध है ॥

४ **ब्रह्म** कहनैसैं परिच्छिन्नका निषेध भया। बाकी रह्या व्यापक। सो लक्षणासैं सिद्ध है ॥

५ **स्वयंप्रकाश** कहनैसैं परप्रकाशका निषेध भया। बाकी रह्या स्वयंप्रकाश। सो लक्षणासैं सिद्ध है ॥

होवैहै ॥ जातैं गुण क्रिया जाति औ संबंधादिक जो शब्दकी अरु मनकी प्रवृत्तिके निमित्तरूप धर्म है । सो ब्रह्ममैं नहीं हैं किंतु निर्धर्मक होनेतैं ब्रह्म निर्विशेष है । यातैं श्रुति वी ताकूं मनवाणीका अविषय कहतीहै ॥

किंवा जो कछु बोलनाहै सो द्वैतसैं होवैहै । अद्वैतसैं नहीं । यातैं इन विशेषणनका ऐसैं अर्थ करनैसैं श्रुतिविरुद्ध द्वैतकी सिद्धि होवै नहीं औ अद्वैत सुखसैं समजनैकूं शक्य होवैहै ॥

इति श्रीविचारचंद्रोदये अवाच्यसिद्धांतवर्णननामिका नवमकला समाप्ता ॥ ९ ॥

॥ अथ दशमकलाप्रारंभः ॥ १० ॥

॥ सामान्यविशेषचैतन्यवर्णन ॥



इंद्रविजय छंद ॥

चेतन हैं जु समान विशेष सु ।
दोविधसत्य सुजान समानै ॥
भ्रांति सरूप विशेष जु कल्पित ।
संसृति आश्रय सो तिहि भानै ॥
ज्यों रविको प्रतिबिंब जलादिक ।
सो रविरूप विशेष पिछानै ॥
त्यों मतिमैं प्रतिबिंबै परातम ।
सो कलपीत विशेषहिं जानै ॥ २० ॥

॥ १५० ॥ परमात्माका प्रतिबिंब ॥

आवत जावत लोक प्रलोक हिं ।
भोगत भोग जु [१५१] कर्म निपानै ॥

सो सव चित [१५२]-अभास करे अरु ।
शुद्ध समान महीँ नहिं आनै ॥

अस्ति रु भाति प्रियं सव पूरन-
ब्रह्म समान सु चेतन मानै ॥

नाम रु रूप तजी सत् चेतनं
मोद पीतांवर आप पिछानै ॥ २१ ॥

॥ १५१ ॥ जो कर्मरचित भोग है । ताकूं भोगताहै ॥

॥ १५२ ॥ चेतनका प्रतिबिंब ॥

*१८८ प्रश्नः–विशेषचैतन्य सो क्या है ?

उत्तरः–अंतःकरण औ अंतःकरणकी वृत्तिनविषै जो सामान्यचैतन्यब्रह्मका प्रतिबिंबरूप चिदाभास । सो विशेषचैतन्य है ॥

* १८९ प्रश्नः–चिदाभासका लक्षण क्या है ?

उत्तरः—

१ चैतन्य (ब्रह्म) के लक्षणसैं रहित होवै । औ

२ चैतन्यकी न्यांई भासै ।

सो चिदाभास कहियेहै ॥

॥ १५२ ॥ इहां चिदाभासरूप जो विशेषचैतन्य कहाहै । सो षष्ठकलाविषै उक्त कल्पितविशेषअंशके अंतर्गत है ॥

* १९० प्रश्नः-यह चिदाभास विशेषचैतन्य काहेतैं कहियेहै ?

उत्तरः-अल्पदेश औ कालविषै जो वस्तु होवै। सो विशेष[*] कहियेहै ॥ जातैं चिदाभास अंतःकरणदेश औ जाग्रत्स्वप्नकाल वा अज्ञानकालविषै है। यातैं विशेषचैतन्य कहियेहै ॥

॥ १५४ ॥ अधिष्ठान औ अध्यस्त । इसभेदतैं विशेष दोप्रकारका है ॥ तिनमैं

१ भ्रांतिकालविषै जाकी प्रतीति होवै नहीं किंतु जाकी प्रतीतिसैं भ्रांतिकी निवृत्ति होवै । सो अधिष्ठानरूप विशेष है। औ

२ भ्रांतिकालविषै जाकी प्रतीति होवै औ अधिष्ठानके ज्ञानकालविषै जाकी प्रतीति होवै नहीं सो अध्यस्तरूप विशेष है॥ याहीकूं कल्पितविशेष बी कहैहैं ॥

* १९१ प्रश्नः–विशेषचैतन्यविषै दृष्टांत क्या है ?

उत्तरः—

दृष्टांतः—

१ जैसैं सूर्यका प्रकाश सर्वत्र समान है। परंतु सर्वठिकानै प्रतिबिंव होता नहीं औ जहां जल वा दर्पणरूप उपाधि होवै तहां प्रतिबिंबरूपकरि विशेष भासताहै ॥

२ किंवा जैसै सूर्यका प्रकाश सर्वत्र समान है। परंतु सो वस्त्रकपासआदिककूं जलावता नहीं औ जहां आगिआ (सूर्यकांतमणि) रूप उपाधि होवै। तहां अग्निरूपसैं विशेष होयके वस्त्रकपासआदिककूं जलावताहै ॥

तिनमैं

१ सामान्यरूप है सो सर्वदा ज्यूंका त्यूं होनैतैं यथार्थ (बहुकालस्थायि) है। औ

२ उपाधिकरि भासताहै जो विशेषरूप । सो व्यभिचारी होनैतैं अयथार्थ (अल्पकाल-स्थायि) है ॥

१ तैसैं सामान्यचैतन्य जो अस्ति भाति प्रिय । सो सर्वत्र समान है। परंतु तिससैं बोलना चलना इत्यादिकविशेषव्यवहार होता नहीं । औ

२ जहां अंतःकरणरूप उपाधि होवै तहां चिदाभासरूपसैं विशेषचैतन्य होयके बोल-नाचलना । कर्त्तापनाभोक्तापनां । परलोकइस-लोकविषै गमनआगमन । इत्यादिकविशेष-व्यवहार होवैहै ॥

तिनमैं

१ सामान्यचैतन्य जो ब्रह्म सो सत्य है । औ

२ उपाधिकरि भासताहै जो विशेषचैतन्य चिदा-भास । सो मिथ्या है ॥ तैसैं

(१) पुन्यपापका कर्त्तापना ।

(२) सुखदुःखका भोक्तापना ।

(३) परलोकइसलोकविषै गमनागमन ।

(४) जन्ममरण ।

(५) चौरासीलक्षयोनिकी प्राप्ति ।

इत्यादिकसंसाररूप धर्म बी चिंदाभासके हैं । यातैं मिथ्या हैं ॥

* १९२ प्रश्नः -विशेषचैतन्यके जाननैमैं क्या निश्चय करना ?

उत्तरः—

१ विशेषचैतन्य जो चिदाभास । औ

२ तिसके धर्म ।

सो मैं नहीं औ मेरे नहीं । किंतु ये मेरेविषै कल्पित हैं ॥ मैं इनका अधिष्ठान सामान्यचैतन्य इनतैं न्यारा हूं । यह निश्चय करना ॥

* १९३ प्रश्नः--सामान्यचैतन्य सो क्या है ?

उत्तरः--

१ जो आकाशकी न्यांई सर्वत्र परिपूर्ण है।

२ जो सर्वनामरूपका अधिष्ठान है।

३ जो अस्तिभातिप्रियरूप है।

४ जो निर्विकारब्रह्म है।

सो सामान्यचैतन्य है ॥

* १९४ प्रश्नः--ब्रम्ह । सामान्यचैतन्य काहेतें कहियेहै ?

उत्तरः--अधिकदेश औ कालविषै जो वस्तु होवै । सो सामान्य कहियेहै ॥

जातें ब्रह्म । बुद्धिकल्पित सर्वदेश औ सर्व-कालविषै व्यापक है । तातें ब्रह्म सामान्य-चैतन्य कहियेहै ॥

* १९५ प्रश्नः–सामान्यचैतन्य जाननैविषै दृष्टांत क्या है ?

उत्तरः–

दृष्टांतः–जैसैं एकरज्जुकेविषै नानापुरुषनकूं किसीकूं दंडकी । किसीकूं सर्पकी । किसीकूं पृथ्वीके रेषाकी । किसीकूं जलधाराकी भ्रांति होवैहै ॥ तिस भ्रांतिविषै दोअंश हैं ।

१ एक सामान्यइदंअंश है । औ

२ दूसरा सर्पादिकविशेषअंश है ॥ तिनमैं

१ (१) 'यह' दंड है ॥

(२) 'यह' सर्प है ॥

(३) 'यह' पृथिवीकी रेषा है ॥

(४) 'यह' जलधारा है ॥

इसरीतिसैं सर्पादिकविशेषअंशनविषै सामान्य "इदं" अंश कहिये "यह" अंश सर्वत्रव्यापक है औ सो रज्जुका स्वरूप है । सो सामान्य-

इदंअंश जातें

(१) भ्रांतिकालविषै बी भासताहै । औ

(२) भ्रांतिकी निवृत्तिकालविषै बी " 'यह' रज्जु है" इसरीतिसैं भासताहै ।

यातैं सामान्यइदंअंश अव्यभिचारी होनेतैं सत्य है । औ

२ परस्परव्यभिचारी जो सर्पादिकविशेषअंश सो कल्पित हैं ॥

सिद्धांतः--तैसैं सर्वपदार्थनविषै पांचअंश हैंः-१ अस्ति २ भाति ३ प्रिय ४ नाम ५ रूप ॥

१ "घट है" यह **अस्ति** (सत्) ।

२ "घट भासताहै" यह **भाति** (चित्) ।

३ "घट प्यारा है" । काहेतें घट जल भरनेकूं उपयोगी है । यातैं यह **प्रिय** (आनंद) ॥ सर्प-सिंहआदिक बी सर्पिणी औ सिंहिणीकूं प्रिय हैं।

४ "घट" यह दोअक्षर **नाम** है ।

५ स्थूलगोलउदरवान् घटका रूप (आकार) है ॥
ऐसें घटआदिकसर्वभूत औ भूतनके कार्यनविषै
वी जानना ॥

यह बाहीरके पदार्थनविषै पांचअंश दिखाये ॥ तैसें

१ भीतरदेहआदिकविषैं–

(१) "मैं हूं" यह अस्ति है ।

(२) "मैं भासता (जानता) हूं" यह भाति है ।

(३) "मैं आप आपकूं प्यारा हूं" यह प्रिय है । औ

(४) देह । इंद्रिय । प्राण । मन । बुद्धि । चित्त । अहंकार । अज्ञान औ इनके धर्म । ये नाम हैं ।

(५) इनके यथायोग्य आकार । सो रूप है ॥

ये अंतरके पदार्थनविषै पांचअंश दिखाये ॥

२ इन सर्वके नामरूपके त्याग कियेसैं—

(१) "पृथिवी है"।

(२) "पृथिवी भासतीहै"।

(३) "पृथिवी प्रिय है"। काहेतैं पृथिवी रहनेकूं स्थान देतीहै।

(४) "पृथिवी" ऐसा नाम है। औ

(५) "गंधगुणयुक्त" रूप है॥

३ पृथिवीके नामरूपके त्याग कियेसैं—

(१) "जल है"।

(२) "जल भासताहै"।

(३) "जल प्रिय है"। काहेतैं जल तृषाकूं दूरी करताहै।

(४) "जल" ऐसा नाम है। औ

(५) "शीतस्पर्शगुणयुक्त" रूप है॥

४ जलके नामरूपके त्याग कियेसैं–

(१) "तेज है" ।

(२) "तेज भासताहै" ।

(३) "तेज प्रिय है" । काहेतैं तेज शीत औ अंधकारकूं दूरी करताहै ।

(४) "तेज" ऐसा नाम है । औ

(५) "उष्णस्पर्शगुणयुक्त" रूप है ॥

५ तेजके नामरूपके त्याग कियेसैं–

(१) "वायु है" ।

(२) "वायु भासताहै" ।

(३) "वायु प्रिय है"। काहेतैं वायु प्रसीनाकूं दूरी करताहै ।

(४) "वायु" ऐसा नाम है । औ

(५) "रूपरहित अरु स्पर्शगुणयुक्त" रूप है ॥

६ वायुके नामरूपके त्याग कियेसैं--

(१) "आकाश है" ।

(२) "आकाश भासताहै" ।

(३) "आकाश प्रिय है" । काहेतें आकाश रहनैफिरनैकूं अवकाश देताहै ।

(४) "आकाश" ऐसा नाम है । औ

(५) "शब्दगुणयुक्त" रूप है ॥

७ आकाशके नामरूपके त्याग कियेसैं--

(१) "पीछे क्या है सो मैं जानता नहीं"। ऐसा अज्ञान है । सो

(२) "अज्ञान भासता है" ।

(३) "अज्ञान प्रिय है" काहेतें अज्ञानी जीवनकूं प्रिय है । औ अज्ञान प्रपंचका कारण होनैसैं जीवनका निर्वाह करताहै ।

(४) "अज्ञान" ऐसा **नाम** है । औ

(५) "आवरणविक्षेपशक्तिवाला अनादि अनिर्वचनीय भावरूप" यह **रूप** है ॥

८ **अज्ञानके नामरूपके त्याग कियेसैं**—

(१) "कछु बी नहीं है" ऐसै प्रतीयमान सर्ववस्तुनका अभाव रहताहै ।

(२) "अभाव **भासताहै**" ।

(३) "अभाव शून्यध्यानीनकूं **प्रिय** है" । याका

(४) "अभाव" ऐसा **नाम** है । औ

(५) "सर्ववस्तुनका अभाव (निषेधसुख-प्रतीतिका विषय)" **रूप** है ॥

अभावके नामरूपके त्याग कियेसैं—

(१) अभावत्वका स्वरूपभूत अधिष्ठान । सत्वस्तुहीं अवशेष रहताहै । सो

(२) अभावके अभावपनेकूं प्रकाशताहै । यातैं **चित्** है । औ

(३) दुःखसैं भिन्न है । यातैं **आनंद** है ॥

इसरीतिसैं

१ सर्वनामरूपविषै अनुगत अव्यभिचारी नामरूपका अधिष्ठानब्रह्म सैमान्यचैतन्य है । सो **सत्य** है । औ

॥ १५५ ॥

१ सुषुप्ति मूर्छा औ समाधिका प्रकाशक सामान्यचैतन्य है ॥

२ "घटकूं मैं जानताहूं" इसरीतिसैं प्रमाता। प्रमाण औ प्रमेयरूप त्रिपुटीका प्रकाशक साक्षी **सामान्य-चैतन्य** है ॥

३ जाग्रदादिअवस्थाकी संधिनका प्रकाशक **सामान्य-चैतन्य** है ॥

४ तैसैंहीं वृत्तिनकी संधिनका प्रकाशक **सामान्य-चैतन्य** है ॥

५ अंगुष्ठके अग्रभागका प्रकाशक **सामान्य-चैतन्य** है ॥

६ देशांतरविषै वृत्ति गई होवै। तब तिसके मध्यभागका प्रकाशक **सामान्यचैतन्य** है ॥

७ सूर्यचंद्राकार वृत्ति हुयीहोवै तिसके मध्यभागका प्रकाशक **सामान्यचैतन्य** है ॥

८ "मेरुकूं मैं नहीं जानताहूं" ऐसैं अज्ञानविशिष्टमेरुका प्रकाशक **सामान्यचैतन्य** है ॥

२ घटके नामरूप पटविषै नहीं औ पटके नामरूप घटविषै नहीं। तातैं परस्पर[१५६]व्यभिचारी ये नामरूप **मिथ्या** हैं ॥

यह सामान्यचैतन्यके जाननैविषै दृष्टांत है ॥

*** १९६ प्रश्नः—उक्त सामान्यचैतन्यरूप ब्रह्मकी सर्वतैं अधिक सूक्ष्मता औ व्यापकता कैसैं है ?**

उत्तरः—

१ जो जो कार्य है। सो स्थूल औ परिच्छिन्न होवैहै। औ

२ जो जो कारण है। सो सूक्ष्म औ व्यापक (अधिकदेशवर्ति) होवैहै। यह नियम है॥

जातैं ब्रह्म सर्वका कारण है यातैं सर्वसैं अधिक सूक्ष्म औ व्यापक है। सो अब दिखावैहैं:—

॥ १५६ ॥ जो वस्तु कहींक होवै औ कहींक न होवै। सो वस्तु **व्यभिचारी** है॥

१ (१) जातैं समुद्रजलसैं कठिण फेन औ लवण होवैहैं। यातैं जान्याजावैहै कि पृथिवी जलका कार्य है। तातैं **पृथिवीतैं जल सूक्ष्म औ व्यापक है॥**
किंवा

(२) पृथिवीके पाषाणआदिकअवयव वस्त्रविषै डालेहुये निकसते नहीं। औ

(३) जल वस्त्रविषै ठहरता नहीं। औ

(४) पृथिवीमैं जहां जहां खोदके देखो तहां तहां जल निकसताहै। औ

(५) पुराणोंविषै पृथिवीतैं दशगुणअधिकदेशवर्ति जल कहाहै।

यातैं बी पृथिवीतैं जल सूक्ष्म औ व्यापक है।

२ (१) तैसैं अग्निआदिकके तापसैं शरीरविषै प्रस्वेद (प्रसीना) छूटताहै औ वर्षा होवैहै। यातैं जान्याजावैहै कि जल अग्निका कार्य है। तातैं **जलतैं अग्नि** (तेज) **सूक्ष्म है औ व्यापक है ॥** किंवा

(२) जल वस्त्रविषै ठहरता नहीं परंतु घटविषै ठहरताहै। औ

(३) सूर्यादिकका प्रकाश घटविषै बी ठहरता नहीं। औ

(४) पुराणोंविषै जलतैं दशगुणअधिकदेशवर्ति तेज कहाहै।

यातैं बी जलतैं तेज सूक्ष्म है औ व्यापक है ॥

३ (१) तैसें अग्निका जन्म औ नाश पवनके आधीन है । यातैं जान्याजावैहै कि तेज वायुका कार्य हैं । तातैं तेजतैं वायु सूक्ष्म है औ व्यापक है ॥
किंवा

(२) सूर्यादिकका प्रकाश घटादिपात्रविषै ठहरता नहीं परंतु नेत्रसैं दीखताहै औ वायु तौ नेत्रसैं बी दीखता नहीं । अरु

(३) पुराणोंविषै तेजतैं दशगुणअधिक वायु कहाहै ।

यातैं तेजतैं वायु सूक्ष्म है औ व्यापक है ॥

४ (१) तैसैं वायुकी उत्पत्ति स्थिति अरु लय आकाश (पुलार) विषैहीं होवैहै। यातैं जान्याजावैहै कि वायु आकाशका कार्य है । तातैं वायुतैं **आकाश सूक्ष्म है औ व्यापक है ॥**

किंवा

(२) वायु नेत्रसैं दीखता नहीं परंतु त्वचासैं स्पर्शगुणद्वारा ग्रहण होताहै औ आकाश तो त्वचासैं बी ग्रहण होता नहीं । औ

(३) पुराणोंविषै वायुतैं दशगुणअधिकदेश-वर्ति आकाश कहाहै ॥

यातैं वी सो **आकाश वायुतैं** सूक्ष्म औ व्यापक है ॥

५ (१) तैसैं "आकाशसैं आगे क्या होवैगा" ऐसा विचार कियेहुये "मैं नहीं जानताहूं" ऐसैं बुद्धिके कुंठीभावका आश्रय (विषय) अज्ञान प्रतीत होता है । यातैं जान्याजावैहै कि आकाश अज्ञानका कार्य है । तातैं सो **अज्ञान आकाशतैं** सूक्ष्म औ व्यापक है ॥

किंवा

(२) आकाश त्वचासैं ग्रहण होता नहीं परंतु मनसैं ग्रहण होताहै । औ अज्ञान मनसैं बी ग्रहण होता नहीं । औ

(३) आकाशतैं अनंतगुणअधिक अज्ञान शास्त्रविषै कहाहै ।

यातैं बी सो अज्ञान आकाशतैं सूक्ष्म औ व्यापक है ॥

६ (१) तैसैं "मैं नहीं जानताहूं" इस अनुभव-
का विषय जो अज्ञान । ताका प्रकाश
जाननैवाले चेतनसैं होवैहै । औ
[१] "अज्ञान है ।
[२] अज्ञान भासताहै ।
[३] अज्ञान अज्ञपुरुषकूं प्रिय है॥"
इसरीतिसैं अज्ञानविषै अनुस्यूत अस्तिभाति-
प्रियरूप ब्रह्मचेतन भासताहै । यातैं अज्ञान
ब्रह्मचेतनके आश्रितहै । तातैं **ब्रह्मचेतन
अज्ञानतैं सूक्ष्म औ व्यापक है** ॥ किंवा
(२) अज्ञान मनकरि ग्रहण होता नहीं
परंतु "मैं नहीं जानताहूं" इस
अनुभवरूप लिंगकरि ताका अनुमान
होवैहै । औ ब्रह्मचेतन स्वयंप्रकाशरूप
होनैतैं किसी वी प्रमाणका विषय
नहीं । औ

(३) शरीरविषै तिलकी न्यांई ब्रह्मके एकदेशविषै अज्ञान स्थित है । औ अवशेष रहा ब्रह्म शुद्धस्वप्रकाश है । ऐसैं श्रुतिविषै कहाहै ।

यातैं बी सो **ब्रह्मचेतन अज्ञानतैं सूक्ष्म औ व्यापक** है ॥

इसरीतिसैं सामान्यचैतन्यरूप ब्रह्मकी सर्वप्रपंचसैं अधिकसूक्ष्मता औ व्यापकता है ॥

*** १९७ प्रश्नः–सामान्यचैतन्यके जाननैसैं क्या निश्चय करना ?**

उत्तरः—

१ (१) अस्तिभातिप्रियरूप सामान्यचैतन्य जो ब्रह्म **सो मैं** हूं । औ

(२) **मैं सो** अस्तिभातिप्रियरूप सामान्यचैतन्यब्रह्म हूं । औ

२ नामरूपजगत् मेरेविषै कल्पित है ।

यह निश्चय करना ॥

* १९८ प्रश्नः—इसरीतिसैं निश्चय कियेसैं क्या होवैहै ?

उत्तरः—इसरीतिसैं निश्चय कियेसैं सर्वअनर्थकी निवृत्ति औ परमानंदकी प्राप्तिरूप मोक्ष होवैहै ॥

इति श्रीविचारचंद्रोदये सामान्यविशेषचैतन्यवर्णननामिका दशमकला समाप्ता १०



॥ अथ एकादशकलाप्रारंभः ॥ ११ ॥

॥ "तत्वं" पदार्थैक्यनिरूपण ॥



॥ इंद्रविजय छंद ॥

वाच्य रु लक्ष्य लखी तत्-त्वंपद ।
लक्ष्य दुहूंकुर एक दृढावै ॥
भिन्न जु देशहि काल सु वस्तु रु ।
धर्मसमेत उपाधि उडावै ॥
जन्म थिती लय कारक माँयिक ।
जाननहार सबी जग भावै ॥
ईश्वर वाच्य सु है ततपादहि ।
ब्रह्म सु लक्ष्य उपाधि अभावै ॥ २२ ॥

॥ १५७ ॥ मायाउपाधिवान् ॥

संस्रति मानत आपहिमें पर-
तंत्र अविर्द्यक अल्प जनावै ॥
त्वंपद वाच्य सु जीव विवेचित ।
लक्ष्य सु साक्षि उपाधि ढहावै ॥
वाच्य दुअर्थ हि भेद वि है पुनि ।
लक्ष्य विभेद न रंचक गावै ॥
ब्रह्म अहं इस भांति जु जानत ।
सोई पीतांवर ब्रह्महि पावै ॥ २३ ॥

* १९९ प्रश्नः—"तत्" पद सो क्या है ?

उत्तरः—सामवेदकी छांदोग्यउपनिषद्के पष्ट-प्रपाठक (अध्याय) विषै श्वेतकेतु नामे पुत्रके प्रति तिसके पिता उद्दालकमुनिनैं उपदेश किये "तत्त्वमसि" महावाक्यका जो प्रथमपद । सो "तत्" पद है ॥

॥ १५८ ॥ अविद्याउपाधिवान् ॥

॥ १५९ ॥

१ इस " तत्त्वमसि " की न्याई

२ " प्रज्ञानं ब्रह्म " यह ऋग्वेदका महावाक्य है ।

३ "अहं ब्रह्मास्मि" यह यजुर्वेदका महावाक्य है। औ

४ " अयमात्मा ब्रह्म " यह अथर्वणवेदका महावाक्य है ॥

१ जो तत्पदका वाच्यअर्थ ईश्वर है औ लक्ष्यअर्थ शुद्धब्रह्म है । सोई ऊपरलिखे तीनमहावाक्यगत " ब्रह्म " शब्दका वाच्यअर्थ अरु लक्ष्यअर्थ है । औ

२ जो त्वंपदका वाच्यअर्थ जीव है अरु लक्ष्यअर्थ कूटस्थसाक्षी है । सोई उक्ततीनमहावाक्यगत " प्रज्ञानं " " अहं " " अयं " पदसंहित " आत्मा" इन तीनपदनका वाच्यअर्थ औ लक्ष्यअर्थ है । औ

३ सारे " तत्त्वमसि " वाक्यका जो जीवब्रह्मकी एकतारूप अर्थ है । सोई उक्त तीनमहावाक्यनका अर्थ है ॥

* २०० प्रश्नः- " त्वं " पद सो क्या है ?

उत्तरः--इसीहीं " तत्त्वमसि " महावाक्यका दूसरापद । सो " त्वं " पद है ॥

* २०१ प्रश्नः-वाच्यार्थ औ लक्ष्यार्थ सो क्या है ?

उत्तरः--शब्दका अर्थके साथि जो संबंध सो शब्दकी वृत्ति कहियेहै ॥ सो वृत्ति दोप्रकारकी है । १ एक शक्तिवृत्ति है औ २ दूसरी लक्षणावृत्ति है ॥

१ शब्दविषै अर्थके ज्ञान करनैका सामर्थ्यरूप जो शब्दका अर्थके साथि साक्षात्संबंध । सो शब्दकी शक्तिवृत्ति है ॥ औ

२ शक्तिवृत्तिसैं जानेहुये अर्थद्वारा जो शब्दका अर्थके साथि परंपरारूप संबंध है । सो शब्दकी लक्षणावृत्ति है ॥

तिनमैं

१ शक्तिवृत्तिकरि जो अर्थ जानियेहै सो शब्दका वाच्यअर्थ कहियेहै । ताहीकूं शक्यअर्थ औ मुख्यअर्थ बी कहैहैं ॥ औ

२ लक्षणावृत्तिकरि जो अर्थ जानियेहै । सो शब्दका लक्ष्यअर्थ कहियेहै ॥

* २०२ प्रश्नः–लक्षणावृत्ति कितने प्रकारकी है ?

उत्तरः–१ जहत् २ अजहत् औ ३ भागत्यागके भेदतैं लक्षणावृत्ति तीनप्रकारकी है ॥

* २०३ प्रश्नः–तीनप्रकारकी लक्षणाके लक्षण औ उदाहरण कौनसे हैं ?

उत्तरः–

१ जहां संपूर्णवाच्यअर्थका त्यागकरिके वाच्यअर्थके संबंधीका ग्रहण होवै । सो जहत्लक्षणा है ॥

जैसें कोईक पुरुषनै काहूकूं पूछ्या किः—
"गाईका वाडा कहां है?" तब तिसनैं कह्या कि
"गंगाविषै गाईका वाडा है" ॥ इहां गंगापदका
वाच्यअर्थ देवनदीका प्रवाह है। तिसविषै गाई-
का वाडा संभवै नहीं। यातैं संपूर्णवाच्यअर्थ
जो देवनदीका प्रवाह। ताका त्यागकरिके।
तिसके संबंधी तीरका ग्रहण है ॥

२ जहां वाच्यअर्थका त्याग न करिके तिसके
संबंधीका ग्रहण होवै। सो **अजहत्लक्षणा** है ॥

जैसें किसीनैं कह्या किः—"शोण दौडता-
है" ॥ तहां शोणपदका वाच्यअर्थ जो लालरंग
है। तिसविषै दौडना संभवै नहीं। यातैं लाल-
रंगवाला घोडा दौडताहै। ऐसैं वाच्यअर्थका
त्याग न करिके तिसके संबंधी घोडेरूप अधिक-
अर्थका ग्रहण होवैहै ॥

३ जहां विरोधी कछुकवाच्यभागका त्याग-करिके तिसके संबंधी अविरोधी कछुकवाच्यभागका ग्रहण होवै । सो **भागत्यागलक्षणा** है ॥

जैसैं पूर्व किसी देशकालविषै देख्या पुरुष अन्यदेशकालविषै देखनैमैं आवै । तब देखनै-हारा पुरुष कहता है किः—तिस (दूर) देश औ तिस (भूत) कालविषै जो पुरुष देख्याथा सो पुरुष इस (समीप) देश औ इस (वर्तमान) कालविषै आयाहै" ॥ इहां तिस देशकाल औ इस देशकालरूप वाच्यभागकी एकताका विरोध है । यातैं तिनकी दृष्टि त्यागकरिके । "पुरुष यहहीं है" ऐसैं अविरोधवाच्यभागका ग्रहण होवैहै ॥

*** २०४ प्रश्नः—तीनप्रकारकी लक्षणामैंसैं महावाक्य-विषै कौनसी लक्षणा संभवैहै ?**

उत्तरः—

१ जहां जहत्लक्षणा होवै । तहां संपूर्ण वाच्य-
अर्थका त्याग होवैहै ॥ जो महावाक्यविषै
जहत्लक्षणा मानिये । तौ

(१) "तत्" "त्वं" पदके वाच्यअर्थविषै
प्रवेश भये ब्रह्मचैतन्य औ साक्षी-
चैतन्यका त्याग होवैगा । औ

(२) तिनतैं भिन्न असत्जडदुःखरूप प्रपं-
चका ग्रहण करना होवैगा । अथवा-
समष्टि व्यष्टि प्रपंचमय उपाधि (विशे-
षणरूप वाच्यभाग) का वी चेतनके
साथि त्याग कियेसैं अवशेष रहे
शून्यका ग्रहण करना होवैगा ॥

तातैं महाअनर्थकी प्राप्ति होवैगी । तिसतैं
पुरुषार्थ सिद्ध होवै नहीं । यातैं **महावाक्य-
विषै जहत्लक्षणा संभवै नहीं ॥**

२ जहां अजहत्‌लक्षणा होवै तहां वाच्यअर्थका कछु बी त्याग होवै नहीं । औ अधिकअर्थका ग्रहण होवैहै ॥ जो महावाक्यविषै अजहत्‌-लक्षणा मानिये तौ "तत्" "त्वं" पदका वाच्यअर्थ ज्यूंका त्यूं बन्यारहैगा औ ताके साथि शून्यरूप अधिकअर्थका ग्रहण करना-होवैगा । यातैं एकताका विरोध दूरी होवै नहीं । तातैं लक्षणा करनैका कछु प्रयोजन सिद्ध होवै नहीं । यातैं **महावाक्यविषै अजहत्‌लक्षणा संभवै नहीं ॥**

३ जहां भागत्यागलक्षणा होवै तहां विरोधी-भागका त्याग करीके अविरोधीभागका ग्रहण होवैहै ॥ जो महावाक्यविषै भागत्यागलक्षणा मानिये तौ

(१) "तत्" "त्वं" पदके वाच्यअर्थमैंसैं धर्मसहित मायाअविद्यारूप विरोधी-भागका त्याग होवैहै । औ

(२) अविरोधीअसंगशुद्धचेतनभागका ग्रहण होवैहै ।

तातैं

(१) तिनकी एकता बी बनैहै । औ

(२) तिसतैं परमपुरुषार्थकी प्राप्ति होवैहै ।

यातैं **महावाक्यविषै भागत्यागलक्षणा संभवैहै** ॥

* २०५ प्रश्नः—"तत्" पदका वाच्यअर्थ औ लक्ष्य-अर्थ क्या है ?

उत्तरः—

१ अव्याकृत जो माया सो ईश्वरका देश है ॥

२ उत्पत्ति स्थिति औ प्रलय। ये तीन ईश्वरके काल हैं ॥

३ सत्त्वगुण रजोगुण औ तमोगुण । ये तीन ईश्वरके वस्तु हैं। कहिये सृष्टिकी सामग्री हैं॥

४ विराट् हिरण्यगर्भ औ अव्याकृत । ये तीन ईश्वरके शरीर हैं॥

५ वैश्वानर सूत्रात्मा औ अंतर्यामी । ये तीन ईशपनेके अभिमानी हैं॥

॥ १६० ॥ **यद्यपि** माया औ तीनगुण एकहीं पदार्थ हैं। यातें ईश्वरके देश वस्तु औ शरीरकी एकता होवैहै । तथापि जैसें कुलालकूं घट करनेके लिये

१ मृत्तिकारूप पृथ्वी **देश** है। औ

२ मृत्तिकाका पिंड **वस्तु** है। औ

३ अस्थिआदिकरूप पृथ्वीका भाग **शरीर** है।

तिनकी एकताका असंभव नहीं है। तैसें ईश्वरके बी देशआदिककी एकताका असंभव नहीं है॥

६ "मैं एक हूं। सो बहुरूप होऊं" ऐसी जो ईक्षणा तिसकूं आदिलेके " जीवरूपकरि प्रवेश भया " इहांपर्यंत जो सृष्टि। सो **ईश्वरका कार्य** है॥

७ (१) सर्वशक्तिपना (२) सर्वज्ञपना (३) व्यापकपना (४) एकपना (५) स्वाधीन-पना (६) समर्थपना (७) परोक्षपना (८) मायाउपाधिवान्‌पना। ये आठ **ईश्वरके धर्म** हैं॥

१ (१) इन सर्वसहित **माया**। औ
(२) तिसविषै प्रतिबिंबरूप **चिदाभास**। औ
(३) तिनका अधिष्ठान **ब्रह्म**।
ये सर्व मिलिके **ईश्वर** कहियेहै। सो " तत् " **पदका वाच्यअर्थ** है॥

२ इन सर्वसहित माया औ चिदाभासभागका त्यागकरिके अवशेष रह्या जो विराट्‌हिरण्यगर्भ औ अव्याकृतका अधिष्ठान ईश्वरसाक्षी शुद्धब्रह्म सो " **तत्** " **पदका लक्ष्यअर्थ** है॥



* २०६ प्रश्नः—ब्रह्मका औ मायामें प्रतिबिंबरूप ईश्वरका परस्परअध्यास (अन्योन्याध्यास) कैसें है ?

उत्तरः—अविचारदृष्टिसें

१ ब्रह्मकी सत्यताका ईश्वरविषे संसर्ग (तादात्म्यसंबंध) अध्यस्त है । यातें ईश्वर सत्य प्रतीत होवैहै । औ

२ ईश्वर अरु ताकी कारणताका स्वरूप ब्रह्ममें अध्यस्त है । यातें ब्रह्म जगत्का कारण प्रतीत होवैहै ॥ याहीका अनुवाद तटस्थलक्षणके बोधक श्रुति पुराण औ आचार्योंके वचन करैहैं ॥

इसरीतिसें ब्रह्म औ ईश्वरका परस्पर अध्यास है ॥

* २०७ प्रश्नः—उक्तअध्यासकी निवृत्ति किसतैं होवैहै ?

उत्तरः—उक्तअध्यासकी निवृत्ति विवेकज्ञानसैं होवैहै ॥

* २०८ प्रश्नः—" त्वं "पदका वाच्यअर्थ औ लक्ष्यअर्थ क्या है ?

उत्तरः—

१ चक्षु कंठ औ हृदय । ये तीन जीवके देश हैं॥

२ जाग्रत् स्वप्न औ सुषुप्ति ये तीन जीवके कालहैं।

३ स्थूल सूक्ष्म औ कारण । ये तीन जीवके वस्तु (भोगसामग्री) हैं ॥ औ

४ यहहीं शरीर है ॥

५ विश्व तैजस औ प्राज्ञ । ये तीन जीवपनेके अभिमानी हैं ॥

६ जाग्रत्सैं आदिलेके मोक्षपर्यंत जो भोगरूप संसार। सो जीवका कार्य है ॥

७ (१) अल्पशक्तिपना (२) अल्पज्ञपना (३) परिच्छिन्नपना (४) नानापना (५) पराधीनपना (६) असमर्थपना (७) अपरोक्षपना औ (८) अविद्याउपाधिवान्‌पना । ये आठ जीवके धर्म हैं ॥

१ (१) इन सर्वसहित जो अविद्या । औ (२) तिसविषै प्रतिबिंबरूप चिदाभास । औ (३) तिनका अधिष्टान कूटस्थ ।

ये सर्व मिलिके जीव कहियेहै ॥ सो जीव "त्वं" पदका वाच्यअर्थ है ॥

२ इन सर्वसहित चिदाभासभागका त्याग करिके अवशेष रह्या जो स्थूलसूक्ष्मकारणशरीरका अधिष्ठान जीवसाक्षी कूटस्थ आत्मा । सो "त्वं" पदका लक्ष्यअर्थ है ॥

* २०९ प्रश्नः–कूटस्थका औ बुद्धिमें प्रतिबिंबरूप जीवका परस्परअध्यास कैसें है ?

उत्तरः–अविचारदृष्टिसें

१ कूटस्थकी सत्यताका संसर्ग (तादात्म्यसंबंध) जीवमें अध्यस्त है। यातें जीव मिथ्या प्रतीत होवै नहीं । किंतु सत्य प्रतीत होवैहै । औ

२ जीव अरु ताके कर्त्तापनआदिकधर्मका स्वरूप । कूटस्थमें अध्यस्त है । यातें कूटस्थ अकर्त्ता अभोक्ता असंसारी नित्यमुक्त असंग ब्रह्मरूप प्रतीत होवै नहीं । किंतु तातें विपरीत प्रतीत होवैहै ॥

इसरीतिसें कूटस्थका औ जीवका परस्पर अध्यास है ॥

* २१० प्रश्नः–उक्तअध्यासकी निवृत्ति किससें होवैहै ?

उत्तरः–उक्तअध्यासकी निवृत्ति विवेकज्ञानसें होवैहै ॥

* २११ प्रश्नः—"तत्" पद औ "त्वं" पदके अर्थकी महावाक्यविषै कथन करी एकता कैसैं संभवै ?

उत्तरः—

१ यद्यपि "तत्" पद औ "त्वं" पदके वाच्य-अर्थ जो उपाधिसहित चैतन्य (ईश्वर औ जीव) हैं । तिनकी एकताका **विरोध** है ।

२ तथापि "तत्" पदका लक्ष्यार्थ ब्रह्म औ "त्वं" पदका लक्ष्यार्थ आत्मा । तिनकी एकताका कछु वी **विरोध नहीं** ॥

ऐसैं "तत्" पद औ "त्वं" पदके अर्थकी महावाक्यविषै कथन करी एकता संभवैहै ॥

* २१२ प्रश्नः—"मैं ब्रह्म हूं" ऐसा ब्रह्मआत्माकी एकताका ज्ञान किसकूं होवैहै ?

उत्तरः—यह ज्ञान चिदाभासकूं होवैहै ॥

* २१३ प्रश्नः–ब्रह्मतें भिन्न जो चिदाभास । सो आपकूं ब्रह्मरूप करीके कैसें जानैहै ?

उत्तरः–

१ जीवभावके अधिष्ठान कूटस्थका ब्रह्मके साथि मुख्यअभेद है । औ

२ बुद्धिसहित चिदाभासका ब्रह्मके साथि अपने स्वरूपकूं बाध करीके अभेद होवैहै ॥

यातैं

१ चिदाभास अपने स्वरूपका बाध करीके आपकूं अहंशब्दके लक्ष्यअर्थ कूटस्थरूप जानैहै । औ

२ अपने निजरूप कूटस्थका " मैं कूटस्थ हूं " ऐसें अभिमान करिके " मैं ब्रह्म हूं " । ऐसें जानैहै ॥

इसरीतिसैं चिदाभास आपकूं ब्रह्मरूप करिके जानैहै ॥

* २१४ प्रश्नः–इन "तत्" औ "त्वं" पदके लक्ष्यार्थकी एकताविषै दृष्टांत क्या है ?

उत्तरः–दृष्टांतः—

१ जैसैं

(१) घटमठउपाधिसहित घटाकाश औ मठाकाशकी एकताका **विरोध** है ।

(२) तथापि घटमठरूप उपाधिकी दृष्टिकूं छोडिके केवलआकाशकी एकताका **विरोध नहीं** ॥

२ जैसैं

(१) काचकी हंडी औ मृत्तिकाकी हंडीविषै दीपक जलताहोवै । तिनकी उपाधि दोहंडीकी एकताका **विरोध** है ॥

(२) तथापि अग्निपनैकरि दीपककी एकताका **विरोध नहीं** ॥

३ जैसें

(१) राजा औ रवारी (भेड) होवैं । तिनकी उपाधि सेना औ अजावर्गकी एकताका **विरोध** है ।

(२) तथापि मनुष्यपनेकी एकताका **विरोध** नहीं ॥

४ जैसें

(१) गंगाजळ औ गंगाजळका कळश होवैं । तिनकी उपाधि नदी औ कळशकी एकताका **विरोध** है ।

(२) तथापि केवलगंगाजळकी एकताका **विरोध** नहीं ॥

५ जैसें

(१) सागर औ जलका बिंदु होवै । तिनकी उपाधि सागर औ बिंदुकी एकताका विरोध है ।

(२) केवलजलकी एकताका विरोध नहीं ॥

६ जैसें

(१) कोईएकपुरुषकूं पिताकी अपेक्षासैं पुत्र कहते हैं औ पितामहकी अपेक्षासैं पौत्र कहतेहैं । तिनकी उपाधि पिता औ पितामहकी एकताका विरोध है ।

(२) केवलपुरुषकी एकताका विरोध नहीं ॥

७ जैसें कोई काशीका राजा था । सो हस्ती-पर बैठिके स्वारीमैं निकस्याथा । ताकूं कोई यात्रावासी पुरुषनै अछीतरहसैं देख्याथा ॥ पीछे सो स्वदेशकूं गया औ काशीके राजाकूं कोई अन्यराजानै राज्य छीनके निकासदिया । तब सो लंगोटी पहरके अंगमैं विभूति लगायके हाथमैं तुंबी औ दंड लेके नग्नपादसैं तीर्थयात्राकूं गया ॥ फिरते फिरते तिस यात्रावासीपुरुषके ग्राममैं गया ॥ तब तिसकूं देखिके सो यात्रावासीपुरुष अन्ययात्रावासीपुरुषनकूं कहता भया किः—अपननै काशीविषै जो राजा देख्याथा । “ **सो यह है** ” ॥

तत्र अन्ययात्रावासीपुरुष कहतेभये कि:—

(१) सो देश अन्य । यह देश अन्य ॥

(२) ताका काल (अवस्था) अन्य । याका काल अन्य ॥

(३) तिसकी वस्तु (सामग्री) अन्य । याकी वस्तु अन्य ॥

(४) तिसका अभिमान अन्य । इसका अभिमान अन्य ॥

(५) तिसका कार्य अन्य । इसका कार्य अन्य ॥

(६) तिसके धर्म अन्य । इसके धर्म अन्य ॥

यातैं तिस काशीके राजाकी औ इस भिक्षुककी एकता कैसैं बनै?"

तब सो प्रथमयात्रावासीपुरुष कहताभया किः—“ तिसके औ इसके (१) देश (२) काल (३) वस्तु (४) अभिमान (५) कार्य औ (६) धर्मका त्याग करीके दोनूंविषै अनुगत (अनुस्यूत) जो पुरुषमात्र सो एकहीं है” ॥

सिद्धांतः—तैसैं जीवईश्वरके बी देशकालआदिकका त्याग करीके । दोनूंविषै अनुगत जो चेतनमात्रब्रह्म औ आत्मा सो एकहीं है ॥ यातैं “ ब्रह्म सो मैं हूं ” औ “ मैं सो ब्रह्म हूं ” ऐसा दृढनिश्चय करना । सोई तत्त्वज्ञान है ॥

याहीतैं सर्वदुःखकी निवृत्ति औ परमानंदकी प्राप्तिरूप मोक्ष होवै है ॥

इति श्रीविचारचंद्रोदये “ तत्त्वमसि ” महावाक्यगत “ तत्त्वं ” पदार्थैक्यनिरूपण नामिका एकादशकला समाप्ता ॥ ११ ॥

॥ अथ द्वादशकलाप्रारंभः ॥ १२ ॥
॥ ज्ञानीके कर्मनिवृत्तिका प्रकारवर्णन ॥



॥ तोटक[161]छंद ॥

जिन आतमरूप पयो[162] जु भले ।
तिस त्रैविधकर्म मिटे सकले ॥
तेमैं[163] आवृत्ति आश्रित संचित ले ।
निज बोध सु पावक सर्व जले ॥ २४ ॥
जड चेतन गांठ विभेद वले ।
दृढराग द्वेष कषाय गले ॥
जलमैं जिम लिप्त न कंजदले[164] ।
परसे न अगामि जु कर्म मले ॥ २५ ॥

॥ १६१ ॥ ठुमरीमैं गाया जावैहै ॥

॥ १६२ ॥ देख्यो ॥

॥ १६३ ॥ अज्ञानकी आवरणशक्तिके आश्रित संचितकर्मोंकूं लेके ॥ ॥ १६४ ॥ कमलका पत्र ॥

इस जन्म अरंभक कर्म फले ।
सुखदुःखहि भोगत होत भले ॥
इस भांति जु होवत जन्म विले ।
पिखैं[१६५] रूप पीतांबर स्वं विमले ॥ २६ ॥

* २१५ प्रश्नः–कर्म सो क्या है ?

उत्तरः--शरीर वाणी औ मनकी जो क्रिया सो कर्म है ॥

* २१६ प्रश्नः–कर्म कितनै प्रकारका है ?

उत्तरः—१ संचित २ प्रारब्ध औ ३ क्रियमाण (आगामि) भेदतैं कर्म तीन-प्रकारका है ॥

* २१७ प्रश्नः–संचितकर्म सो क्या है ?

उत्तरः--१ अनेकअतीतजन्मोंविषै संचय-किया जो कर्म । सो संचितकर्म है ॥

॥ १६५ ॥ देखिके ॥

॥ २१८ प्रश्नः–प्रारब्धकर्म सो क्या है ?

उत्तरः–२ अनेकसंचितकर्मनके मध्यसैं परिपक्व भया औ ईश्वरकी इच्छासैं इस वर्त्तमान-देहका आरंभक जो कोईएकसंचितकर्म । सो **प्रारब्धकर्म** है ॥

॥ २१९ प्रश्नः–क्रियमाणकर्म सो क्या है ?

उत्तरः–३ ज्ञानतैं पूर्व वा पीछे इस वर्त्तमान-देहविषै मरणपर्यंत करियेहै जो कर्म । सो **क्रियमाणकर्म** है ॥

॥ २२० प्रश्नः–ज्ञानीके कर्मकी निवृत्ति किसरीतिसैं होवैहै ?

उत्तरः–१ ज्ञानसैं अज्ञानके आवरणअंशकी निवृत्ति होवैहै ॥ आवरणकी निवृत्तिके भये आवरणकूं आश्रयकरिके स्थित **संचित** कहिये पूर्वके अनेकजन्मविषै किये कर्मकी निवृत्ति (नाश) होवैहै । औ

२ ज्ञानके आगेपीछे इसजन्मविषै किये क्रियमाणकर्मका "मैं अकर्ता अभोक्ता असंग ब्रह्म हूं ॥" इस निश्चयके बलसैं अपनै आश्रय भ्रमज-तादात्म्यके नाशकरिके औ रागद्वेषके अभावतैं जलविषै स्थित कमलपत्रकी न्यांई ज्ञानीकूं स्पर्श होवै नहीं। किंतु ज्ञानीके **क्रियमाण** जो इसजन्मविषै किये शुभ औ अशुभकर्मका क्रमतैं सुहृद कहिये सकामीभक्त औ द्वेषी कहिये निंदकजन ग्रहण करैं हैं।

३ औ अज्ञानकी विक्षेपशक्तिके आश्रित ज्ञानी-के **प्रारब्ध** कहिये पूर्वके किसी एकजन्मविषै किये इसजन्मके आरंभ कर्मकी भोगसैं निवृत्ति होवैहै।

तातैं ज्ञानी सर्वकर्मसैं मुक्त है ॥ याहीसैं कर्म-रचितजन्मादिकसंसारसैं बी मुक्त है ॥

इसरीतिसैं **ज्ञानीके कर्मकी निवृत्ति** होवैहै ॥

इति श्रीविचारचंद्रोदये ज्ञानीकर्मनिवृत्ति-प्रकारवर्णननामिका द्वादशकला समाप्ता ॥

॥ अथ त्रयोदशकलाप्रारंभः ॥ १३ ॥

॥ सप्तज्ञानभूमिकावर्णन ॥



॥ तोटकछंद ॥

निज बोधकि भूमि सु सप्त अहैं ।
इस भांति वसिष्ठ[१६६] मुनीश कहै ॥
शुभसाधन संपति आदि लहै ।
श्रवणादिविचार द्वितीय वहै ॥ २७ ॥
निदिध्यासन तीसरभूमि गहै ।
अपरोक्ष निजातम चौथि चहै ॥
हमता ममता विन पंचम है ।
छटवी सब वस्तु अकार दहै ॥ २८ ॥

॥ १६६ ॥ योगवासिष्ठग्रंथविषे ॥

सतमी तुरिया जु वरिष्ठित है ।
सववृत्ति विलीन चिदात्म रहै ॥
इवँ[१६७] गाढसुषुप्ति न जागत है ।
परमानंद मत्त पीतांवर है ॥ २९ ॥

* २२१ प्रश्नः–सर्वज्ञानिनका निश्चय तौ एकहीं है । परंतु स्थितिका भेद काहेतैं है ?

उत्तरः–सर्वज्ञानिनकी स्थितिका भेद ज्ञानभूमिकाके भेदतैं है ॥

* २२२ प्रश्नः–सो ज्ञानभूमिका कितनी है ?

उत्तरः–१ शुभेच्छा २ सुविचारणा ३ तनुमानसा ४ सत्त्वापत्ति ५ असंसक्ति ६ पदार्थाभाविनी ७ तुरीयगा । ये सात ज्ञानभूमिका हैं ॥

॥ १६७ ॥ गाढसुषुप्ति इव (वत्)

* २२३ प्रश्नः–शुभेच्छा सो क्या है ?

उत्तरः–१ पूर्वजन्मविषै अथवा इसजन्मविषै किये निष्कामकर्म औ उपासनासैं शुद्ध औ एकाग्र-चित्तवाले पुरुषकूं विवेकवैराग्यपट्संपत्ति औ मोक्षइच्छा । ये च्यारीसाधन होयके जो आत्माके जाननैकी तीव्रइच्छा होवैहै । सो **शुभेच्छा** नाम ज्ञानकी **प्रथमभूमिका** है ॥

* २२४ प्रश्नः–सुविचारणा सो क्या है ?

उत्तरः–२ आत्माके जाननैकी तीव्रइच्छासैं ब्रह्मनिष्ठगुरुके विधिपूर्वक शरण जायके । गुरुके मुखसैं जीवब्रह्मकी एकताके बोधक वेदांत-वाक्यकूं श्रवण करीके । तिस श्रवण किये अर्थकूं आपके मनविषै घटावनेवास्ते अनेकयुक्तियांसैं मनन (विचार) करना । सो **सुविचारणा** नाम ज्ञानकी **दूसरीभूमिका** है ॥

* २२५ प्रश्नः—तनुमानसा सो क्या है ?

उत्तरः—३ स्वरूपके साक्षात्कार कहिये अपरोक्षअनुभवअर्थ श्रवणमननद्वारा निर्णय किये ब्रह्मात्माकी एकतारूप अर्थके निरंतर चिंतनरूप निदिध्यासनसैं जो स्थूलमनकी कहिये बहिर्मुखमनकी सूक्ष्मता नाम अंतर्मुखता होवैहै । सो **तनुमानसा** नाम ज्ञानकी **तीसरी-भूमिका** है ॥

* २२६ प्रश्नः—सत्वापत्ति सो क्या है ?

उत्तरः—४ श्रवणमनननिदिध्यासनसैं संशय औ विपर्ययसैं रहित स्वरूपसाक्षात्काररूप निर्विकल्पस्थितिके भयेतैं । तत्त्वज्ञानयुक्त मनरूप सत्व (शुद्धअंतःकरण) की जो प्राप्ति होवैहै । सो **सत्वापत्ति** नाम ज्ञानकी **चतुर्थभूमिका** है ॥

* २२७ प्रश्नः—असंसक्ति सो क्या है ?

उत्तरः—५ निर्विकल्पसमाधिके अभ्यासकी परिपक्कतासैं देहविषै सर्वथा अहंताममता गलित होयके । देहादिकविषै जो सर्वथा आसक्तिका नाम प्रीतिका अभाव होवैहै । सो **असंसक्ति** नाम ज्ञानकी **पंचमभूमिका** है ॥

* २२८ प्रश्नः—पदार्थाभाविनी सो क्या है ?

उत्तरः— ६ अतिशयनिर्विकल्पसमाधिके अभ्याससैं देहादिकसर्वपदार्थनका अधिष्ठानब्रह्मरूपसैं प्रतीति होनैकरि जो अभाव कहिये अप्रतीति होवैहै । सो **पदार्थाभाविनी** नाम ज्ञानकी **षष्ठभूमिका** है ॥

* २२९ प्रश्नः—तुरीयगा सो क्या है ?

उत्तरः—७ ज्ञाता ज्ञान औ ज्ञेयरूप त्रिपुटीकी चतुर्थपंचमभूमिकाकी न्यांई भावरूपकरि औ षष्ठभूमिकाकी न्यांई अभावरूपकरि प्रतीति बी

जहां होवै नहीं। ऐसी जो स्वपरसैं उत्थानरहित तुरीयपदविषे मनकी स्थिति। सो **तुरीयगा** नाम ज्ञानकी **सप्तमभूमिका** है।

* २३० प्रश्नः—ये सप्तभूमिका किसके साधन हैं ?

उत्तरः—

१–३ प्रथम द्वितीय औ तृतीयभूमिका। **तत्त्वज्ञानके साधन हैं।** औ

४ चतुर्थभूमिका तौ तत्त्वज्ञानरूप होनैतैं **जीवन्मुक्ति औ विदेहमुक्तिके साधन हैं।** औ

५–७ पंचम षष्ठ औ सप्तमभूमिका **जीवन्मुक्तिके विलक्षणआनंदके साधन हैं॥**

इति श्रीविचारचंद्रोदये सप्तज्ञानभूमिकावर्णननामिका त्रयोदशकला समाप्ता॥ १३॥

॥ १६८ ॥

१ **कृतोपासन** कहिये ज्ञानतैं पूर्व करीहै पूर्ण उपासना जिसनै । सो

२ औ **अकृतोपासन** कहिये ज्ञानतैं पूर्ण नहीं करीहै उपासना जिसनै । सो

इस भेदतैं **चतुर्थभूमिकारूप ज्ञानका अधिकारी दोप्रकारका** है ॥ तिनमैं

१ **कृतोपासन** जो है सो तौ सम्यक्‌वैराग्यादिसाधन-करि संपन्न होवैहै औ ज्ञानके अनंतर अल्पाभ्यास-सैं झटिति पंचमआदिकभूमिकाविषै आरूढ होवैहै ॥

२ औ **अकृतोपासन** जो है तामैं सर्वसाधन स्पष्ट प्रतीत होते नहीं किंतु एकदोसाधन प्रकट होवै-हैं औ अन्यसाधन गोप्य रहतेहैं । यातैं सो बुद्धिमान् होवै तौ चतुर्थभूमिकारूप तत्त्वज्ञानकूं पावताहै । परंतु बहुकालके अभ्याससैं कदाचित् कोईक पंचमआदिकभूमिकाविषै आरूढ होवैहै । झटिति नहीं ॥

॥ अथ चतुर्दशकलाप्रारंभः ॥ १४ ॥

॥ जीवन्मुक्तिविदेहमुक्तिवर्णन ॥

——:०:——

॥ तोटकछंद ॥

जव जानत है निजरूपहिकूं ।
तव जीवन्मुक्ति समीपहिकूं ॥
भ्रमवंध निवृत्ति सदेहहिकूं[१६९] ।
सुखसंपति होवत गेहहिकूं ॥ ३० ॥
विद्वान तजै इस देहहिकूं ।
तव पावत मुक्ति विदेहहिकूं ॥
तम लेश भजे सद नाशहिकूं ।
तज देत प्रपंच अभासहिकूं ॥ ३१ ॥

॥ १६९ ॥ तव शरीरसहित पुरुषकूं भ्रमरूप वंधकी निवृत्तिस्वरूप जीवन्मुक्ति समीपहिकूं कहिये तत्काल होवैहै । यह अर्थ है ॥

सरितीं इव सागर देशहिकूं ।
चिनमात्र मिलाय विशेषहिकूं[१७१] ॥
चिद होय भजे अवशेषहिकूं ।
नहि जन्म पीतांबर शेषहिकूं ॥ ३२ ॥

॥ २३१ प्रश्नः–जीवन्मुक्ति सो क्या है ?

उत्तरः--देहादिकप्रपंचकी प्रतीतिके होते ब्रह्मस्वरूपसैं स्थिति । सो जीवन्मुक्ति है ॥

* २३२ प्रश्नः–जीवन्मुक्तिविषे प्रपंचकी प्रतीति काहेतैं होवैहै ?

उत्तरः--आवरण औ विक्षेप । ये दो

॥ १७० ॥ सागरदेशहिकूं सरिता इव (नदीकी न्यांई)

॥ १७१ ॥ स्थूलसूक्ष्मप्रपंचसहित चिदाभासरूप विक्षेपकूं ॥

अविद्याकी शक्तियां हैं । तिनमैं

१ आवरणशक्तिका ज्ञानसैं नाश होवैहै । तातैं ज्ञानीकूं अन्यजन्म होवै नहीं ।

२ परंतु प्रारब्धके बलसैं दग्धधान्यकणकी न्याई विक्षेपशक्ति (अविद्यालेश) रहैहै ।

तातैं **जीवन्मुक्तिविषै प्रपंचकी प्रतीति होवैहै** ॥

*** २३२ प्रश्नः–जीवन्मुक्तिविषै प्रपंचकी प्रतीति कैसैं होवैहै ?**

उत्तरः–

१ जैसैं रज्जुके ज्ञानसैं सर्पभ्रांतिके निवृत्त भये पीछे कंपादिक भासतेहैं । औ

२ जैसैं दर्पणके ज्ञानीकूं प्रतिबिंब भासताहै । औ

३ जैसैं मरुस्थलके ज्ञानीकूं मृगजल भासताहै । तैसै तत्त्वज्ञानीकूं जीवन्मुक्तिदशाविषै बाधितभये प्रपंचकी प्रतीति होवैहै ॥

* २३४ प्रश्नः—बाधित भये प्रपंचकी प्रतीतिविषै अन्यदृष्टांत क्या है ?

उत्तरः--दृष्टांतः--जैसैं महाभारतके युद्धमैं द्रोणाचार्यके मरण भये पीछे अश्वत्थामाआदिकके साथि युद्ध भयाहै ॥ तब सत्यसंकल्पश्रीकृष्ण-परमात्मानै यह संकल्प किया किः--" इस युद्धकी समाप्तिपर्यंत यह रथ औ घोडे ज्यूंकेत्यूंहीं बने रहैं " । यह चिंतनकरिके युद्धभूमिमैं आये ॥ तहां अश्वत्थामाआदिकोनै ब्रह्मास्त्र (अग्निअस्त्र) आदिकका समूह डाऱ्या । तिसकरि तिसी क्षणविषै अर्जुनके रथ औ घोडे भस्मीभूत भये । तौ बी श्रीकृष्णपरमात्मारूप सारथिके संकल्पके बलसैं ज्यूंके त्यूं बनेरहे । जब युद्ध समाप्त भया तब भस्मीका ढेर होगया ॥

सिद्धांतः—तैसैं

१ स्थूलदेहरूप **रथ** है।

२ ताके पुण्यपापरूप **दोचक्र** हैं।

३ तीनगुणरूप **ध्वज** है। औ

४ पांचप्राणरूप **बंधन** है। औ

५ दशइंद्रियरूप **घोडे** हैं। औ

६ शुभअशुभशब्दादिपांचविषयरूप **मार्ग** है औ

७ मनरूप **लगाम** है। औ

८ बुद्धिरूप **सारथि** (श्रीकृष्ण) है। औ

९ प्रारब्धकर्मरूप ताका **संकल्प** है। औ

१० अहंकाररूप बैठनेका **स्थान** है। औ

११ आत्मारूप **रथी** (अर्जुन) है।

१२ ताके वैराग्यादिसाधनरूप **शस्त्र** हैं।

सो रथपर आरूढ होयके सत्संगरूप **रणभूमि**-मैं गया। ताकूं गुरुरूप **अश्वत्थामा**आदिकनै महावाक्यका उपदेशरूप **ब्रह्मास्त्र**आदिक मान्या।

तिसकरि ज्ञानरूप अग्नि उदय होयके तिसी क्षणविषै देहादिप्रपंचरूप रथादिकसर्वका बाध भया । तौ बी श्रीकृष्णरूप सारथिस्थानी बुद्धिके प्रारब्धकर्मरूप संकल्पके बलसैं देहादिकका नाश होता नहीं । किंतु पीछे बी देहादिककी प्रतीति होवैहै ॥ याहीकूं बाधितानुवृत्ति कहैहैं ॥

इसरीतिसैं यह बाधित भये प्रपंचकी प्रतीतिविषै दृष्टांत है ॥

* २३५ प्रश्नः-विदेहमुक्ति सो क्या है ?

उत्तरः-

१ प्रपंचकी प्रतीतिरहित ब्रह्मस्वरूपसैं स्थिति । वा

२ प्रारब्धकर्मके भोगसैं नाश भये पीछे स्थूलसूक्ष्मशरीरके आकारसैं परिणामकूं प्राप्त भये अज्ञानका चेतनविषै विलय ।

सो विदेहमुक्ति है ॥

॥ १७२ ॥ जिसका नाश होवै सो नाशका प्रति-
योगी है ॥

१ ता प्रतियोगीकी नाशविषै प्रतीति होवैहै । औ

२ बाधविषै प्रतियोगीकी प्रतीति होवै नहीं । किंतु
तीनकालअभाव प्रतीत होवैहै ।

यह नाश औ बाधका भेद है ॥

॥ १७३ ॥ जैसें कुलालका चक्र । दंडसें फेरनैका
प्रयत्न छोडेहुये पीछे बी वेगके बलसें फिरताहै ।
तैसें बाध हुये पीछे बी प्रारब्धकर्मसें देहादिप्रपंचकी
जो प्रतीति होवै । सो बाधितानुवृत्ति है ॥

* २३६ प्रश्नः– प्रारब्धके अंत भये कार्यसहित अज्ञानलेशका विलय किस साधनसैं होवैहै ?

उत्तरः–प्रारब्धके अंत भये अधिक वा न्यून मूर्छाकालमैं यद्यपि ब्रह्माकारवृत्तिका असंभव है औ विद्वानकूं विधि बी नहीं है। तथापि सुषुप्तिकी न्यांई। ता मूर्छाकालमैं बी ब्रह्मविद्याका संस्कार है। तामैं आरूढ चेतनसैं कार्यसहित अज्ञानलेशका विलय (नाश) होवैहै ॥ औ काष्ठआरूढअग्निसैं तृणादिकका दाह होयके आपके बी दाहकी न्यांई। ता संस्कारआरूढचेतनसैं प्रपंचका विनाश होयके आप (ज्ञानके संस्कार) का बी विनाश होवैहै। पीछे असंगशुद्धसच्चिदानंद-स्वप्रकाश अपनाआप ब्रह्म अवशेष रहताहै ॥

इति श्रीविचारचंद्रो॰ जीवन्मुक्तिविदेह-मुक्तिवर्णन॰ चतुर्दशकला समाप्ता ॥ १४ ॥

॥ अथ पंचदशकलाप्रारंभः ॥ १५ ॥

॥ वेदांतप्रमेय (पदार्थ) वर्णन ॥



ललितछंद ॥ (गोपिकागीतवत्)

जन तु जानिले[१०५] ज्ञेय अर्थकूं ।
सकल छेद सं-दे अनर्थकूं ॥
सुगति कौन है हेतु ताहिको
जनक[१०६] बीचको कौन वाहिको ॥ २३ ॥

विषय बोधको कौन जानिले ।
मतक ईशको तत्त्व मानिले ॥
अहम[१०७]अर्थकूं खूब सोजिले ।
"तत" पदार्थकूं शुद्ध खोजिले ॥ २४ ॥

॥ १७४ ॥

१ वेदांतशास्त्ररूप प्रमाणसैं जन्य जो यथार्थज्ञान । सो प्रमा है ॥

२ ता प्रमासैं जाननैं योग्य जो पदार्थ । सो प्रमेय है ॥ तिनका इहां कथन है । यातैं इस (पंचदशम) कलाके विचारतैं प्रमेयगतसंशयकी निवृत्ति होवैहै ॥

प्रमेयगतसंशयका कथन हमारे किये वालबोधिनी-टीकासहित वालबोधनामकग्रंथके नवमउपदेशविषै कियाहै । तहां देखलेना ॥

॥ १७५ ॥ वेदांतके प्रमेयरूप पदार्थनकूं जानिले ॥

॥ १७६ ॥ वाहिको (मोक्षके हेतु ज्ञानको) वीचको जनक (अवांतरसाधन) कौन है?

॥ १७७ ॥ अहं (त्वं) पदके अर्थकूं ॥

पैर्रमआतमा एक मानिले ।
तहँ सदादि ऐश्वर्य आनिले ॥
सत चिदात्म सो सर्वदा अहै ।
इस पीतांबरो ज्ञानकूं गहैं ॥ २५ ॥

* २३७ प्रश्नः—मोक्षका स्वरूप क्या है ?

उत्तरः—

१ कार्यसहित अज्ञानरूप अनर्थकी कहिये बंधकी निवृत्ति । औ

२ परमानंदरूप ब्रह्मकी प्राप्ति ।

यह मोक्षका स्वरूप है ॥

॥ १७८ ॥ ब्रह्म ॥

॥ १७९ ॥ सच्चिदानंदस्वरूप सो (ब्रह्मआत्माकी एकता) सर्वदा (तीनोंकालमें) है ॥

* २३८ प्रश्नः–तिस मोक्षका साक्षात्साधन क्या है ?

उत्तरः– ब्रह्म औ आत्माकी एकताका अपरोक्षज्ञान । मोक्षका साक्षात्साधन है ॥

* २३९ प्रश्नः–मोक्षका अवांतर (ज्ञानद्वारा) साधन क्या है ?

उत्तरः–निष्कामकर्म औ उपासनाआदिक अनेक मोक्षके अवांतरसाधन हैं ॥

* २४० प्रश्नः–तिस ज्ञानका विषय क्या है ?

उत्तरः–आत्मा औ ब्रह्मकी एकता ज्ञानका विषय है ॥

* २४१ प्रश्नः–आत्माका स्वरूप क्या है ?

उत्तरः– १ देह–इंद्रिय–प्राण–मन–बुद्धि–अज्ञान औ शून्यसैं भिन्न । २ अकर्ता । ३ अभोक्ता । ४ असंग । ५ व्यापक । औ ६ चेतन । आत्माका स्वरूप है ॥

॥ २४२ प्रश्नः– ब्रह्मका स्वरूप क्या है ?

उत्तरः– १ निष्प्रपंच । २ असंग । ३ परिपूर्ण । औ ४ चेतन । ब्रह्मका स्वरूप है ॥

॥ २४३ प्रश्नः–ब्रह्मआत्माकी एकता कैसी है ?

उत्तरः– १ सच्चिदानंद । २ ऐश्वर्यस्वरूप । ३ सदाविद्यमान । ब्रह्मआत्माकी एकता है ॥

॥ २४४ प्रश्नः–ज्ञानका स्वरूप क्या है ?

उत्तरः– जीवब्रह्मके अभेदका निश्चय । ज्ञानका स्वरूप है ॥

॥ २४५ प्रश्नः– ज्ञानका साक्षात्अंतरंग (समीपका) साधन क्या है ?

उत्तरः– ब्रह्मनिष्ठगुरुके मुखसैं महावाक्यके अर्थका श्रवण । ज्ञानका साक्षात्अंतरंग साधन है ॥

* २४६ प्रश्नः– ज्ञानके परंपराअंतरंगसाधन कौनसें हैं?

उत्तरः– १ विवेक । २ वैराग्य । ३ षट्-संपत्ति (शम । दम । उपरति । तितिक्षा । श्रद्धा । समाधान) । ४ मुमुक्षुता । ५ "तत्" पद औ "त्वं" पदके अर्थका शोधन । ६ श्रवण । ७ मनन औ ८ निदिध्यासन । ये आठ ज्ञानके परंपरासें अंतरंगसाधन हैं ॥

* २४७ प्रश्नः– ज्ञानके बहिरंग (दूरके) साधन कौन हैं ?

उत्तरः–निष्कामकर्म औ निष्कामउपासना-आदिक । ज्ञानके बहिरंगसाधन हैं ॥

* २४८ प्रश्नः– ज्ञानके सर्व मिलिके कितने साधन हैं ?

उत्तरः– ज्ञानके सर्वमिलिके एकादश (११ वा कछु अधिक) साधन हैं ॥

इति श्रीविचारचंद्रोदये वेदांतप्रमेय-निरूपणनामिका पंचदशकला समाप्ता ॥१५॥

मंगलाचरणम् ॥

—:०:—

चैतन्यं शाश्वतं शांतं व्योमातीतं निरंजनम् ॥
नादबिंदुकलातीतं तस्मै श्रीगुरवे नमः ॥ १ ॥
सर्वश्रुतिशिरोरत्नविराजितपदांबुजम् ॥
वेदांतांबुजमार्तंडं तस्मै श्रीगुरवे नमः ॥ २ ॥
अज्ञानतिमिरांधस्य ज्ञानांजनशलाकया ॥
चक्षुरुन्मीलितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः ॥३॥
गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णुर्गुरुर्देवो महेश्वरः ॥
गुरुरेव परं ब्रह्म तस्मै श्रीगुरवे नमः ॥ ४ ॥
अखंडमंडलाकारं व्याप्तं येन चराचरम् ॥
तत्पदं दर्शितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः ॥ ५ ॥
अखंडानंदबोधाय शिष्यसंतापहारिणे ॥
सच्चिदानंदरूपाय रामाय गुरवे नमः ॥ ६ ॥

॥ इति मंगलाचरणम् ॥

॥ अथ षोडशकलाप्रारंभः ॥ १६ ॥

॥ अथ श्रीश्रुतिषड्लिंगसंग्रहः ॥



॥ उपोद्घातकीर्त्तनम् ॥

स्मृत्वाद्वैतपरात्मानं शंकरं परमं गुरुम् ।
तात्पर्यसंविदे वक्ष्ये श्रुतिषड्लिंगसंग्रहः ॥१॥

टीकाः—अद्वैतपरमात्मारूप जो परमगुरु-शंकर हैं । तिनकूं स्मरण करिके । श्रुतिनके तात्पर्यके ज्ञानअर्थ । मैं श्रुतिषड्लिंगसंग्रह नामक लघुग्रंथकूं कहताहूं ॥ १ ॥

विषयासक्ति-मानस्थ-मेयस्थ-संशय-भ्रमाः ।
चत्वारः प्रतिबंधाः स्युर्ज्ञानादार्ढ्यस्य हेतवः॥

टीकाः— १ विषयासक्ति २ प्रमाणगतसंशय ३ प्रमेयगतसंशय औ ४ भ्रम कहिये विपर्यय । ये च्यारी ज्ञानकी अदृढताके हेतु प्रतिबंध होवैहैं ॥ २ ॥

आद्यस्य विनिवृत्तिःस्याद्वैराग्यादिचतुष्टयात्
श्रवणेन द्वितीयस्य मननात्तार्तीयस्य च ॥३॥

टीकाः—प्रथमकी निवृत्ति । वैराग्य है आदि जिसके ऐसे साधनोंके चतुष्टयतें होवै है. औ द्वितीयकी निवृत्ति श्रवणसैं होवैहै औ तृतीयकी निवृत्ति मननतें होवैहै ॥ ३ ॥

ध्यानेन तु चतुर्थस्य विनिवृत्तिर्भवेद्ध्रुवम् ।
पूर्वपूर्वानिवृत्त्या नैवोत्तरोत्तरनाशनम् ॥ ४॥

टीकाः—औ चतुर्थप्रतिबंधकी निवृत्ति । निदिध्यासनसैं निश्चित होवैहै ॥ पूर्वपूर्वकी अनिवृत्तिकरि उत्तरउत्तरका नाश कहिये निवृत्ति नहीं होवैहै ॥ ४ ॥

विषयासक्तिनाशेन विना नो श्रवणं भवेत् ।
ताभ्यामृते न मननं न ध्यानं तैर्विना भवेत् ५

टीकाः—विषयासक्तिके नाशसैं विना श्रवण होवै नहीं औ तिन दोनूं विना मनन नहीं होवै है औ इन तीनूंसैं विना निदिध्यासन होवै नहीं ॥ ५ ॥

स्ववर्णाश्रमधर्मेण तपसा हरितोषणात् ।
साधनं प्रभवेत्पुंसां वैराग्यादिचतुष्टयम् ॥६॥

टीकाः—स्व कहिये मिथ्यात्मा—शरीर। ताके वर्ण अरु आश्रमसंबंधी धर्मकरि औ कृच्छ्रचां-द्रायणादितपकरि औ हरिभजन किंवा सर्वभूतन-पर दयादिरूप हरिके संतोषकारक कर्मतें पुरुष-नकूं वैराग्यादिकका चतुष्टयरूप साधन प्रकर्षकरि होवैहै ॥ ६ ॥

तत्सिद्धावुपसन्नः सन् गुरुं ब्रह्मविदुत्तमम् ।
ज्ञानोत्पत्त्यैमहावाक्यश्रुतिंकुर्याद्धितन्मुखात् ॥

टीकाः—तिन च्यारीसाधनोंकी सिद्धिके हुये ब्रह्मवेत्ताओंविषै उत्तम कहिये निर्दोषगुरुके प्रति उपसत्तियुक्त कहिये शरणागत हुया । ज्ञानकी उत्पत्तिअर्थ तिस गुरुके मुखतें वेदविषै प्रसिद्ध अर्थसहित महावाक्यके श्रवणकूं करै ॥ ७ ॥

तत्सिद्धौ द्वापरभ्रांतिप्रहाणाय मुमुक्षुभिः ।
श्रवणं मननं ध्यानमनुष्ठेयं फलावधि ॥८॥

टीकाः—ता ज्ञानकी सिद्धि कहिये उत्पत्तिके हुये । मुमुक्षुनकरि द्वापर जो द्विविधसंशय औ भ्रांति जो विपरीतभावना । तिनके नाशअर्थ प्रमाणसंशयादित्रिविध प्रतिबंधके नाशरूप फल-पर्यंत जैसें होवै तैसें श्रवण मनन औ निदिध्यासन करनेकूं योग्य है ॥ ८ ॥

श्रवणस्य प्रसिद्ध्यैव भवतोऽस्ये तथा सति । द्वयोर्मूलं तु श्रवणं कर्त्तव्यं तद्धि धीधनैः ९

टीकाः–श्रवणकी प्रकर्षकरि सिद्धिसैंहीं अंतके दो जे मनन अरु ध्यान वे होवैहैं । तैसैं हुये तिन दोनूंका प्रसिद्धमूल जो श्रवण । सो तो बुद्धिरूप धनवानोंकरि प्रथमकर्तव्य है ॥ ९ ॥

वेदांतानामशेषाणामादिमध्यावसानतः । ब्रह्मात्मन्येव तात्पर्यमिति धीः श्रवणं भवेत् १०

टीकाः–तात्पर्यके निर्णायक षट्लिंगरूप युक्तिनकरि "सर्ववेदांत जे उपनिषद् । तिनका आदि मध्य औ अंततैं ब्रह्मरूप आत्माविषैहीं तात्पर्य है" ऐसी जो बुद्धि कहिये निश्चय । सो **श्रवण** होवैहै ॥ यह श्रवणका शास्त्रउक्त लक्षण है ॥ १० ॥

उपक्रमोपसंहारावभ्यासोऽपूर्वता फलम् ।
अर्थवादोपपत्ती च लिंगं तात्पर्यनिर्णये ॥ ११

टीका:–तिन षट्लिंगनकूं अब नामकरि निर्देश करैहैं:– १ उपक्रम अरु उपसंहार इन दोनूंकी एकरूपता । २ अभ्यास । ३ अपूर्वता । ४ फल । ५ अर्थवाद । औ ६ उपपत्ति । यह प्रत्येक तात्पर्यके निर्णयविषै लिंग हैं ॥ ११ ॥

॥ १ ॥ उपक्रम औ उपसंहार ॥

वस्तुनः प्रतिपाद्यस्यादावंते प्रतिपादनम् ।
उपक्रमोपसंहारौ तदैक्यं कथितं बुधैः ॥१२॥

टीका:—अब षट्श्लोकनकरि प्रत्येक लिंगके लक्षणकूं कहैहैं:— प्रकरणकरिके प्रतिपादन करनेकूं योग्य जो ब्रह्मरूप अद्वितीयवस्तु है ताका प्रकरणके आदिविषै तथा अंतविषै जो

प्रतिपादन । सो उपक्रम अरु उपसंहार है ॥ तिनमें आदिविषे जो प्रतिपादन । सो उपक्रम है । औ अंतविषे जो प्रतिपादन । सो उपसंहार है ॥ तिन दोनूंकी एकलिंगरूपता पंडितोंने कहीहै ॥ १२ ॥

॥ २ ॥ अभ्यास ॥

वस्तुनः प्रतिपाद्यस्य पठनं च पुनःपुनः । अभ्यासः प्रोच्यते प्राज्ञैः स एवावृत्तिशब्दभाक् ॥ १३ ॥

टीकाः—प्रकरणकरि प्रतिपादन करनेयोग्य अद्वितीयवस्तुका तिसप्रकरणके मध्यविषे जो पुनः पुनः पठन । सो पंडितनकरि अभ्यास कहियेहै । सोई अभ्यास आवृत्तिशब्दका वाच्य है ॥ १३ ॥

॥ ३ ॥ अपूर्वता ॥

श्रुतिभिन्नप्रमाणेनाविषयत्वमपूर्वता ।
कुत्रचित्स्वप्रकाशत्वमप्यमेयतयोच्यते ॥१४॥

टीकाः—प्रकरणकरि प्रतिपाद्य अद्वितीय-वस्तुकी जो श्रुतितैं भिन्न कहिये प्रत्यक्षादि-लौकिकप्रमाणकरि अविषयता है। सो अपूर्वता है ॥ औ कहींक ता अद्वितीयवस्तुकी स्वप्रकाशता वी अमेयता कहिये सर्वप्रमाणनकी अविषयतारूप हेतुकरि अपूर्वता कहियेहै ॥ १४ ॥

॥ ४ ॥ फल ॥

श्रूयमाणं तु तज्ज्ञानात्तत्प्राप्त्यादिप्रयोजनम् ।
फलं प्रकीर्तितं प्राज्ञैर्मुख्यं मोक्षैकलक्षणम् १५

टीकाः—औ प्रकरणकरि प्रतिपाद्य अद्वितीय-वस्तुके ज्ञानतैं प्रकरणविषै श्रूयमाण कहिये सुन्या जो तिसकी प्राप्ति आदिक प्रयोजन । सो पंडितोंनै मोक्षरूप एकलक्षणवाला मुख्य फल कहाहै ॥१५॥

॥ ५ ॥ अर्थवाद ॥

वस्तुनः प्रतिपाद्यस्य प्रशंसनमथापि वा । निंदा तद्विपरीतस्य ह्यर्थवादः स्मृतो बुधैः ॥१६॥

टीकाः—प्रकरणकरि प्रतिपाद्य अद्वितीयवस्तुका जो प्रशंसन कहिये स्तुति अथवा तिसतैं विपरीत कहिये द्वैतकी निंदा बी पंडितोंनै अर्थवाद कहाहै ॥ १६ ॥

॥ ६ ॥ उपपत्ति ॥

वस्तुनः प्रतिपाद्यस्य युक्तिभिः प्रतिपादनम् । उपपत्तिः प्रविज्ञेया दृष्टांताद्या ह्यनेकधा १७

टीकाः—प्रकरणकरि प्रतिपाद्य अद्वितीयवस्तुका युक्तिसैं जो प्रतिपादन । सो दृष्टांतआदिक अनेकप्रकारकी युक्तिरूप उपपत्ति जाननेकूं योग्य है ॥ १७ ॥

एतल्लिंगविचारेण भवेत्तात्पर्यनिर्णयः ।
तात्पर्यं यस्य शब्दस्य यत्र सः स्यात्तदर्थकः॥

टीकाः--उक्तप्रकारके षट्लिंगनके उपनिषदनविषै विचारसैं उपनिषदनका अद्वैत कहिये प्रत्यक्अभिन्नब्रह्मविषै जो तात्पर्य है । ताका निश्चय होवैहै ॥ औ जिस शब्दका जिस अर्थविषै तात्पर्य होवै । सो ता शब्दका अर्थ होवैहै । अन्य कहिये केवल वाच्यअर्थ नहीं ॥ १८ ॥

मंदानां श्रुतिसंसिद्ध्या मानसंशयनुत्तये ।
करोम्यवनिनिक्षिप्तनिधिवल्लिंगकीर्त्तनम् १९

टीकाः—मंद कहिये अपंडितजनोंके "वेदांतनके अद्वितीयब्रह्मविषै तात्पर्यके निश्चयरूप" श्रवणकी सिद्धिकरि "वेदांत अद्वैतब्रह्मके प्रतिपादक है वा अन्यअर्थके प्रतिपादक है" ? इस ज्ञानरूप प्रमाणसंशयके नाशअर्थ ।

भूमिविषे गाडेहुये निधिके सिद्धकरि कीर्त्तनकी न्यांई । मैं लिंगनके कीर्त्तनकूं करूंहूं ॥ १९ ॥

तत्त्वालोके विशेषोऽपि विचारस्तददर्शनात् ।
मया त्वेषां समासेन क्रियते दिक्प्रदर्शनम् २०

टीकाः—यद्यपि आनंदगिरिस्वामीकृत तत्त्वालोकनामकग्रंथविषे इन लिंगनका विशेषविचार कियाहै । यातें इस लघुग्रंथका प्रयोजन नहीं है । तथापि ता तत्त्वालोकके अदर्शनतें । मुजकरि तो संक्षेपसैं इन लिंगनकी दिशामात्रका प्रदर्शन करियहै ॥ २० ॥

सर्वेषूपनिषद्ग्रंथेषूपासनमनेकधा ।
ज्ञानशेषं तु तज्ज्ञेयं चित्तशुद्धिकरं यतः ॥२१॥

टीकाः—सर्वउपनिषद्रूप ग्रंथनविषे अनेकप्रकारका उपासन कहिये ध्यान कहाहै । सो तो ज्ञानका शेष कहिये उपकारक जाननेकूं

योग्य है । जातें चित्तकी शुद्धिका करनेहारा है । यातें उपनिषदनविषै जो उपासनाभाग है । ताके पृथक् लिंगनके विचारका उपयोग नहीं है । यातें सो इहां नहीं किया ॥ ३१ ॥

इति श्रीश्रुतिषड्लिंगसंग्रहे उपोद्घातकीर्तनं नाम प्रथमं प्रकरणं समाप्तम् ॥ १ ॥

अथेशावास्योपनिषल्लिंगकीर्त्तनम् ॥२॥

ईशावास्यमुपक्रम्योपसंहारः स पर्यगात् ।
अनेजदेकमित्याद्योऽभ्यासस्तस्याद्वयस्य च ॥

१ उपक्रमउपसंहारः–(१) " ईशावास्यमिदꣳसर्वं " । कहिये " यह सर्वजगत् । ईश्वरकरि आवास्य कहिये आच्छादन करनेकूं योग्य है " । ऐसें प्रथममंत्रसैं उपक्रम करिके । (२) " स पर्यगाच्छुक्रं । " कहिये " सो च्यारीओरतें जाताभया औ शुद्ध है " । इस मंत्रनकरि उपसंहार है ॥

२ अभ्यासः–औ "अनेजदेकं मनसो जवीयो" । कहिये "अचंचल एक मनसैं वेगवान् है" । इसआदि अर्थरूप तिस अद्वैतका अभ्यास है ॥ इहां आदिशब्दकरि "तदंतरस्य सर्वस्य" कहिये "सो इस सर्वके अंतर है" । इस मंत्रका ग्रहण है ॥ १ ॥

नैनद्देवा अपूर्वत्व फलं मोहाद्यभावकम् ।
कुर्वन्नित्यनुवाद्यैवासूर्या भेदविनिंदनम् ॥२

३ अपूर्वताः–नैनद्देवा आप्नुवन् पूर्वमर्शत्" । कहिये "इसकूं देव जे इंद्रिय वे न प्राप्त होते भये । सो पूर्व गयाहै" । इस ४ मंत्रकरि उपनिषदनतैं अन्य प्रत्यक्षादिप्रमाणनकी अविषयतारूप अपूर्वता कहीहै ॥

४ फलः—औ "**तत्र को मोहः कः शोक एकत्वमनुपश्यतः**" कहिये "तहां एकताके देखनेहारेकूं कौन मोह है । कौन शोक है" । इस ७ मंत्रसैं मोहआदिकका अभावरूप फल कहाहै ॥

५ **अर्थवादः**—"**कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छतं समाः**" । कहिये "इहां कर्मनकूं करताहुया शतवर्ष जीवनेकूं इच्छै" । इस २ मंत्रसैं जीवनेकी इच्छावाले भेददर्शीकूं कर्म करनेका अनुवाद करिकेहीं । पीछे "**असूर्या नाम ते लोकाः**" । कहिये "वे असुरनके लोक प्रसिद्ध है"। इस ३ मंत्रसैं भेदज्ञानकी निंदा अरु अर्थात् अभेदज्ञानकी स्तुतिरूप अर्थवाद कहाहै ॥ २ ॥

तस्मिन्नपो मातरिश्वेत्युपपत्तिः प्रदर्शिता ।
एतैरीशोपनिषदोऽद्वैते तात्पर्यमिष्यते ॥ २ ॥

६ उपपत्तिः— औ "तस्मिन्नपो मातरिश्वा दधाति"। कहिये "ताके होते वायु जलकूं धारताहै"। ऐसैं इस ४ मंत्रसैं उपपत्ति कहिये अभेदबोधनकी युक्ति दिखाई ॥ इन लिंगोंकरि ईशोपनिषदका अद्वैतब्रह्मविषै तात्पर्य अंगीकारकरियेहै ॥ ३ ॥

इति श्री० ईशोपनिषल्लिंगकी० द्वितीयं प्रकरणं० ॥ २ ॥

अथ केनोपनिषल्लिंगकीर्तनम् ॥ ३ ॥

श्रोत्रस्येत्याद्युपक्रम्य प्रतिबोधादिवाक्यतः ।
उपसंहार एवोक्तस्तदैक्यं ज्ञायते बुधैः ॥ १ ॥

१ उपक्रमउपसंहारः—(१) "श्रोत्रस्य

श्रोत्रं" । कहिये " श्रोत्रका श्रोत्र है " । इत्यादि १ खंडके २ वाक्यसैं उपक्रमकारिके ॥ (२) "प्रतिबोधविदितं " । कहिये " बोधबोधके प्रति विदित हैं" । इत्यादि १।१२ वाक्यतैं उपसंहार ही कहा है । इन दोनूंकी एकता पंडितनकरि जानियेहै ॥ १ ॥

तदेव ब्रह्म त्वं विद्धीत्याद्यभ्यास उदीरितः । न तत्रेत्याद्यपूर्वत्वं प्रेत्यास्मादिति वै फलम् २

२ अभ्यासः—तदेव ब्रह्म त्वं विद्धि" । कहिये " ताहीकूं तू ब्रह्म जान" इत्यादि १।४–८ अभ्यास कहा है ॥

३ अपूर्वताः—औ "न तत्र चक्षुर्गच्छति" । कहिये " तिसविषै चक्षु गमन करता नहीं " । इत्यादि १।३ उपनिषदनतैं भिन्न प्रमाणकी अविषयतारूप अपूर्वता है ॥

४ फलः–"भूतेषु भूतेषु विचिंत्य धीराः" कहिये "धीर । सर्वभूतनविषै जानिके" । ऐसें आत्मज्ञानकूं अनुवाद करिके "प्रेत्यास्माल्लोकादमृता भवंति" । कहिये "इस लोकतें देह अरु प्राणके वियोगकूं पायके अमृतरूप होवैहै" । ऐसें २।५ प्रसिद्धफल कह्याहै ॥ २ ॥

ब्रह्महेत्याद्यर्थवादोऽविज्ञातमिति चांतिमम् ।
एतैः केनोपनिषदोऽद्वैते तात्पर्यमिष्यते ॥ ३ ॥

५ अर्थवादः–ओं " ब्रह्म ह देवेभ्यो विजिग्ये" । कहिये "ब्रह्म देवनके अर्थ विजय देताभया" । इत्यादि इन ३ । १ वाक्यनसैं आख्यायिकारूप अर्थवाद कह्याहै ॥

६ उपपत्तिः–ओं "यस्यामतं तस्य मतं" । कहिये "जिसकूं अज्ञात है तिसकूं ज्ञात है" । इत्यादिरूप इस २।२ स्वयंप्रकाश अद्वैतवस्तुके साधक वाक्यकरि अंतिम कहिये "उपपत्ति

कहिये तर्कमययुक्तिरूप षष्ठलिंग कहाहै ॥ इन लिंगोंकरि केनउपनिषद्का अद्वैतब्रह्मविषै तात्पर्य अंगीकार करियहै ॥ ३ ॥

इति श्री० केनोपनिषल्लिंगकीर्त्तनं नाम तृ० प्र० समाप्तम् ॥ ३ ॥

अथ कठोपनिषल्लिंगकीर्तनम् ॥ ४ ॥

येयं प्रेते मनुष्ये त्वित्यादिः सामान्यतस्तथा । अन्यत्र धर्मतास्त्वित्यादिवाक्याच्च विशेषतः

१ उपक्रमः उपसंहारः--(१) "येयं प्रेते विचिकित्सा मनुष्ये" । कहिये "मरेमनुष्यविषै जो यह संशय है" । इत्यादि १।१।२० सामान्यतैं उपक्रम है । तथा "अन्यत्र धर्मादन्यत्राधर्मादन्यत्रास्मात्कृताकृतात्" कहिये "धर्मतैं भिन्न अरु अधर्मतैं भिन्न औ इस कार्यकारणतैं भिन्न है" । इत्यादि १।२।१४ वाक्यतैं विशेषकरि उपक्रम है ॥ १ ॥

उपक्रमोऽङ्गुष्ठमात्र इत्यारभ्योपसंहृतिः ।
न जायतेऽशरीरं च नित्यानां नित्य एव सः२
चेतनोऽचेतनानां च बहूनामेक एव च ।
अस्तीत्येवोपलब्धव्य इत्याद्यभ्यास ईरितः २

(२) औ " अंगुष्ठमात्रः पुरुषोऽतरात्मा " । कहिये " अंगुष्ठमात्र पुरुष अंतरात्मा है" । ऐसैं आरंभ करिके इस २।६।-१७ वाक्यसैं उपसंहार कहाहै ॥

२ अभ्यासः–औ "न जायते म्रियते वा" । कहिये "जन्मता नहीं वा मरता नहीं" । १।२।१८ औ "अशरीरꣳ शरीरेष्वनवस्थेष्ववस्थितम्" । कहिये अस्थिर शरीरनविषै स्थित अशरीरकूं" १।२।२१ औ "नित्यो नित्यानां" । कहिये "सो नित्योंका नित्य है" । २।५।१३ ॥ २ ॥

औ "चेतनश्चेतनानामेको वहूनां विदधाति कामान्" । कहिये "चेतनोंका चेतन है । वहुतनके मध्य एक हुया कामोंकूं करता है" । २ । ५ । १३ औ "अस्तीत्येवोपलब्धव्यः" ("है" ऐसैंहीं जाननेकूं योग्य है) २ । १३ इत्यादि वहुकरिके अभ्यास कहा है ॥ ३ ॥

नैव वाचा न मनसेत्याद्यपूर्वत्वमिंगितम् । मृत्युप्रोक्तां त्वेवमाद्यात्फलं श्रुत्या समीरितम् ४

३ अपूर्वताः—"नैव वाचा न मनसा प्राप्तुं शक्यो न चक्षुषा" । कहिये "नहीं वाणीकरि न मनकरि न चक्षुकरि जाननेकूं शक्य है" । १ । ६ । १२ इत्यादि अपूर्वता अभिप्रेत है ॥

४ फलः—औ "मृत्युप्रोक्तां नचिकेतोऽथ लब्ध्वा विद्यामेतां योगविधिं च कृत्स्नम् । ब्रह्म प्राप्तो विरजोऽभूद्विमृत्युरन्योऽप्येवं यो विदध्यात्ममेव" । कहिये "अनंतर नचिकेता । यमकरि कही इस विद्याकूं औ संपूर्ण योगविधिकूं पायके ब्रह्मकूं प्राप्त निर्मल मृत्युरहित होताभया । अन्य वी जो अध्यात्मकूंहीं जानैगा सो ऐसे होवैगा" । इत्यादि १ अध्यायकी ६ षष्ठवल्लीके १८ वाक्यतैं । श्रुतिमें फल सम्यक् कहाहै ॥ ४ ॥

स लब्ध्वा मोदनीयं वै फलं प्रोक्तं स्फुटं तथा।
ब्रह्म क्षत्रं च युगलमोदनं त्वेवमादितः ॥५॥

तैसैं "स मोदते मोदनीयं हि लब्ध्वा" । कहिये "सो मोदरूपसैं अनुभव करने योग्यकूं पायके मोदकूं पावताहै" १ । २ । १३ इस वाक्यकरि ऐसैं यह बी स्पष्ट फल कहाहै ॥

५ अर्थवादः—औ " यस्य ब्रह्म च क्षत्रं च उभे भवत ओदनः" । कहिये " जाका ब्राह्मण औ क्षत्रिय दोनूं ओदन होवैहै" । १ ।२ । २४ इत्यादि वाक्यतें ॥ ५ ॥

अर्थवादश्च युक्तिर्वै त्वग्निरित्यादिवाक्यतः
एभिः कठोपनिषदोऽद्वैते तात्पर्यमिष्यते ॥६॥

अद्वैतब्रह्मकी स्तुतिरूप अर्थवाद कहाहै । तैसें " मृत्योः स मृत्युमाप्नोति य इह नानेव पश्यति " कहिये "जो इहां नानाकी न्यांई देखताहै सो मृत्युतें मृत्युकूं पावताहै" इस १ । ४ । १० आदिक १ । ४ । ११ वाक्यनसें भेदज्ञानकी निंदारूप जो अर्थवाद कहाहै । सो बी " च " शब्दकरि सूचन किया ॥ औ

६ उपपत्तिः—" अग्निर्यथैको भुवनं प्रविष्टो रूपरूपं प्रतिरूपो बभूव " । कहिये " जैसे एक अग्नि भुवनके प्रति प्रविष्ट हुया रूप—रूपके तांई प्रतिरूप होताभया " । २।५। ९—११ इत्यादि तीनमंत्ररूप वाक्यनकरि औ चकारसैं " येन रूपं रसं गंधं " कहिये "जिसकरि रूपकूं रसकूं गंधकूं जानताहै । इस २। ४।३ आदिक अनेकवाक्यनसैं बी युक्तिशब्दकी वाच्य उपपत्ति कहीहै ॥ इन लिंगोंकरि कठवल्लीउपनिषद्का अद्वैतब्रह्मविषै तात्पर्य अंगीकार करियेहै ॥ ६ ॥

इति श्री० कठोपनिषल्लिंगकी० च० प्र० समाप्तम् ॥ ४ ॥

अथ प्रश्नोपनिषल्लिंगकीर्तनम् ॥ ५ ॥

ब्रह्मपरा हि वै ब्रह्मनिष्ठा इत्युपक्रम्य तत् ।
तान्होवाचैतावदेवोपसंहारस्तदेकता ॥ १ ॥

१ उपक्रमउपसंहारः–(१) "ब्रह्मपरा ब्रह्मनिष्ठा परं ब्रह्मान्वेषमाणाः" । कहिये "ब्रह्मविषै तत्पर ब्रह्मनिष्ठ परब्रह्मकूं खोजते हुये" । १ । १ ऐसैं तिस परब्रह्मकूंही उपक्रम करिके । (२) "तान्होवाचैतावदेवाहमेतत्परं ब्रह्म वेद नातः परमस्ति" । कहिये "तिनकूं कहता भयाः—इतनाही मैं इस परब्रह्मकूं जानताहूं । इसतैं पर नहीं है" । ६ प्रश्नके ७ वाक्यसैं ऐसैं उपसंहार है । इन दोनूंकी एकलिंगरूपता है ॥ १ ॥

एतद्वै सत्यकामेति यत्तदभ्यास उच्यते ।
इहैवांतःशरीरे तु सोम्य ! चेत्याद्यपूर्वता ॥२

२ अभ्यासः—औ "एतद्वै सत्यकाम ! परं चापरं च यदोंकारः" । कहिये "हे सत्यकाम ! यह निश्चयकरि परब्रह्म औ अपर-ब्रह्म है । जो ॐकार है" । ५ । २ ऐसैं औ "यत्तच्छांतमजरममृतमभयं परं च" । कहिये "जो सो शांत—अजर—अमृत—अभय अरु परब्रह्म है । ५ । ७ ऐसैं अभ्यास कहिये है ॥ औ

३ अपूर्वताः—इहैवांतःशरीरे सोम्य ! स पुरुषो यस्मिन्नेताः षोडशकलाः प्रभवंति" कहिये "हे सोम्य ! इसीहीं शरीरके भीतर सो पुरुष है । जिसविषै ये षोडशकला ऊपजतीयां हैं" । इस ६ । २ वाक्यसैं शरीरविषै स्थित-काहीं उपदेशविना अनुपलंभ कहिये अप्रतीति-रूप अपूर्वता सूचन करी ॥ २ ॥

तं वेद्यं पुरुषं वेदेत्यादितः फलमुच्यते ।
तदच्छायमदेहं चेत्यादिभिः कथिता स्तुतिः३

४ फलः—औ "तं वेद्यं पुरुषं वेद यथा । मा वो मृत्युपरि व्यथा इति" । कहिये "तिस वेद्यपुरुषकूं जैसा है तैसा जानना । तुमकूं मृत्युकी पीडा मति होहूं" । ऐसें ६।६ इत्यादि वाक्यतें फल कहियेहै ॥ औ ।

५ अर्थवादः—"तदच्छायमशरीरमलोहितं शुभ्रमक्षरं वेदयते यस्तु सोम्य । स सर्वज्ञः सर्वो भवाति" । कहिये "हे सोम्य ! जो कोईक तिस अज्ञानरहित अशरीर—अलोहित—शुद्ध—अक्षरकूं जानताहै । सो सर्वज्ञ अरु सर्व होवैहै" । इत्यादि ४।१० वाक्यनकरि अर्थवादरूप स्तुति कहीहै ॥ ३ ॥

नदीसमुद्रदृष्टांतादुपपत्तिः प्रदर्शिता ।
एतैः प्रश्नोपनिषदोऽद्वैते तात्पर्यमिष्यते ॥४॥

६ उपपत्तिः—औ "स यथेमा नद्यः" कहिये "सो जैसें ये नदीयां" । इस । ६ । ५ आदिक ६ । ६ वाक्यगत दृष्टांततैं परमात्मातैं षोडशकलाओंकी उत्पत्ति अरु विनाशके उपन्यासतैं उपपत्ति दिखाई ॥ इन लिंगोंकरि प्रश्नोपनिषद्का अद्वैतब्रह्मविषै तात्पर्य अंगीकार करिये है ॥ ४ ॥

इति श्री०प्रश्नोपनिषल्लिंग०पंचमं प्र० समाप्तम् ॥ ५ ॥

अथ मुंडकोपनिषल्लिंगकीर्त्तनम् ॥ ६ ॥

अथ परेत्युपक्रम्य यो ह वै परमं च तत् ।
ब्रह्म वेदेत्यादिवाक्यादुपसंहार ईरितः॥ १ ॥

१ उपक्रमउपसंहारः—(१) "अथ परा यया तदक्षरमधिगम्यते यत्तदद्रेश्यं" ।

कहिये "अब पराविद्या कहिये है:-जिसकरि सो अक्षर जानिये है जो सो अदृश्य है" । इत्यादि १ । १ । ५-६ वाक्यकरि उपक्रमकरिके । (२) "स यो ह वै तत्परमं ब्रह्म वेद" । कहिये "सो जोई तिस परम ब्रह्मकूं जानता है" इत्यादि ३ । २ । ९ वाक्यतैं उपसंहार कहा है ॥ १ ॥

आविः सन्निहितं चेति तदेतदक्षरं त्विति ।
अभ्यासो गृह्यते नैव चक्षुषेत्याद्यपूर्वता ॥२॥

२ **अभ्यासः**-औ "आविः सन्निहितं" कहिये "प्रत्यक्ष है अरु समीपमैं है" २ । २ । १ औ "तदेतदक्षरं ब्रह्म" कहिये "सो यह अक्षररूप ब्रह्म है" । २ । २ । २ ऐसैं तो अभ्यास कहा है ॥ औ

३ अपूर्वताः–" न चक्षुषा गृह्यते नापि वाचा । " कहिये " न चक्षुकरि ग्रहणकरियेहै अरु वाक्करि बी नहीं । " इत्यादिरूप ३ मुंडकके १ खंडके ८ वाक्यकी अर्थरूप अपूर्वता कहिये प्रमाणांतरकी अविषयता है ॥ ३ ॥

भिद्यते हृदयग्रंथिरित्याद्यात्फलमीरितम् ।
यं यं लोकं च हेत्याद्यैरथवादः प्रघोषितः ॥

४ फलः–" भिद्यते हृदयग्रंथिः । " कहिये तिस परावरके देखे हुये । " हृदयग्रंथि भेदकूं पावता है । " इस २ । २ । ८ आदिक ३ । २ । ८–९ वाक्यतैं फल कहा है ॥

५ अर्थवादः—औ " यं यं लोकं मनसा संविभाति विशुद्धसत्व कामयते यांश्च कामान् । तं तं लोकं जायते तांश्च कामांस्तस्मादात्मज्ञं ह्यर्चयेद्भूतिकाम ।" कहिये " निर्मल मनवाला जिस जिस लोककूं मनसैं चितवता है औ जिन भोगनकूं इच्छता है । तिस तिस लोककूं औ तिन भोगनकूं पावता है । तातैं विभूतिकी इच्छावाला आत्मज्ञानीकूं पूजन करै ।" इस ३ । १ । १० आदिक वाक्यनसैं अर्थवाद कहा है ॥ ३ ॥

मुदीक्षाग्नेर्यथेत्यादिनोपपत्तिः प्रकाशिता ।
एतैर्मुंडकतात्पर्यमद्वैतेऽगीकृतं बुधैः ॥ ४ ॥

६ उपपत्तिः— औ " यथा सुदीप्तात्पावकाद्विस्फुलिंगा सहस्रशः प्रभवंते सरूपाः । तथाऽक्षराद्विविधा सोम्य ! भावाः प्रजायंते तत्र चैवापियंति " कहिये " जैसें प्रज्वलित अग्नितैं हजारों हजार सरूप विस्फुलिंग उपजते हैं । तैसें हे सौम्य ! अक्षरतैं विविध पदार्थ उपजतेहैं औ तहांहीं लीन होतेहैं । " इस २ । १ । १ आदिक वाक्यतैं उपपत्ति प्रकाश करीहै ॥ इन लिंगोंकरि मुंडकोपनिषद्का अद्वैतविषै तात्पर्य पंडितोंने अंगीकार कियाहै ॥ ४ ॥

इति श्री० मुंडकोपनिषल्लिंग० षष्ठं प्र० समाप्तम् ॥ ६ ॥

अथ मांडूक्योपनिषल्लिंगकीर्त्तनम् ॥७॥

ॐ मित्येतदुपक्रम्यामात्र इत्युपसंहृतिः ।
प्रपंचोपशमं शांतमित्याद्यभ्यास ईरितः ॥१॥

१ उपक्रमउपसंहारः–(१)" ॐमित्येतदक्षरमिदꣳ सर्वं " कहिये " यह सर्व 'ॐ' ऐसा यह अक्षर है ।" इस १ वाक्यसैं उपक्रम करिके । (२) "अमात्रश्चतुर्थो" । कहिये " अमात्ररूप चतुर्थपाद है ।" इत्यादिरूप १२ वाक्यसैं उपसंहार है ॥ औ

२ अभ्यासः–" प्रपंचोपशमं शांतं " कहिये "निष्प्रपंच अरु शांत है"। १२ इत्यादि अभ्यास कहा है ॥ १ ॥

अदृष्टमाद्यपूर्वत्वं संविशत्यात्मना फलम् ।
अवांतरफलोक्तिस्तु ह्यर्थवादो विदां मते॥२॥

३ अपूर्वताः–औ " अदृष्टमव्यवहार्यं "

कहिये "अदृष्ट है अरु अव्यवहार्य है" । ७ इत्यादि प्रमाणांतरकी अविषयतारूप अपूर्वता है ॥ औ

४ फलः–"संविशत्यात्मनात्मानं य एवं वेद" । कहिये "आत्माकूं जो ऐसैं जानताहै सो आत्माके साथि प्रवेश करताहै" । इस १२ वाक्यकरि फल कहाहै ॥ औ

५ अर्थवादः–"आप्नोति ह वै सर्वान् कामान्" । कहिये ' सर्व कामोंकूं पावताहै " । इस ९ आदिक १० वाक्यनसैं जो अवांतर-फलकी उक्ति है । सो तो विद्वानोंके मतविषै प्रसिद्ध अर्थवाद है ॥ २ ॥

अद्वैते च प्रवेशायोपपत्तिः पादकल्पना ।
मांडूक्योपनिषद्भाव एवैमैरिष्यतेऽद्वये ॥ ३ ॥

६ उपपत्तिः–औ अद्वैत ब्रह्मविषै प्रवेश अर्थ १–१२ वें वाक्यपर्यंत जो ४ पादनकी

कल्पना है। सो उपपत्ति कहिये युक्ति है ॥ इन लिंगोंकरिहीं मांडूक्योपनिषद्का भाव कहिये तात्पर्य अद्वैतब्रह्मविषै अंगीकार करियेहै ॥ ३ ॥

इति श्री० मांडूक्योपनिषल्लिंग० सप्तमं प्र० समाप्तम् ॥ ७ ॥

अथ तैत्तिरीयोपनिषल्लिंगकीर्त्तनम् ॥ ८ ॥

ब्रह्मविदित्युपक्रम्य यथायं तूपसंहृतिः ।
तस्माद्वा इत्यथोवाक्यं यदा ह्येवेति चापरम् १
भीषाऽस्मादित्यथोऽभ्यासो यतो वाचो-
त्वपूर्वता ।
सोऽश्नुते ब्रह्मणा कामान् सहेत्यादि फलं
श्रुतम् ॥ २ ॥

१ उपक्रमउपसंहारः--(१) "ब्रह्मविदाप्नोति परं" कहिये "ब्रह्मवित् परब्रह्मकूं पावताहै" । २ । १ ऐसें उपक्रम करिके । (२)

"स यश्चायं पुरुषे। यश्चासावादित्ये। स एकः"। कहिये "सो जो यह पुरुषविषै है औ जो यह आदित्यविषै है। सो एक है"। इत्यादिरूप इस २। ८ वाक्यकरि उपसंहार है। औ

२ **अभ्यासः**—"**तस्माद्वा एतस्मादात्मन आकाशः संभूतः**"। कहिये "तिस इस आत्मातैं आकाश उपज्या"। २। १ ऐसैं औ "**यदा ह्येवैष एतस्मिन्नदृश्येऽनात्म्येऽनिरुक्ते निलयने**" कहिये "जबहीं यह इस अदृश्य—अशरीर—अवाच्य—अनाधारविषै"। यह २। ७ अपर वाक्य है ॥ १ ॥

औ "**भीषास्माद्वातः पवते**"। कहिये इस परमात्मातैं भयकरि वायु वहता है"। २। ८ ऐसैं अभ्यास है ॥ औ

३ अपूर्वता:–"यतो वाचो निवर्त्तते अप्राप्य मनसा सह" । कहिये "मनसहित वाणीयां अप्राप्तहोयके जिसतैं निवर्त्त होवैहैं" । इस २ । ४ वाक्यसैं मनवाणीकरि उपलक्षित सकलप्रमाणोंकी अगोचरतारूप अपूर्वता कही ॥

४ फल:–औ "सोऽश्नुते सर्वान् कामान् सह ब्रह्मणा विपश्चित्ता" । कहिये "सो ज्ञानी ज्ञानरूप ब्रह्मके साथि एक हुया सर्व कामोंकूं भोगताहै" । २ । १ इत्यादि २ वल्लीके ७ वें अनुवाकसैं फल कहाहै ॥ २ ॥

अर्थवादोऽतरं कुर्यादुदरं भेदनिंदनम् ।
गायन्नास्ते हि सामैतादित्यादिर्विदुषः स्तुतिः॥

५ अर्थवाद:–"यदुदरमंतरं कुरुते । अथ तस्य भयं भवति" । कहिये "जो यत् किंचित् भेदकूं करताहै । अनंतर ताकूं भय होवैहै" ।

२ । ७ ऐसैं भेदज्ञानकी निंदा है औ "**गायन्नास्ते हि तत्साम० अहमन्नमहमन्नमहमन्नम् । अहमन्नादोऽहमन्नादोऽहमन्नादः** " । कहिये " विद्वान् इस सामकूं गायन करताहुयां स्थित होवै हैः--मैं [सर्व] भोग्य हूं । मैं भोग्य हूं । मैं भोग्य हूं । मैं [सर्व] भोक्ता हूं । मैं भोक्ता हूं । मैं भोक्ता हूं " । इत्यादि ३ । १० विद्वान् की स्तुति है । सो अर्थवाद है ॥ ३ ॥

यतो भूतानि जायंते तत्सृष्ट्वेत्यादितोऽतिमम् ।
तैत्तिरीयश्रुतेर्भाव एवैमैरिष्यतेऽद्वये ॥ ४ ॥

६ **उपपत्तिः**—औ "**यतो वा इमानि भूतानि जायंते**" । कहिये " जिसतें ये भूत उपजतेहैं " । ३ । १ औ "**तत्सृष्ट्वा तदेवानुप्राविशत्**" । कहिये "ताकूं सृजिके ताहीके प्रतिप्रवेश करताभया" । २ । ६ इत्यादि कार्य-

कारणके अभेदके बोधक सृष्टि वाक्यतें औ। प्रवेष्टा प्रविष्ट अरु प्रवेश्यके अभेदके बोधक प्रवेशवाक्यतें अंतका उपपत्तिरूप लिंग कहा है ॥ इन लिंगोंकरिहीं तैत्तिरीयोपनिषद्का भाव कहिये तात्पर्य अद्वैतविषै अंगीकार करिये है ॥ ४ ॥

इति श्री० तैत्तिरीयोपनिषल्लिंग० नामाष्टमं प्र० समाप्तम् ॥ ८ ॥

अथैतरेयोपनिषल्लिंगकीर्त्तनम् ॥ ९ ॥

आत्मा वा इत्युपक्रम्योपसंहारस्तु चांतिमे ।
प्रज्ञानं ब्रह्म वाक्येन महतोक्तो हि धीधनैः ॥

१ उपक्रमउपसंहारः–(१) "आत्मा वा इदमेक एवाग्र आसीत्" कहिये "यह आगे आत्माहीं होता भया"। १। १। १ ऐसैं उपक्रम करिके। (२) "प्रज्ञानं ब्रह्म"

कहिये "प्रज्ञान जो जीव सो ब्रह्म है"। इस अंतके ३ अध्यायविषे स्थित ५ खंडके ३ ऋग्गत महावाक्यकरि बुद्धिमानोंनें प्रसिद्ध उपसंहार कहाहै ॥ १ ॥

स इमानसृजल्लोकान्स ईक्षत सृजा इति ।
तस्मादिंद्र इत्यादिवाक्यैरभ्यास ईरितः॥२॥

२ अभ्यासः—औ " स इमांल्लोकानसृजत्"। कहिये " सो इन लोकनकूं सृजता भया" । १ । १ । २ औ स ईक्षतेमे नु लोका लोकान्नु सृजा इति " कहिये " सो ईक्षण करताभयाः—ये लोक हैं । लोकपालोंकूं सृजों ऐसैं" । १ । १ । ३ औ । " तस्मादिदंद्रो नाम " कहिये " तातैं इदंद्र नाम है " । १ । ३ । १४ इत्यादि वाक्योंकरि अभ्यास कहाहै ॥ २ ॥

स जात इत्यपूर्वत्वं प्रज्ञानेत्रं तदित्यपि ।
स एतेनेतिवाक्येन फलं स्पष्टमुदारितम् ॥३॥

३ अपूर्वताः—औ " स जातो भूतान्यभिव्यैक्षत् " । कहिये " सो प्रगटहुया भूतनकूं स्पष्ट जानता भया " इस १ । ३ । १३ वाक्यसैं सर्व भूतनका प्रकाशक होनेकरि तिनकी अविषयतारूप किंवा:–" सर्वं तत्प्रज्ञानेत्रं " कहिये "सर्वजगत् स्वप्रकाश चैतन्यरूप निर्वाहकवाला है"-इस ३ अध्यायके ५ खंडके ३ वाक्यसैं ऐसैं स्वप्रकाशतारूप बी अपूर्वता कहीहै ॥ औ

४ फलः–स एतेन प्रज्ञेनात्मनाऽस्माल्लोकादुत्क्रम्यामुष्मिन् स्वर्गे लोके सर्वान्कामानाप्त्वाऽमृतः समभवत् समभवत् इत्योम् " । कहिये " सो इस ज्ञानरूपसैं इसलोकतैं उल्लंघन करीके उस मोक्षरूप लोकविषै

सर्वकामोंकूं पायके अमृत होताभया । ऐसैं सत्य है" । इस ३ अध्यायके ५ खंडके ४ वाक्यकरि स्पष्ट फल कहाहै ॥ ३ ॥

ता एता देवताः सृष्टास्तथा गर्भेनु सन्निति।
स्तुतिर्युक्तिस्तु स इमानित्यारभ्य विदार्य सः
एतं सीमानमित्यादिश्रुतिवाक्यात्मकीर्त्तिता ।
इमैरुक्तैस्तु षड्लिंगैरैतरेयश्रुतौ गतम् ॥ ५ ॥
तात्पर्यं ज्ञायतेऽद्वैते तन्निष्ठैर्वेदपारगैः ।
तथा मुमुक्षुभिः सर्वैरपि विज्ञेयमादरात् ॥६॥

५ अर्थवादः–औ "**ता एता देवताः सृष्टाः**" कहिये "वे ये उत्पादित देवता स्तुति करती भई" । १ । २ । १ औ "**गर्भे नु सन्नन्वेषामवेदमहं देवानां जनिमानि विश्वा** " । कहिये "माताके गर्भस्थानविषैहीं हुया मैं इन देवनके सर्वजन्मोंकूं जानताहूं" । २ । ४ । ५ ऐसैं अद्वैत परमात्माकी स्तुतिरूप अर्थवाद कहाहै॥ औ

६ उपपत्तिः—"स इमाँल्लोकानसृजत्"। कहिये "सो इन लोकनकूं सृजताभया" । १ । १ । २ इहांसैं आरंभ करिके ॥ ४ ॥ स एतमेव सीमानं विदार्यैतया द्वारा प्रापद्यत"। कहिये "सो इसीहीं मस्तकगत सीमाकूं विदारण करिके इस द्वारकरि शरीरविषै प्राप्त होता भया"। इत्यादि १ । ३ । १२ वाक्यतैं श्रुतिनै युक्ति कहिये उपपत्ति कही है॥ उक्त इन षट्लिंगोंसैं तो ऐतरेयउपनिषद्विषै स्थित ॥ ५ ॥

अद्वैतविषै जो तात्पर्य है। सो वेदके पारकूं प्राप्त भये कहिये श्रोत्रिय औ तिसविषै निष्ठा-वाले कहिये ब्रह्मनिष्ठनकरि जानिये है ॥ तैसैं सर्व मुमुक्षुनकरि वी आदरसैं जाननेकूं योग्य है ॥ ६ ॥

इति श्री० ऐतरेयोपनिषल्लिंग० नवमं० प्र० समाप्तम् ॥ ९ ॥

अथ श्रीछांदोग्योपनिषल्लिंग-
कीर्त्तनम् ॥ १० ॥

तत्र षष्ठाध्याय--लिंगकीर्त्तनम् ॥ ६ ॥

सदेवेत्युपक्रम्यैवैतदात्म्यमिदमित्यतः ।
उपसंहृतिरभ्यासो नवकृत्व उदीरितः ॥ १ ॥

तत्त्वमसीतिवाक्यस्यावर्त्तनाद्बुद्धिमत्तमैः ।
अत्रैव सोम्य ! सन्नेत्यपूर्वतोक्ता हि पंडितैः२

१ उपक्रमउपसंहारः--"सदेव सोम्येदमग्र आसीदेकमेवाद्वितीयं" । कहिये "हे सोम्य ! सृष्टितैं पूर्व एकहीं अद्वितीय सत् हीं होता भया" । ६ । २ । १ ऐसैं उपक्रम करिके "एतदात्म्यमिदं सर्वं" कहिये यह सर्व इस

सत्‌रूप आत्मभाववाला है"। ऐसैं इस ६ अध्यायके १६ खंडके ३ वाक्यतैं उपसंहार कहा है ॥

२ अभ्यासः--नववार कहा है ॥ **"तत्त्व-मसि"** कहिये "सो तूं है" । इस ६ । ८ । १६ वाक्यके आवर्त्तनतैं पंडितोंनैं कहा है ॥

३ अपूर्वताः--औ **"अत्र वाव किल सत्सोम्य ! न निभालयसेऽत्रैव किलेति"** कहिये "ऐसैं हे सोम्य ! इस शरीरविषै आचार्यके उपदेशतैं विना सत्‌रूप ब्रह्म विद्यमान है ताकूं इंद्रियनसैं नहीं जानताहै । इहांहीं विद्यमान सत्‌कूं गुरुउपदेशरूप अन्य उपायसैं जान" । ६ । १३ । २ ऐसैं पंडितोंनैं गुरुउपदेशसैं विना प्रमाणांतरकी अविषयतारूप प्रसिद्ध अपूर्वता कहीहै ॥ १--२ ॥

तावदेव चिरं तस्येत्यादिवाक्यात्फलं स्मृतम्
तमादेशमुताप्राक्ष्यइत्योदेः स्तुतिरीरिता ॥३॥

४ फलः--आचार्यवान् पुरुषो वेद । तस्य तावदेव चिरं यावन्न विमोक्ष्येऽथ संपत्स्ये" कहिये "आचार्यवान् पुरुष जानताहै । तिस ज्ञानीकूं तहांलगिहीं विदेहमोक्षविषै विलंब है । जहांलगि प्रारब्धके क्षयकरि देहका अंत भया नहीं । अनंतर सत्रूप ब्रह्मकूं पावताहै" । इत्यादि ६ । १४ । २ वाक्यतैं फल कहाहै ॥

५ अर्थवादः--औ "उत तमादेशमप्राक्ष्यो येनाश्रुतꣳ श्रुतं भवत्यमतं मतमविज्ञातं विज्ञातं" कहिये "हे श्वेतकेतो ! तिस आदे-शकूं बी आचार्यके प्रति तू पूछताभया है ।

जिसकरि नहीं सुन्या सुन्या होवैहै । नहीं मनन-किया मननकिया होवैहै । नहीं जान्या जान्या होवैहै !" इत्यादि ६ । १ । १ वाक्यतैं अर्थ-वादरूप अद्वैतके ज्ञानकी स्तुति कही है ॥ ३ ॥

उपपत्तिर्यथा सोम्यैकेनेत्यादिनिदर्शनम् ।
एतैश्छांदोग्यतात्पर्यं षष्ठगं त्विष्यतेऽद्वये ॥

६ उपपत्तिः—औ **"यथा सोम्यैकेन मृत्पिंडेन सर्वं मृन्मयं विज्ञातं स्यात्"** कहिये "हे सोम्य ! जैसें एक मृत्तिकाके पिंड-करि सर्व घटादि कार्य मृत्तिकामय जान्या जावै है" । इत्यादि इस ६ । १ । १—३ वाक्यगत दृष्टांतरूप उपपत्ति है ॥ इन लिंगोंकरि षष्ठअध्या-यगत छांदोग्यउपनिषद्का तात्पर्य अद्वैतविषैं अंगीकार कहियेहै ॥ ४ ॥

अथ सप्तमाध्यायलिंगकीर्त्तनम् ॥ ७ ॥

शोकं तरति तद्वेत्ते--त्युपक्रम्योपसंहृतिः ।
तस्य ह वेति वाक्येन तदैक्यमनुभूयताम् ॥५॥

१ **उपक्रमउपसंहारः**--(१) "**तरति शोकमात्मवित्**" । कहिये "आत्मज्ञानी शोककूं तरताहै" । ७ । १ । ३ ऐसें उपक्रम करिके । (२) "**तस्य ह वा एतस्यैवं पश्यत एवं मन्वानस्यैवं विजानत आत्मतः प्राण आत्मत आशा**" । कहिये "तिस इस ऐसें देखनेवालेके औ ऐसें मनन करनेवालेके औ ऐसें जाननेवालेके आत्मातैं प्राण औ आत्मातैं आशा होवै है" । इस ७ अध्यायके २६ खंडके १ वाक्यकरि उपसंहार कहा है । तिन दोनूंकी एकता अनुभव करना ॥ ५ ॥

अधस्ताच्च स एव स्यात्तथाऽथातस्त्वहंकृते-
रादेशश्च स्मृतोऽभ्यासोऽथात आत्मोपदेश-
युक् ॥ ६ ॥

२ अभ्यासः–औ " स एवाधस्तात्स उपरिष्टात् " कहिये "सोई नीचे है । सो उपरि है" । तैसैं " अथातोऽहंकारादेश एवाहमधस्तादहमुपरिष्टात् " कहिये " अब अहंकारका उपदेश ही है किः–मैं नीचे हूं । मैं उपरि हूं " । तैसैं " अथात आत्मादेश एवात्मैवाधस्तादात्मोपरिष्टात् " कहिये " अब आत्माका उपदेश है किः– आत्माहीं नीचे हैं। आत्मा उपरि है " इस आत्माके उपदेशकरि युक्त । उक्त ७ अध्यायके २५ खंडके १–२ वाक्यनकरि अभ्यास कहाहै ॥ ६ ॥

ऋगादिसर्वविद्यानामगोचरतयात्मनः ।
अपूर्वता फलं पश्यो नैव मृत्युं हि पश्यति ॥

३ अपूर्वताः--औ " स हो वाचर्ग्वेदं भगवोऽध्येमि " कहिये " नारद सनत्कुमारकूं कहै हैः--हे भगवन् ! ऋग्वेदकूं पढया हूं " । इत्यादि ७ । १ । २--३ वाक्यकरि आत्माकी ऋग्वेदआदिसर्वविद्याओंकी अगोचरताकरि गुरु उपदेशकरि वेद्यतारूप अपूर्वता कही है ॥

४ फलः--औ " न पश्यो मृत्युं पश्यति " कहिये " ज्ञानी मृत्युकूं देखता नहीं " । इत्यादि ७ । २६ । २ वाक्यकरि फल कहाहै ॥ ७ ॥

पश्यः पश्यति सर्वं हीत्यर्थवादः सुसूचितः ।
जाता वा आत्मतः प्राणादयो युक्तिः प्रद-
शिता ॥ ८ ॥

५ अर्थवादः--औ " सर्वं ह पश्यः

पश्यति । सर्वमाप्नोति सर्वशः ” कहिये “ज्ञानी सर्वकूं देखताहै । सर्व तर्फसैं सर्वकूं पावताहै” । ७ । २६ । २ ऐसैं अर्थवाद सूचन कियाहै ॥ औ

६ उपपत्तिः–“ आत्मतः प्राण आत्म आशा ” कहिये “ आत्मातैं प्राण । आत्मातैं आशा ” । इत्यादि ७ । २६ । १ वाक्यकरि हेतु आत्मैकताबोधक युक्ति कहिये उपपत्ति दिखाई ॥ ८ ॥

छांदोग्यश्रुतितात्पर्यं सप्तमाध्यायगं बुधैः ।
इष्यते चाद्वये भूम्नि षड्लिंगैरिमैः स्फुटम् ॥

पंडितोंनैं इन षट् लिंगोंकरि सप्तमाध्यायगत छांदोग्य उपनिषद्का तात्पर्य । अद्वैत ब्रह्मविषै स्पष्ट अंगीकार करियेहै ॥ ९ ॥

अथाष्टमाध्यायलिंगकीर्त्तनम् ॥ ८ ॥

य आत्मेत्युपक्रम्यैव तं वा एतमुपासते ।
इत्यादिनोपसंहार एव आत्मेतिवाक्यतः॥१०

१ **उपक्रमउपसंहारः**--(१) "**य आत्मापहतपाप्मा**" । कहिये "जो आत्मा पापरहित है" । ८ । ७ । १ ऐसैं उपक्रम करिके हीं । (२) "**तं वा एतं देवा आत्मानमुपासते**" कहिये तिस इस आत्माकूं देव निश्चयकरि उपासतेहैं" । इत्यादि ८ । १२ । ६ रूप वाक्यकरि उपसंहार कहाहै ॥

२ **अभ्यासः**--"**एष आत्मेति होवाचैतदमृतमयभयमेतद्ब्रह्मेति**" । कहिये "यह आत्मा । यह अमृत अभय । यह ब्रह्म है । ऐसैं कहताभया" । इस ८ अध्यायके १० खंडके १ वाक्यतैं अभ्यास कहाहै ॥ १० ॥

अभ्यासोऽपूर्वता ब्रह्मचर्येणेत्यादितः फलं ।
पुनरावर्तते नैव स इत्यादिरवेरितम् ॥ ११ ॥

३ अपूर्वता:–"तद्य एवैतं ब्रह्मलोकं ब्रह्मचर्य्येणानुविंदंति तेषामेवैष ब्रह्मलोकः" कहिये "तातैं जेई इस ब्रह्मरूप लोककूं ब्रह्मचर्य्य-करि शास्त्र अरु आचार्यके उपदेशके पीछे प्राप्त करतेहैं । तिनहींकूं यह ब्रह्मरूप लोक प्राप्त होवैहै" । इस ८ । ४ । ३ आदिक वाक्यनतैं अपूर्वता ध्वनित करीहै ॥

४ फलः–"ब्रह्मलोकमभिसंपद्यते । न च पुनरावर्त्तते" कहिये "ब्रह्मरूप लोककूं पावताहै औ पुनरावृत्तिकूं पावता नहीं" । इत्यादि ८ । १५ । १ वाक्यकरि फल कहाहै ॥ ११ ॥

आख्यायिकार्थवादः स्यादिंद्रस्यासुरस्वामिनः
अशरीरो वायुरभ्रमित्यादिर्युक्तिरीरिता १२

५ **अर्थवादः**--इंद्र अरु विरोचनकी आख्यायिका अर्थवाद होवैहै ॥

६ **उपपत्तिः**--"**अशरीरो वायुरभ्रं विद्युत्स्तनयित्नुरशरीराण्येतानि**" कहिये "वायु अशरीर है । मेघ बीजली मेघगर्जन ये अशरीर हैं" । इत्यादि ८ । १२ । २ अभेदक युक्तिरूप उपपत्ति कहीहै ॥ १२ ॥

छांदोग्यश्रुतितात्पर्यमष्टमाध्यायगं त्विमैः ।
इष्यतेऽद्वय एवास्मिन्ब्रह्मण्येतत्प्रदर्शितम् ॥ १३

इन लिंगोंकरि तो अष्टमाध्यायगत छांदोग्यउपनिषद्का तात्पर्य । इस अद्वैतब्रह्मविषैहीं अंगीकार करिये है । यह दिखाया ॥ १३ ॥

इति श्री० छांदोग्योपनिषल्लिंग० दशमं० प्र०
समाप्तम् ॥ १० ॥

अथ श्रीबृहदारण्यकोपनिषल्लिंगकीर्त्तनम् ॥ ११ ॥

तत्र प्रथमाध्यायलिंगकीर्त्तनम् ॥ १ ॥

आत्मेत्येवेत्यादिवाक्यादुपक्रम्योपसंहृतिः । लोकमात्मानमेवोपासीतेत्यादिसमीरणात् १

१ उपक्रमउपसंहारः–(१) **"आत्मेत्येवोपासीत"** । कहिये "आत्मा ऐसैंहीं जानना" । इत्यादि १ । ४ । ७ रूप वाक्यतें उपक्रम करिके । (२) **"आत्मानमेव लोकमुपासीत"** । कहिये "आत्मारूपहीं लोककूं जानना" । इत्यादि १ अध्यायके ४ ब्राह्मणके १५ वें वाक्यतें उपसंहार कहाहै ॥ १ ॥

तदेतत्पदनीयं च तदेतत्प्रेय इत्यपि । वाक्यमारभ्य संप्रोक्तोऽभ्यासस्तस्य परात्मनः॥१॥

२ अभ्यासः–औ **" तदेतत्पदनीयमस्य सर्वस्य यदयमात्मा "** कहिये "सो यह प्राप्त

करनेकूं योग्य है । जो यह इस सर्वका आत्मा है" । १ । ४ । ७ ऐसैं औ " तदेतत्प्रेयः पुत्रात्प्रेयो वित्तात्" । कहिये " सो यह पुत्रतैं प्रिय है । वित्ततैं प्रिय है" । इसी १ । ४ । ८ वी वाक्यकूं आरंभकरिके । आगे (१ । ४ । १० विषै) दोवार " अहं ब्रह्मास्मि " । इस महावाक्यके कथनपर्यंत तिस परमात्माका अभ्यास कहाहै ॥ २ ॥

तदाहुर्यदितीराया अपूर्वत्वं समिगितम् ।
य एवं वेद वाक्येन सर्वात्मत्वं फलं स्मृतम् ३

३ अपूर्वता:—"तदाहुर्यद्ब्रह्मविद्यया सर्वं भविष्यन्तो मनुष्या मन्यंते" । कहिये " सो कहतेहैं:— जो ब्रह्मविद्याकरि सर्वरूप होनेवाले मनुष्य मानतेहैं" । इस १ । ४ । ९ उक्ति कहिये वाक्यतैं प्रमाणांतरकी अविषय जीवनकी सर्वात्मतारूप अपूर्वता अभिप्रेत है ॥

४ फलः–"य एवं वेदाहं ब्रह्मास्मीति स इदं सर्वं भवति" । कहिये "जो ऐसैं अहं ब्रह्मास्मि इस प्रकारसैं जानताहै । सो यह सर्व होवैहै" । इस १ । ४ । १० वाक्यकरि ज्ञानसैं सर्वात्मभावरूप फल कहाहै ॥ ३ ॥

तस्याभूत्यै हि देवाश्च नेशते हेतिवाक्यतः ।
अर्थवादो द्विरूपो वै प्रोक्तः श्रुत्या स्फुटोक्तितः

५ अर्थवादः—"तस्य ह न देवाश्च नाभूत्या ईशते" कहिये "तिस ब्रह्मजिज्ञासुके ब्रह्मसर्वभावके न होने अर्थ देव वी समर्थ होते नहीं । तव अन्य न होवैं यामैं क्या कहना" । इत्यादिरूप इस १ । ४ । १० वाक्यतैं अभेद-ज्ञानकी स्तुति औ भेदज्ञानकी निंदा । इन दो-रूपनवाला अर्थवाद श्रुतिनै स्पष्ट उक्तितैं कहाहै ॥ ४ ॥

उपपत्तिः स एषो हीहेतिवाक्यात्स्मृता त्विमैः
बृहदारण्यकाद्यस्याद्वैते तात्पर्यमिष्यते ॥ ५ ॥

६ उपपत्तिः– "स एष इह प्रविष्ट आनखाग्रेभ्यः" । कहिये "सो परमात्मा नखाग्रपर्यंत इसदेहविषै प्रविष्ट भयाहै" । इत्यादिरूप इस १ । ४ । ७ वाक्यतैं उपपत्ति कहीहै ॥ इन लिंगोंसैं बृहदारण्यकउपनिषद्के प्रथमाध्यायका अद्वैतविषै तात्पर्य अंगीकार करियेहै ॥ ५ ॥

ooooooooooooooooooooooooooooooo

अथ द्वितीयाध्यायलिंगकीर्त्तनम् ॥ २ ॥

ब्रह्म तेऽहं ब्रवाणीति सामान्योपक्रमः स्मृतः
व्येव त्वा ज्ञपयिष्यामि विशेषोपक्रमस्त्वयम् ६
य एषःपुरुषो विज्ञानमयस्तूपसंहृतिः ।
सामान्यतो विशेषेण तदेतत् ब्रह्म चेत्यपि ७

१ उपक्रमउपसंहारः (१) "ब्रह्म

तेऽहं ब्रवाणीति" कहिये "ब्रह्म तेरेतांई कहताहूं" । २ । १ । १ यह सामान्यउपक्रम है औ "ब्येव त्वा ज्ञपयिष्यामि" । कहिये "ब्रह्म तेरेतांई जनावुंगाहीं" । २ । ३ । १५ यह तो विशेष उपक्रम है ॥ ६ ॥ (२) औ "य एषः पुरुषो विज्ञानमयः" । कहिये "जो यह पुरुष विज्ञानमय है" । २ । १ । १६ यह तो सामान्यतें उपसंहार है औ "तदेतद्ब्रह्मापूर्वमनपरं" । कहिये "सो यह ब्रह्मकारणरहित अरु कार्यरहित है" । २ । ५ । १९ यह विशेषकरि उपसंहार है ॥ ७ ॥

सत्यं सत्यस्य चाथात आदेशो नेति नेति च
स योऽयमिति चाभ्यासो वहुकृत्व उदीरितः ।

२ **अभ्यासः**— "सत्यस्य सत्यं" । कहिये "सत्यका सत्य है" । २ । १ । २०+२

। ३ । ६ औ "**अथात आदेशो नेति नेति**"। कहिये " यातैं अब 'नेति नेति' ऐसा आदेश है" । २ । २ । ६ औ "**स योऽयमात्मेद-ममृतमिदं ब्रह्मेदꣳ सर्वम्**" कहिये "सो जो यह आत्मा है । यह अमृत है । यह ब्रह्म है । यह सर्व है" । २ । ५ । १–१५ ऐसैं बहु-करिके अभ्यास कहाहै ॥ ८ ॥

विज्ञातारमरे ! केनेत्यादिनाऽपूर्वता मता ।
यत्र वास्य ह्यभूदात्मैव सर्वं चादितः फलम् ९

३ अपूर्वताः– "विज्ञातारमरे ! केन विजानीयात्" कहिये " अरे ! मैत्रेयि ! विज्ञाताकूं किसकरि जानै" । इत्यादि २ । ४ । १४ वाक्यकरि प्रमाणांतरकी अविषयतारूप अपूर्वता मानीहै ॥

४ फलः--“यत्र वा अस्य सर्वमात्मैवा-भूत्तत्केन कं जिघ्रेत्” । कहिये “जहां [जिस मोक्षविषे] इस विद्वानकूं सर्व आत्माहीं होताभया । तहां किसकरि किसकूं सूंघे” । इत्यादि २ अध्यायके ४ ब्राह्मणके १४ वाक्यतें निष्प्रपंचब्रह्मरूपसैं अवस्थितिरूप अद्वैतज्ञानका फल कहाहै ॥ ९ ॥

परादाद्ब्रह्म ते चैवाख्यायिका बहवोऽपि च ।
अर्थवादस्तूपपत्तिरूर्णनाभ्याद्यनेकशः ॥१०॥

५ अर्थवादः– “ ब्रह्म तं परादाद्योऽन्यत्रात्मनो ब्रह्म वेद” । कहिये “ ब्राह्मणजाति ताकूं तिरस्कार करैहै जो आत्मातैं अन्य ब्राह्मणजातिकूं जानताहै ” । २ । ४ । ६ ऐसैं भेदज्ञानकी निंदा औ बहुतआख्यायिका बी अर्थवाद है ॥

६ उपपत्तिः– "स यथोर्णनाभिस्तंतुनोच्चरेद्यथाऽग्नेः क्षुद्रा विस्फुलिंगा व्युच्चरंति" । कहिये " सो जैसैं ऊर्णनाभि तंतुकरि उच्चगमन करैहै औ जैसैं अग्नितैं अल्पअग्निके अवयव विविध उच्चगमन करैहैं" । इस २ । १ । २० आदिक २ । ४ । ९–१२ वाक्यनविषै अनेकदृष्टांतरूप उपपत्ति हैं ॥ १० ॥

बृहदारण्यकस्यैव द्वितीयस्याद्वितीयके ।
तात्पर्यं त्विष्यते प्राज्ञैरेभिर्लिंगैः समिंगितैः ॥

बृहदारण्यकउपनिषद्के द्वितीयअध्यायका पंडितोंकरि इन सूचन किये लिंगोंसैं अद्वितीयब्रह्मविषै तात्पर्य अंगीकार करियेहै ॥ ११ ॥

अथ तृतीयाध्यायलिंगकीर्त्तनम् ॥ ३ ॥

यत्साक्षादित्युपक्रम्योपसंहारस्तु वाक्यतः ।
विज्ञानमित्यतः प्रोक्त आवृत्तिरेष ते रवात् ॥

१ उपक्रमउपसंहारः—(१) "यत्साक्षादपरोक्षाद्ब्रह्म" कहिये "जो साक्षात् अपरोक्ष ब्रह्म है"। ३। ४। १ ऐसें उपक्रमकरिके। (२) "विज्ञानमानंदं ब्रह्म"। कहिये "विज्ञान आनंदरूप ब्रह्म है"। ऐसें इस ३। ९। २८ वाक्यतें तो उपसंहार कहाहै ॥

२ अभ्यासः—"एष त आत्मांतर्याम्यमृतः"। कहिये "यह तेरा आत्मा अंतर्यामी अमृतरूप है"। इस ३। ७। ३—२३ वाक्यतें आवृत्तिका वाच्य अभ्यास कहाहै ॥ १२ ॥

तं त्वौपनिषदं चाहं पृच्छामीति त्वपूर्वता ।
फलं परायणं चैतत्तिष्ठमानस्य तद्विदः ॥१३॥

३ अपूर्वताः–" तं त्वौपनिषदं पुरुषं पृच्छामि " । कहिये " तिस उपनिषदनकरि गम्य पुरुषकूं [मैं याज्ञवल्क्य] तुज [शाकल्यके] तांई पूछताहूं " । ३ । ९ । २६ ऐसैं तो उपनिषदनकीहीं विषयतारूप अपूर्वता कहीहै ॥

४ फलः–" परायणं तिष्ठमानस्य तद्विदः " । कहिये " यह ब्रह्म अद्वैततत्त्वविषै स्थित तत्त्ववेत्ताका परमगति है " । ३ । ९ । २८ ऐसैं फल कहाहै ॥ १३ ॥

यो वै तत्काप्य ! सूत्रं तं विद्याच्चेत्यादितोऽपि च । यो वै एतच्च न ज्ञात्वाऽक्षरं गार्गीति च स्तुतिः ॥ १४ ॥

५ **अर्थवादः–" यो वै तत्काप्य ! सूत्रं विद्यात्तं चांतर्यामिणमिति स ब्रह्म-वित् "** । कहिये " हे काप्य ! जोई तिस सूत्रकूं औ तिस अंतर्यामीकूं जानताहै । सो ब्रह्मवित् है " । यह ३ । ७ । १ वी । औ **" यो वा एतदक्षरं गार्ग्यविदित्वास्मिन्लोके जुहोति "**। कहिये " हे गार्गी ! जोई इस अक्षरकूं न जानिके इसलोकविषै होमताहै " । इस ३ । ८ । १० आदिक वाक्यतैं अभेदज्ञानकी स्तुति औ चकार-करि भेदज्ञानकी निंदारूप अर्थवाद कहाहै ॥१४॥

एतस्य वा अक्षरस्येत्यादितो युक्तिरीरिता ।
तटस्थलक्षणस्योपन्यासेन परमात्मनः ॥१५॥

६ उपपत्तिः–" एतस्य वा अक्षरस्य प्रशासने गार्गि ! सूर्याचंद्रमसौ विधृतौ तिष्ठतः " । कहिये " हे गार्गि ! इस अक्षरकी आज्ञाविषै सूर्यचंद्र धारण कियेहुये स्थित होवैंहैं " । इत्यादि ३ । ८ । ९ रूप वाक्यतैं परमात्माके तटस्थलक्षणके उपन्यासकरि उपपत्ति कहीहै ॥ १५ ॥

बृहदारण्यकश्रुत्यास्तृतीयस्य समिष्यते ।
तात्पर्यमद्वये लिंगैरेभिस्तु परमात्मनि । १६

बृहदारण्यकोपनिषद्के इस तृतीयअध्यायका । इन लिंगोंकरि अद्वयपरमात्माविषै तात्पर्य । सम्यक् अंगीकार करियेहै ॥ १६ ॥

अथ चतुर्थाध्यायलिंगकीर्त्तनम् ॥ ४ ॥

इंधश्च किमुपक्रम्याभयं स उपसंहृतिः ।
सामान्यतो विशेषेण यत्र त्वस्येति वाक्यतः॥

१ उपक्रमउपसंहारः–(१) " **इंधो ह वै नाम** " । कहिये " इंध ऐसा प्रसिद्ध नाम है "। ४ । २ । २ ऐसैं सामान्यतैं औ " **किं ज्योतिरयं पुरुष इति** " । कहिये " किस ज्योतिवाला यह पुरुष है "। ४ । ३ । २ ऐसैं विशेषकरि उपक्रमकरिके । (२) " **अभयं वै जनक ! प्राप्तोऽसि** " । कहिये " हे जनक ! तूं अभयकूं प्राप्त भयाहै " । ४ । २ । ४ ऐसैं । वा " **स वा एष महानज आत्मा** "। कहियें

" सोई यह महान्—अज—आत्मा " । ४ । ४ । २५ ऐसैं सामान्यतैं उपसंहार है औ " यत्र त्वस्य सर्वमात्मैवाभूत् " । कहिये " जहां तो सर्व आत्माहीं होताभया " । इस ४ । ५ । १५ वाक्यतैं विशेषकरि उपसंहार है ॥ १७ ॥

तद्देवा ज्योतिषां ज्योतिरायुर्होपासतेऽमृतम् इत्यादिबहुभिर्वाक्यैरभ्यासः स्पष्टमीक्ष्यते ॥

२ **अभ्यासः—" तद्देवा ज्योतिषां ज्योतिरायुर्होपासतेऽमृतम् "** । कहिये " इस ब्रह्मकूं देव ज्योतिनका ज्योति आयु अरु अमृतरूप उपासतेहैं " । ४ । ४ । १६ इत्यादि बहुतवाक्यनकरि अभ्यास स्पष्ट देखियेहै ॥ १८ ॥

विज्ञातारमगृह्यो च न तं पश्यत्यपूर्वता ।
अथाकामयमानो य इत्यादिबहुभिः फलम् ॥

३ अपूर्वताः–" विज्ञातारमरे ! केन विजानीयात् " । कहिये " अरे मैत्रेयि ! विज्ञाताकूं किसकरि जानना " । ४ । ५ । १५ औ " अगृह्यो न हि गृह्यते " । कहिये " जातें ग्रहण करनैकूं अयोग्य है । तातें नहीं ग्रहण करियेहै " । ४ । ४ । २२ औ " न तं पश्यति कश्चन " । कहिये " ताकूं शास्त्रगुरुके उपदेशविना कोईबी नहीं देखताहै " । ४ । ३ । १४ इत्यादि वाक्यनसें सिद्ध प्रमाणांतरकी अविषयतारूप अपूर्वता है ॥

४ फलः–" अथाकामयमानो यो "। कहिये " औ जो निष्काम है "। इत्यादि ४ । ४ । ६--८ बहुतवाक्यनकरि फल कहाहै ॥ १९ ॥

मृत्योः स मृत्युमाप्नोति य इह नानेव पश्यति
एत एतमु हैवेत्यादिवाक्याच्च स्तुतिः स्मृता ॥

५ अर्थवादः–" मृत्योः स मृत्युमाप्नोति य इह नानेव पश्यति "। कहिये " सो मृत्युतैं मृत्युकूं पावताहै । जो इहां नानाकी न्यांई देखताहै "। ४ । ४ । १९ ऐसैं औ " एतमु हैवेते न तरतः "। कहिये " इस ज्ञानीकूं ये पुण्यपाप तरते नहीं "। ४ । ४ । २२–२३ इत्यादि वाक्यतैं अर्थवादरूप निंदा अरु स्तुति कहीहै ॥ २० ॥

यद्वै तन्नेति प्राणस्य प्राणं चैव न वा अरे !।
पत्युः कामाय नैवायं पतिर्हि भवति प्रियः ॥

इत्यादिवाक्यजातेनोपपत्तिः परिकीर्तिता ।
बृहदारण्यकश्रुत्याश्चतुर्थाध्यायगं बुधाः २२

तात्पर्यमद्वये षड्भिरेवेमे लिंगकैर्विदुः ।
अग्नेर्धूम इवेमानि लिंगान्यस्य परात्मनः ॥२३

६ उपपत्तिः-" यद्वै तन्न पश्यति "। कहिये " जहां सुषुप्तिविषै तिसरूपकूं नहीं देखताहै "। ४ । ३ । २३–३० ऐसैं। औ " प्राणस्य प्राणमुत "। कहिये " प्राणके बी प्राणकूं जानतेहैं " । ४ । ४ । १८ ऐसैं । औ " न वा अरे ! पत्युः कामाय पतिः प्रियो भवत्यात्मनस्तु कामाय पतिः प्रियो भवति "। कहिये " अरे मैत्रेयि ! पतिके कामअर्थ

पति प्रिय नहीं होवैहै । आत्माके तो काम अर्थ पति प्रिय होवै है" ॥ २१ ॥ इस ४।५।६ आदिक ४ । ५ । ८–१३ वाक्यनके समूहकरि ब्रह्मरूप आत्माके बोधनकी युक्तिरूप उपपत्ति कहीहै ॥ पंडित इस बृहदारण्यकरूप उपनिषद्-भागके चतुर्थाध्यायगत ॥ २२ ॥ अद्वैतविषै तात्पर्यकूं इन षट्लिंगों जानतैहैं ॥ औ अग्निके निश्चायक धूमरूप लिंगकी न्यांई इस प्रत्यक्-अभिन्न ब्रह्मके निश्चायक ये लिंग हैं । [ऐसैं जानना] ॥ २३ ॥

इति संक्षेपतः प्रोक्ता षड्लिंगानां विचारणा ।
दशोपनिषदां तद्वत्तामन्यास्वपि योजयेत् २४

इसरीतिसैं संक्षेपतैं दशउपनिषदनके षट्लिंग-नका विचार कहा । ताकी न्यांई ता (विचार) कूं अन्यउपनिषदनविषै बी जोडना ॥ २४ ॥

**दोषोऽप्यत्रोपयुक्तत्वाद्गुण एवेति चिंत्यताम्।
सारग्रहणशीलैस्तु पितृभ्यां बालवाक्यवत् ॥**

इसग्रंथविषै क्वचित् दोष बी उपयोगी होनैतैं "गुणहीं है" ऐसैं सारग्राही स्वभाववाले कविन-करि विचारनेकूं योग्य है ॥ माता पिताकरि विनोदअर्थ उपयोगी बालकके फल वाक्यकी न्यांई ॥ २५ ॥

इति श्रीबृहदारण्यकोपनिषल्लिंगकीर्त्तनं नामैकादशं प्रकरणं समाप्तम् ॥ ११ ॥

इति श्रीविचारचंद्रोदये श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाऽऽचार्यबापुसरस्वती-पूज्यपाद-शिष्य-पीतांबरशर्मविदुषा विरचिता-सटीकाश्रुतिषड्लिंगसंग्रहनामिका-षोडशीकलायाः प्रथमविभागः समाप्तः ॥

॥ अथ षोडशकलाद्वितीयविभाग-प्रारंभः ॥ १६ ॥



॥ वेदांतपदार्थसंज्ञावर्णन ॥

अथवा

॥ लघुवेदांतकोश ॥



॥ ललितछंदः ॥

निष्कलं निजं वेदहीं वदे ।
षट्दशं कला ब्रह्ममैं नदे ।
निरवयेव जो निष्कलंक सो ।
इकरसं सदा अंगता न सो ॥ २६ ॥

हिरण्यगर्भ औ श्रद्धया नभो ।

पवन तेज कं भूमि इंद्रिभो ।

मन अनाज औ शक्ति सत्तपो ।

करमलोक नामीमनूजपो ॥ ३७ ॥

षटदश कला एहि जानिले ।

जडउपाधिको धर्म मानिले ।

अनुगताश्रयोपुष्पसूत्रवत् ।

निज चिदात्म पीतांबरो हि सत् ॥ ३८ ॥

॥ १८० ॥ वल ॥

॥ १८१ ॥

॥ पदार्थ द्विविध ॥ २ ॥

अध्यात्मताप २—आत्माकूं आश्रय करिके वर्त्तमान जो स्थूलसूक्ष्मशरीर सो अध्यात्म है। तद्गत जो ताप (दुःख) सो अध्यात्मताप है ॥

१ **आधिताप**:—मानसताप ॥

२ **व्याधिताप**:—शारीरताप ॥

अध्यास २—भ्रांतिज्ञानका विषय औ भ्रांतिज्ञान ॥

१ **अर्थाध्यास**—भ्रांतिज्ञानका विषय जो सर्पादि वा देहादिप्रपंच सो ॥

२ **ज्ञानाध्यास**—भ्रांतिज्ञान (सर्पादिकका वा देहादिप्रपंचका ज्ञान) ॥

असंभावना २—असंभवका ज्ञान ॥

१ प्रमाणगत असंभावना—प्रमाण (वेद) गत असंभवका ज्ञान ॥

२ प्रमेयगत असंभावना—प्रमेय (प्रमाणके विषय मोक्षआदिक) गत असंभवका ज्ञान ॥

अहंकार २--

१ शुद्धअहंकार—स्वस्वरूपका अहंकार ॥

२ अशुद्धअहंकार—देहादिअनात्माका अहंकार ॥

१ सामान्यअहंकार—देहादिधर्मके उद्देशसैं रहित । केवल " अहं (मैं) " ऐसा स्फुरण ॥

२ विशेषअहंकार—देहादिधर्म (नामजातिआदिक) का उद्देश करिके " अहं (मैं) " ऐसा स्फुरण ॥

१ **मुख्यअहंकार**—देहादियुक्त चिदाभास औ कूटस्थ (साक्षी) का एकीकरण करिके। मूढकरि सारे संघातविषै " अहं " शब्दकूं जोडिके जो " अहं (मैं)" ऐसा स्फुरण होवै सो मुख्य (शक्तिवृत्तिसैं जानने योग्य अहंशब्दके अर्थकूं विषय करनेवाला) अहंकार है ॥

२ **अमुख्यअहंकार**—विवेकीकरि (१) व्यवहारकालमैं केवल देहादियुक्त चिदाभासविषै औ (२) परमार्थदशामैं केवलकूटस्थविषै " अहं " शब्दकूं जोडिके जो " अहं (मैं)" ऐसा स्फुरण होवैहै सो दोभांतीका अमुख्य (लक्षणावृत्तिसैं जानने योग्य अहंशब्दके अर्थकूं विषय करनेवाला) अहंकार है ॥

अज्ञान २—

१ समष्टिअज्ञान—वनकी न्यांई वा जातिकी न्यांई वा जलाशय (तडाग) की न्यांई एक-बुद्धिका विषय ॥

२ व्यष्टिअज्ञान—वृक्षनकी न्यांई वा व्यक्तिन-की न्यांई वा जलबिंदुकी न्यांई अनेक-बुद्धिनका विषय ॥

१ मूलाज्ञान—शुद्धचेतनका आच्छादक (ढांपने-वाला) अज्ञान ॥

२ तूलाज्ञान—घटादिअवच्छिन्नचेतनका आच्छा-दक अज्ञान ॥

अज्ञानकी शक्ति २—अज्ञानका सामर्थ्य ॥

१ आवरणशक्ति—अधिष्ठानके ढांपनेवाली जो अज्ञानविषै सामर्थ्य है सो ॥

२ विक्षेपशक्ति—प्रपंच औ ताके ज्ञानरूप विक्षेपकी जनक जो अज्ञानविषै सामर्थ्य है सो ॥

उपासना २—

१ सगुणउपासना—कारणब्रह्म (ईश्वर) औ कार्यब्रह्म (हिरण्यगर्भआदिक) की उपासना ॥

२ निर्गुणउपासना—शुद्धब्रह्मकी उपासना ॥

गन्ध २—१ सुगंध ॥ २ दुर्गंध ॥

जाति २—अनेकधर्मि (आश्रय) नविषै अनुगत जो एकधर्म सो ॥

१ परजाति—" घट है " ऐसैं सर्वत्रअनुगत जो सत्ता है। ताकूं न्यायमतमैं पर (श्रेष्ठ) जाति कहतेहैं ॥

२ अपरजाति—सत्तासैं भिन्न घटत्वआदिक जातिकूं न्यायमतमैं अपर (अश्रेष्ठ) जाति कहतेहैं ॥

१ व्याप्यजाति—व्यापकजातिके अंतर्गत (न्यूनदेशवर्ती) जो जाति। सो व्याप्यजाति है। जैसैं मनुष्यत्वजातिके अंतर्गत (एकदेश-

गत) ब्राह्मणत्व क्षत्रियत्व आदिक जातियां हैं। वे व्याप्यजातियां हैं ॥

२ व्यापकजाति—व्याप्यजातितैं अधिकदेशविषै स्थित जो जाति सो व्यापकजाति है। जैसैं ब्राह्मणत्वआदिकव्याप्यजातितैं अधिकदेशविषै स्थित मनुष्यत्वजाति है सो व्यापकजाति है। ये व्याप्य औ व्यापक दो भेद अपरजातिके हैं ॥

निग्रह २—

१ क्रमनिग्रह—यमनियमआदिकअष्टयोगके अंगोंकरि क्रमसैं जो चित्तका निरोध होवैहै। सो क्रमनिग्रह है ॥

२ हठनिग्रह—प्राणनिरोधरूप हठकरिके वा सांभवीआदिकमुद्रानके मध्य किसी एकमुद्राके अभ्यासकरि जो चित्तका निरोध होवैहै। सो हठनिग्रह है ॥

निःश्रेयस २—मोक्ष ॥

१ अनर्थनिवृत्ति ॥ २ परमानंदप्राप्ति ॥

परमहंससंन्यास २—

१ **विविदिषासंन्यास**—जिज्ञासाकरिके ज्ञानप्राप्तिअर्थ किया जो संन्यास सो विविदिषासंन्यास है ॥

२ **विद्वत्संन्यास**—ज्ञानके अनंतर वासनाक्षय मनोनाश औ तत्त्वज्ञानाभ्यासद्वारा जीवन्मुक्तिके विलक्षण आनंदअर्थ किया जो संन्यास सो विद्वत्संन्यास है ॥

प्रपंच २—१ बाह्यप्रपंच ॥ २ आंतरप्रपंच ॥

प्रज्ञा २—१ स्थितप्रज्ञा ॥ २ अस्थितप्रज्ञा ॥

लक्षण २—
१ स्वरूपलक्षण—सदाविद्यमान हुया व्यावर्त्तक लक्षण ॥
२ तटस्थलक्षण—कदाचित् हुया व्यावर्त्तक लक्षण ॥

वाक्य २—१ अवांतरवाक्य ॥ २ महावाक्य ॥
वाद २—१ प्रतिबिंबवाद ॥ २ अवच्छेदवाद ॥
विपरीतभावना २ – १ प्रमाणगत विपरीतभावना ॥ २ प्रमेयगत विपरीतभावना ॥
शब्द २—वर्णरूपशब्द ॥ २ ध्वनिरूपशब्द ॥
शब्दसंगति २—१ शक्तिवृत्ति ॥ २ लक्षणावृत्ति ॥
संपत्ति २—१ दैवसिंपत्ति ॥ २ आसुरीसंपत्ति ॥
संशय २—१ प्रमाणगतसंशय ॥ २ प्रमेयगतसंशय ॥

समाधि २—१ सविकल्प ॥ २ निर्विकल्प ॥
सूक्ष्मशरीर २—१ समष्टि ॥ २ व्यष्टि ॥
स्थूलशरीर २—१ समष्टि ॥ २ व्यष्टि ॥

॥ पदार्थ त्रिविध ॥ ३ ॥

अध्यात्मादि ३—१ इंद्रिय (अध्यात्म) ॥ २ देवता (अधिदैव) ॥ ३ विषय (अधिभूत) ॥

अन्तःकरणदोष ३—

१ मलदोष—जन्मजन्मांतरोंके पाप ॥

२ विक्षेपदोष—चित्तकी चंचलता ॥

३ आवरणदोष—स्वरूपका अज्ञान ॥

अर्थवाद ३—निंदाका वा स्तुतिका बोधक वाक्य ॥

१ अनुवाद—अन्यप्रमाणकरि सिद्धअर्थका बोधकवाक्य । जैसैं " अग्नि हिमका भेषज है " यह वाक्य है ॥

२ गुणवाद—अन्यप्रमाणविरुद्ध विधेयअर्थका गुणद्वारा स्तोत्रकवाक्य । जैसैं प्रकाशरूप

गुणकी समताकरि स्तावक " यूप (यज्ञका खंभ) आदित्य हैं" यह वाक्य है ॥

३ भूतार्थवाद—स्वार्थविषै प्रमाण हुया लक्षणासैं विधेयार्थकी श्लाघाका बोधकवाक्य । जैसैं " वज्रहस्त पुरंदर " यह वाक्य है ॥

अवधि ३—सीमा (हद) ॥

१ बोधकी अवधि ॥ २ वैराग्यकी अवधि ॥

३ उपरामकी अवधि—चित्तनिरोधरूप उपरति (उपशम) की ॥

अवस्था ३—तीनदेहके व्यवहारके काल ॥

१ जाग्रत्अवस्था ॥ २ स्वप्नअवस्था ॥

३ सुषुप्तिअवस्था ॥

आत्मा ३—

१ ज्ञानात्मा—बुद्धि ॥

२ महानात्मा—महत्तत्व ॥

३ शांतात्मा—शुद्धब्रह्म ॥

आत्माके भेद ३—

१ मिथ्यात्मा—स्थूलसूक्ष्मसंघात ॥

२ गौणात्मा—पुत्र ॥

३ मुख्यात्मा—साक्षी (कूटस्थ) ॥

आनंद ३—

१ ब्रह्मानंद—समाधिविषै आविर्भूत वा सुषुप्तिगत जो बिंबभूत आनंद है सो ॥

२ विषयानंद—जाग्रत्स्वप्नविषै विषयकी प्राप्तिरूप निमित्तसैं एकाग्र भये चित्तविषै आत्मस्वरूपभूत आनंदका जो क्षणिकप्रतिबिंब होवैहै सो ॥ याहीकूं लेशानंद औ मात्रानंद बी कहतेहैं ॥

३ वासनानंद—सुषुप्तितैं उत्थान आदिक उदासीनदशाविषै जो आनंद अनुभूत होवैहै सो ॥

आन्ध्यादि ३—अंधताआदिक नेत्रके धर्म ॥

इहां आन्ध्य (अंधता) रूप नेत्रका धर्म जो है सो बधिरतामूकताआदिक अन्यइंद्रियनके धर्मका बी सूचक है। औ मांद्य अरु पटुत्व तौ सर्वइंद्रियनके तुल्य जाननैं ॥

१ **आन्ध्य**—चक्षुकरि सर्वथा स्वविषयका अग्रहण ॥

२ **मांद्य**—इंद्रियकरि स्वविषयका स्वल्पग्रहण ॥

३ **पटुत्व**—इंद्रियकरि स्वविषयका स्पष्टग्रहण ॥

उद्देशादि ३—

१ **उद्देश**—नामका कीर्तन ॥

२ **लक्षण**—असाधारणधर्म । (एकविषै वर्तनैवाला धर्म) ॥

३ **परीक्षा**—पदकृति (अतिव्याप्तिआदिकदोषनका विचार) ॥

एषणा ३—इच्छा वा वासना ॥

१ पुत्रैषणा ॥ २ वित्तैषणा ॥

३ लोकैषणा—सर्वलोक मेरी स्तुति करे। कोइबी मेरी निंदा करे नहीं। ऐसी इच्छा वा परलोककी इच्छा ॥

कारण ३—कर्मके साधन ॥

१ मन ॥ २ वाणी ॥ ३ काय ॥

कर्तव्यादि ३—

१ कर्तव्य—करनैकुं योग्य ज्ञानके साधन ॥

२ ज्ञातव्य—जाननैकुं योग्य ज्ञानका विषय (ब्रह्म अरु आत्माका एकत्व) ॥

३ प्राप्तव्य—प्राप्त करनैकुं योग्य ज्ञानका फल मोक्ष ॥

कर्म ३—१ पुण्यकर्म ॥ २ पापकर्म ॥ ३ मिश्र-कर्म ॥

कर्म ३—

१ संचितकर्म—जन्मांतरोंविषै संचय किये कर्म ॥
२ आगामिकर्म—वर्तमानजन्मविषै क्रियमाणकर्म ॥
३ प्रारब्धकर्म—वर्तमानजन्मका आरंभककर्म ॥

कर्मादि ३—

१ कर्म—वेदविहितकर्म ॥
२ विकर्म—वेदसैं विरुद्धकर्म ॥
३ अकर्म—वेदविहित औ वेदविरुद्ध उभय-विधकर्मका अकरण ॥

कारणवाद ३—

१ आरंभवाद—जैसैं पितामहआदिकके किये पुराणे गृहका जब नाश होवै तब तिसविषै स्थित ईंटआदिकसामग्रीसैं फेर नवीनगृहका आरंभ होवैहै। तैसैं कार्यरूप पृथ्वीआदिकके नाशताके कारण परमाणु ज्युंकेत्युं रहते-हैं। तिनतैं फेर अन्यपृथ्वीआदिकका आरंभ

होवैहै ॥ ऐसैं न्यायमतसैं आरंभवाद मान्या-
है ॥ यामैं कार्य अरु कारणका भेद है ॥

२ **परिणामवाद**—जैसैं दुग्धका परिणाम (रूपान्तर) दधि होवैहै । तैसैं सांख्यमतमैं प्रकृतिका परिणाम जगत् है । औ उपासकोंके मतमैं ब्रह्मका परिणाम जगत् औ जीव है ॥ ऐसैं तिनोंने परिणामवाद मान्याहै । यामैं कार्य अरु कारणका अभेद है ॥

३ **विवर्तवाद**—जैसैं निर्विकाररज्जुविषै रज्जुरूप अधिष्ठानतैं विषमसत्तावाला अन्यथास्वरूप सर्प होवैहै । सो रज्जुका विवर्त (कल्पितकार्य) है ॥ तैसैं निर्विकारब्रह्मविषै अधिष्ठानब्रह्मतैं विषमसत्तावाला अन्यथास्वरूप जगत् होवैहै ॥ सो ब्रह्मका विवर्त (कल्पितकार्य)है ॥ ऐसैं वेदांतसिद्धांतमैं विवर्तवाद मान्याहै । यामैं बी कार्य अरु कारणका बाधकृत अभेद है ॥

काल ३—१ भूतकाल ॥ २ भविष्यत्काल ॥
३ वर्तमानकाल ॥

जाग्रत् ३—

१ **जाग्रत्जाग्रत्**—वर्तमानजाग्रत्विषै जो स्वरूपका साक्षात्कार होवै सो ॥

२ **जाग्रत्स्वप्न**—जाग्रत्विषै जो भूत वा भविष्यअर्थका चिंतनरूप मनोराज्य होवैहै सो ॥

३ **जाग्रत्सुषुप्ति**—जाग्रत्विषै भ्रमकरि जडीभूत वृत्ति होवै सो ॥

जीव ३—

१ **पारमार्थिकजीव**—साक्षी (कूटस्थ) चेतन ॥

२ **व्यावहारिकजीव**—साभास अंतःकरणरूप जीव ॥

३ **प्रातिभासिकजीव**-साभासअंतःकरणरूप व्यावहारिकजीवमैं स्वप्नविषै अध्यस्त जीव ॥

१ **विश्व**—जाग्रत्विषै तीनदेहका अभिमानी जीव ॥

२ तैजस—स्वप्नविषै स्थूलदेहके अभिमानकूं छोडिके सूक्ष्म औ कारण इन दो देहका अभिमानी वही जीव ॥

३ प्राज्ञ—सुषुप्तिविषै स्थूलसूक्ष्मदेहके अभिमानकूं छोडिके एक कारणदेहका अभिमानी वही जीव ॥

ताप ३—दुःख ॥

१ अध्यात्मताप—स्थूलसूक्ष्मशरीरविषै होता जो है आधि औ व्याधिरूप दुःख। सो अध्यात्मताप है ॥

२ अधिदैवताप—देवताकरि जो शीत उष्ण अतिवृष्टि अनावृष्टि विद्युत्पात भूकंपआदिक दुःख होवैहै। सो अधिदवताप है ॥

३ अधिभूतताप—स्वशरीरतैं भिन्न चक्षुगोचरप्राणि (चोर व्याघ्र शत्रु आदि)नकरि होता है जो दुःख। सो अधिभूतताप है ॥

नादादि ३—

१ **नाद**—ॐकार वा शब्दगुण वा पराआदिक ४ वाणी ॥

२ **बिंदु**—ॐकारका अलक्ष्यअर्थरूप तुरीयपद ॥

३ **कला**—ॐकारकी अकारादिमात्रा परावाणी-रूप अंक (शब्दका अवयव) ॥

निवृत्ति ३ (तादात्म्यकी निवृत्ति):—

१ **भ्रमजकी निवृत्ति** — ज्ञानसैं भ्रांति (अविवेक) के नाशकरी भ्रमजतादात्म्यकी निवृत्ति होवैहै ॥

२ **सहजकी निवृत्ति**—सहजतादात्म्यका ज्ञानसैं बाध औ ज्ञानीके देहपातके अनंतर नाश होवैहै ॥

३ **कर्मजकी निवृत्ति**—कर्मजतादात्म्य प्रारब्धभोगके अंत भये ज्ञानीका निवृत्ति होवैहै ॥

पापकर्म ३—१ उत्कृष्टपापकर्म ॥ २ मध्यमपापकर्म ॥ ३ सामान्यपापकर्म ॥

पुण्यकर्म ३—१ उत्कृष्टपुण्यकर्म ॥ २ मध्यम-पुण्यकर्म ॥ ३ सामान्यपुण्यकर्म ॥

प्रपंच ३—१ स्थूलप्रपंच ॥ २ सूक्ष्मप्रपंच ॥ ३ कारणप्रपंच ॥

प्राणायाम ३—१ पूरक ॥ २ कुंभक ॥ ३ रेचक ॥

प्रारब्ध ३—१ इच्छाप्रारब्ध ॥ २ अनिच्छा-प्रारब्ध ॥ ३ परेच्छाप्रारब्ध ॥

ब्रह्म ३—१ विराट् ॥ २ हिरण्यगर्भ ॥ ३ ईश्वर ॥

मिश्रकर्म ३—१ उत्कृष्टमिश्रकर्म ॥ २ मध्यम-मिश्रकर्म ॥ ३ सामान्यमिश्रकर्म ॥

मूर्ति ३—१ ब्रह्मा ॥ २ विष्णु ॥ ३ शिव ॥

लक्षणदोष ३—

१. **अव्याप्तिदोष**—लक्ष्यके एकदेशविषै लक्षणका वर्तना ॥

२ अतिव्याप्तिदोष—लक्ष्यके तांई व्यापिके अलक्ष्यविषै बी लक्षणका वर्तना ॥

३ असंभवदोष—लक्ष्यविषै लक्षणका न वर्तना ॥

लोक ३—१ स्वर्ग ॥ २ मृत्यु ॥ ३ पाताल ॥

वादादि ३—

१ वादः—गुरुशिष्यका संवाद ॥

२ जल्प—युक्तिप्रमाणकुशलपंडितनका परमत-खंडक स्वमतमंडक वाद ॥

३ वितंडा—मूर्खनका प्रमाणयुक्तिरहित वाद । किंवा स्वपक्षका स्थापन करीके परपक्षकाहीं खंडन सो ॥ जैसें श्रीहर्षमिश्राचार्यने खंडन-ग्रंथविषै कियाहै ॥

विधिवाक्य ३—

१ अपूर्वविधिवाक्य—अलौकिकक्रियाका विधा-यकवाक्य ॥

२ **नियमविधिवाक्य**—प्राप्त दोपक्षनविषै एकका विधायकवाक्य ॥

३ **परिसंख्याविधिवाक्य**—उभयपक्षविषै एकके निषेधका विधायकवाक्य ॥

वेदके कांड ३—१ कर्मकांड ॥ २ उपासनाकांड ॥ ३ ज्ञानकांड ॥

शरीर ३—१ स्थूलशरीर ॥ २ सूक्ष्मशरीर ॥ ३ कारणशरीर ॥

श्रवणादि ३—१ श्रवण ॥ २ मनन ॥ ३ निदिध्यासन ॥

श्रवणादिफल ३—१ प्रमाणसंशयनाश (श्रवणफल) ॥ २ प्रमेयसंशयनाश (मननफल) ॥ ३ विपर्ययनाश (निदिध्यासनफल) ॥

संबंध ३—१ संयोगसंबंध ॥ २ समवायसंबंध ॥ ३ तादात्म्यसंबंध ॥

सुषुप्ति ३—

१ सुषुप्तिजाग्रत्—सात्विकवृत्तिपूर्वक सुख-
सुषुप्ति ॥

२ सुषुप्तिस्वप्न—राजसवृत्तिपूर्वक दुःखसुषुप्ति ॥

३ सुषुप्तिसुषुप्ति—तामसवृत्तिपूर्वक गाढसुषुप्ति ॥

सुषुप्त्यादि ३—१ सुषुप्ति ॥ २ मूर्छा ॥
३ समाधि ॥

स्वप्न ३—

१ स्वप्नजाग्रत्—सत्यअर्थका स्वप्नविषै दर्शन ॥

२ स्वप्नस्वप्न—स्वप्नविषै रज्जुसर्पादिभ्रांतिका
दर्शन ॥

३ स्वप्नसुषुप्ति—दृष्टस्वप्नका अस्मरण ॥

हेत्वादि ३—१ हेतु ॥ २ स्वरूप ॥ ३ फल ॥

ज्ञातादि ३—१ ज्ञाता ॥ २ ज्ञान ॥ ३ ज्ञेय ॥

ज्ञानप्रतिबंधक ३—१ संशय ॥ २ असंभा-
वना ॥ ३ विपरीतभावना ॥

ज्ञानादि ३—१ ज्ञान ॥ २ वैराग्य ॥ ३ उपशम ॥

॥ पदार्थ चतुर्विध ॥ ४ ॥

अनुबंध ४—अपने ज्ञानके अनंतर पुरुषकूं ग्रंथविषै जोडनैवाला ॥

१ अधिकारी—मलविक्षेपरूप दोषरहित औ अज्ञानरूप दोषसहित हुया विवेकादिच्यारी साधनकरि सहित पुरुष वेदांतका अधिकारी है ॥

२ विषय—ब्रह्म अरु आत्माकी एकता । वेदांतशास्त्रका विषय (प्रतिपाद्य) है ॥

३ प्रयोजन—सर्वदुःखनकी निवृत्ति औ परमानंदकी प्राप्तिरूप मोक्ष ॥

४ संबंध—ग्रंथका औ विषयका प्रतिपादक-प्रतिपाद्यतारूप संबंध है ॥

अन्तःकरण ४—

१ मन—संकल्पविकल्परूप वृत्ति ॥

२ बुद्धि—निश्चयरूप वृत्ति ॥

३ चित्त—चिंतन (स्मरण) रूप वृत्ति ॥

४ अहंकार—अहंतारूप वृत्ति ॥

आर्तादिभक्त ४—

१ आर्त—अध्यात्मआदिकदुःखकरि व्याकुल ॥

२ जिज्ञासु—भगवत्तत्त्वके जाननैकी इच्छा-वाला ॥

३ अर्थार्थी—यालोक वा परलोकके भोगकी इच्छावाला ॥

४ ज्ञानी—जीवन्मुक्तविद्वान् ॥

आश्रम ४—१ ब्रह्मचर्य ॥ २ गृहस्थ ॥ ३ वानप्रस्थ ॥ ४ संन्यास ॥

उत्पत्त्यादिक्रिया ४—इहां क्रियाशब्दकरि क्रिया
जो कर्म । ताका फल कहियेहै ॥

१ उत्पत्ति—आद्यलक्षण (जन्म) । जैसैं कुलाल-
की क्रियाका फलरूप घटकी उत्पत्ति है ॥

२ प्राप्ति—गमनरूप क्रियाका वांछितदेशकी
प्राप्तिरूप फल है ॥

३ विकार—अन्यरूपकी प्राप्ति । जैसैं पाक
(रसोई) रूप क्रियाका फलरूप अन्नका
विकार (पलटना) है ॥

४ संस्कार—(१) मलकी निवृत्ति औ (२)
गुणकी प्राप्ति । इस भेदतैं संस्कार दोप्रकार-
का होवैहै ॥ (१) जैसैं वस्त्रके प्रक्षालन-
रूप क्रियाका फलरूप मलनिवृत्ति है सो
प्रथम है औ (२) कुसुंभमैं वस्त्रके मज्जन-
रूप क्रियाका फलरूप रक्तगुणकी उत्पत्ति
है सो द्वितीय है ॥

चित्तनिरोधयुक्ति ४—१ अध्यात्मविद्या ॥ २ साधुसंग ॥ ३ वासनात्याग ॥ ४ प्राणायाम॥

धर्मादि ४—च्यारीपुरुषार्थ ॥

१ धर्म—सकाम वा निष्काम जो पुण्य सो ॥

२ अर्थ—इसलोक औ परलोकविषै जो भोगके साधन धनादिक हैं सो ॥

३ काम—इसलोक औ परलोकका जो भोग सो॥

४ मोक्ष—दुःखनिवृत्ति औ सुखप्राप्ति ॥

पुरुषार्थ ४—१ धर्म ॥ २ अर्थ ॥ ३ काम ॥ ४ मोक्ष ॥

पूजापात्र ४—१ ब्रह्मनिष्ठ ॥ २ मुमुक्षु ॥ ३ हरिदास ॥ ४ स्वधर्मनिष्ठ ॥

प्रमाण ४—प्रमाज्ञानका करण प्रमाण है ॥ इहां च्यारीप्रमाणोंका कथन न्यायरीतिसैं है ॥

१ प्रत्यक्षप्रमाण ॥ २ अनुमानप्रमाण ॥

३ उपमानप्रमाण ॥ ४ शब्दप्रमाण ॥

ब्रह्मविदादि ४—

१ ब्रह्मवित्—चतुर्थभूमिकाविषै आरूढ ज्ञानी ॥

२ ब्रह्मविद्वर—पंचमभूमिकाविषै आरूढ ज्ञानी ॥

३ ब्रह्मविद्वरीयान्—षष्टभूमिकाविषै आरूढज्ञानी॥

४ ब्रह्मविद्वरिष्ठ—सप्तमभूमिकाविषै आरूढज्ञानी॥

भूतग्राम ४—

१ जरायुज—मनुष्यपशुआदिक ॥

२ अंडज—पक्षीसर्पआदिक ।

३ उद्भिज—वृक्षादिक ॥

४ स्वेदज—यूकामत्कुणआदिक ॥

मैत्र्यादि ४—

१ मैत्री—धनवान् वा गुणकरि समान वा ईश्वरभक्त वा विषयी (कर्मी उपासक) पुरुष इनविषै "ये मेरे हैं" ऐसी बुद्धि ॥

२ करुणा—दुःखी वा गुणकरि निकृष्ट वा अज्ञजन वा जिज्ञासु । इनविषै दया ॥

३ मुदिता—पुण्यवान् वा गुणकरि अधिक वा ईश्वर वा मुक्त । इनविषै प्रीति ॥

४ उपेक्षा—पापिष्ठ वा अवगुणयुक्त वा द्वेषी वा पामर । इनविषै रागद्वेषकरि रहितताका रूप उदासीनता ॥

मोक्षद्वारपाल ४—१ शम ॥ २ संतोष ॥ ३ विचार (विवेक) ॥ ४ सत्संग ॥

योगभूमिका ४—१ वाणीलय ॥ २ मनोलय ॥ ३ बुद्धिलय ॥ ४ अहंकारलय ॥

वर्ण ४—१ ब्राह्मण ॥ २ क्षत्रिय ॥ ३ वैश्य ॥ ४ शूद्र ॥

वर्त्तमानज्ञानप्रतिबंधनिवृत्तिहेतु ४—

१ शमादि—यह विषयासक्तिका निवर्तक है ॥
२ श्रवण—यह बुद्धिकी मंदताका निवर्तक है ॥
३ मनन—यह कुतर्कका निवर्तक है ॥
४ निदिध्यासन—यह विपरीतभावनाविषै जो दुराग्रह होवैहै ताका निवर्तक है ॥

वर्त्तमानज्ञानप्रतिबंध ४—१ विषयासक्ति ॥ २ बुद्धिमांद्य ॥ ३ कुतर्क ॥ ४ विपर्ययदुराग्रह ॥

विवेकादि ४—१ विवेक ॥ २ वैराग्य ॥ ३ षट्संपत्ति ॥ ४ मुमुक्षुता ॥

वेद ४—१ ऋग्वेद ॥ २ यजुष्वेद ॥ ३ सामवेद ॥ ४ अथर्वणवेद ॥

शब्दप्रवृत्तिनिमित्त ४—१ जाति ॥ २ गुण ॥ ३ क्रिया ॥ ४ संबंध ॥

संन्यास ४—१ कुटीचकसंन्यास ॥ २ बहूदकसंन्यास ॥ ३ हंससंन्यास ॥ ४ परमहंससंन्यास ॥

समाधिविघ्न ४—१ लय ॥ २ विक्षेप ॥ ३ काषाय ॥ ४ रसास्वाद ॥

स्पर्श ४—१ शीत ॥ २ उष्ण ॥ ३ कोमल ॥ ४ कठिन ॥

पदार्थ पंचविध ॥ ५ ॥

अभाव ५—नास्तिप्रतीतिका विषय ॥

१ प्रागभाव—कार्यकी उत्पत्तितैं पूर्व जो कार्यका अभाव है सो ॥

२ प्रध्वंसाभाव—नाशके अनंतर जो अभाव होवैहै सो ॥

३ अन्योऽन्याभाव—परस्परविषै जो परस्परका अभाव है सो । जैसैं रूपभेद ॥ जैसैं घटपटका भेद है सो ॥

४ अत्यंताभाव—तीनिकालविषै जो अभाव है सो । जैसैं वायुविषै रूपका है ॥

५ सामयिकाभाव—किसी (उठाय लेनेके) समयविषै जो भूतलादिकमैं घटादिकका अभाव होवैहै सो ॥

अज्ञानके भेद ५—अज्ञानविषै वेदांतआचार्यनके मतके भेद ॥

१ **मायाअविद्यारूपअज्ञान**—केइक (विद्यारण्यस्वामी) अज्ञानकूं माया (समष्टिअज्ञानमयईश्वरकी उपाधि) औ अविद्या (व्यष्टिअज्ञानमय जीवनकी उपाधि) रूप मानतेहैं ॥

२ **ज्ञानक्रियाशक्तिरूपअज्ञान**—केइक अंज्ञानकूं ज्ञानशक्ति औ क्रियाशक्ति मानतेहैं ॥

३ **विक्षेपआवरणरूपअज्ञान**—केइक अज्ञानकूं आवरणरूप अरु विक्षेप (की हेतुशक्ति) रूप मानतेहैं ॥

४ **समष्टिव्यष्टिरूपअज्ञान**—केइक अज्ञानकूं समष्टि (ईश्वरकी उपाधि) औ व्यष्टि (जीवकी उपाधि) रूप मानतेहैं ॥

५ **कारणरूपअज्ञान**—केइक अज्ञानकूं जगत्का उपादानकारण मूलप्रकृतिमय ईश्वरकी उपाधिरूप मानतेहैं औ तिस पक्षमैं कार्य (अंतःकरण) उपाधिवाला जीव मान्या है ॥

उपवायु ५—

१ **नाग**—उद्गारका हेतु वायु ॥

२ **कूर्म**—निमेषउन्मेषका हेतु वायु ॥

३ **कृकल**—छींकका हेतु वायु ॥

४ **देवदत्त**—जमुहाईका हेतु वायु ॥

५ **धनंजय**—देहपुष्टिका हेतु वायु ॥

कर्म ५—

१ **नित्यकर्म**—सदा जाका विधान होवैहै ऐसा कर्म (स्नानसंध्याआदिक) ॥

२ **नैमित्तिककर्म**—किसी निमित्तकूं पायके जाका विधान होवैहै ऐसा कर्म (ग्रहणश्राद्ध-आदिक) ॥

३ **काम्यकर्म**—कामनाके लिये विधान किया कर्म (यज्ञयागादिक) ॥

४ **प्रायश्चित्तकर्म**—पापकी निवृत्तिके लिये विधान किया कर्म ॥

५ **निषिद्धकर्म**—नहीं करनेके लिये कथन किया कर्म (ब्रह्महत्यादिक) ॥

कर्मइंद्रिय ५—१ वाक् ॥ २ पाणि ॥ ३ पाद ॥ ४ उपस्थ ॥ ५ गुद ॥

कोश ५—१ अन्नमयकोश ॥ २ प्राणमय-
कोश ॥ ३ मनोमयकोश ॥ ४ विज्ञानमय-
कोश ॥ ५ आनंदमयकोश ॥

क्लेश—

१ अविद्या—

(१) दुःखविषै सुखबुद्धि ॥
(२) अनात्माविषै आत्मबुद्धि ॥
(३) अनित्यविषै नित्यबुद्धि ॥
(४) अशुचिविषै शुचिबुद्धि ॥
यह च्यारीप्रकारकी कार्यअविद्या ॥

२ अस्मिता—साक्षी (आत्मा) औ बुद्धिकी
एकताका ज्ञान (सामान्यअहंकार) ॥

३ राग—दृढआसक्ति (आरूढप्रीति) ॥

४ द्वेष—क्रोध ॥

५ अभिनिवेश—मरणका भय ॥

ख्याति ५—प्रतीति औ कथनरूप व्यवहार ॥

१ असत्ख्याति—शून्यवादी । असत् (निः-स्वरूप) सर्पकी रज्जुदेशविषै प्रतीति औ कथन मानतेहैं । सो ॥

२ आत्मख्याति—क्षणिकविज्ञानवादी । क्षणिक-बुद्धिरूप आत्माकी सर्परूपसैं प्रतीति औ कथन मानतेहैं सो ॥

३ अन्यथाख्याति—नैयायिक । बंबी (रा-फडा) आदिक दूरदेशविषै स्थित सर्पकी दोषके बलसैं रज्जुदेशविषै प्रतीति औ कथन मानतेहैं सो ॥ अथवा रज्जुरूप ज्ञेयका सर्प-रूपसैं ज्ञान मानतेहैं । सो ॥

४ अख्यातिख्याति—सांख्यप्रभाकर मतके अनुसारी । " यह सर्प है " इहां " यह " अंश तो रज्जुके इदंपनैका प्रत्यक्षज्ञान है औ " सर्प " यह पूर्व देखे सर्पका स्मृति-

ज्ञान है । ये दोज्ञान हैं । तिनका दोषके बलसैं अख्याति कहिये अविवेक (भेद-प्रतीतिका अभाव) होवैहै । ऐसैं मानतेहैं ॥

५ **अनिर्वचनीयख्याति**—वेदांतसिद्धांतमैंः— रज्जुविषै ताकी अविद्याकरि अनिर्वचनीय (सत्असत्सैं विलक्षण) सर्प औ ताका ज्ञान उपजैहैं । ताकी ख्याति कहिये प्रतीति औ कथन होवैहै ॥ ऐसैं मानते-हैं । सो ॥

जीवन्मुक्तिके प्रयोजन ५—यद्यपि जीवन्-मुक्ति तो ज्ञानीकूं सिद्ध है । तथापि इहां जीवन्मुक्ति शब्दकरि जीवन्मुक्तिके विलक्षण-आनंदकी अवस्था (पंचमआदिकभूमिका) का ग्रहण है । ताके प्रयोजन कहिये फल पांच-प्रकारके हैं ॥

१ **ज्ञानरक्षा**—यद्यपि एकवार उपजे दृढ-बोधका नाश नहीं होवैहै। यातैं ज्ञानरक्षा आपहीं सिद्ध है। तथापि इहां निरंतर ब्रह्माकारवृत्तिकी स्थिति। ज्ञानरक्षाशब्दका अर्थ है॥

२ **तप**—मन औ इंद्रियनकी एकाग्रता वा शरीर वाणी औ मनका संयम॥

३ **विसंवादाभाव**—जल्प औ वितंडवादका अभाव॥

४ **दुःखनिवृत्ति**—दृष्ट (प्रत्यक्ष) दुःखकी निवृत्ति॥

५ **सुखप्राप्ति**—निरावरण परिपूर्ण औ स-वृत्तिकरूप जीवन्मुक्तिके विलक्षण आनंदकी प्राप्ति॥

दृष्टांत ५—जगत्के मिथ्यापनेविषै दृष्टांत पंचविध है ॥

१ शुक्तिविषै रजतका दृष्टांत ॥

२ रज्जुविषै सर्पका दृष्टांत ॥

३ स्थाणुविषै पुरुषका दृष्टांत ॥

४ गगनविषै नीलताका दृष्टांत ॥

५ **मरीचिकाविषै जलका दृष्टांत**—मध्याह्नकालमैं मरुभूमि (उपरभूमि) विषै प्रतिबिंबित सूर्यके किरण मरीचिका कहियेहैं । तिनविषै जो जल भासताहै । ताकूं मृगजल औ जांजूजल कहतेहैं । सो ॥

नियम ५—

१ शौच ॥ २ संतोष ॥ ३ तप ॥

४ **स्वाध्याय**—स्वशाखाके वेदभागका वा गीताआदिकका जो नित्य पाठ करना सो ॥

५ **ईश्वरप्रणिधान**—ॐकारादिईश्वरउपासना ॥

प्रलय ५—

१ **नित्यप्रलय**—क्षणक्षणविषै सर्वकार्यनका जो दीपज्योतिकी न्यांई नाश होवैहै सो। वा सुषुप्ति ॥

२ **नैमित्तिकप्रलय**—ब्रह्माकी रात्रिरूप निमित्त-करि होता जो है भूरआदि नीचेके तीनलोकनका नाश सो ॥

३ **दिनप्रलय**—ब्रह्माके दिनमैं चतुर्दशमन्वंतर होतेहैं। तिस प्रत्येकका जो नाश। सो॥ वाहीकूं अवांतरप्रलय औ मन्वंतरप्रलय बी कहतेहैं ॥ कोई तो याहीकूं नैमित्तिकप्रलय कहतेहैं ॥

४ **महाप्रलय**—ब्रह्माके शतवर्षके अनंतर होता जो है ब्रह्मदेवसहित आकाशादिसर्वभूतनका नाश सो ॥

५ आत्यंतिकप्रलय—ज्ञानकरि होता जो है कारणसहित सकलजगत्‌का बाध (अत्यंत-निवृत्ति) सो ॥

प्राणादि ५—१ प्राण ॥ २ अपान ॥ ३ व्यान ॥ ४ उदान ॥ ५ समान ॥

भेद ५—१ जीवईश्वरका भेद ॥ २ जीव-जीवका भेद ॥ ३ जीवजडका भेद ॥ ४ ईश-जडका भेद ॥ ५ जडजडका भेद ॥

भ्रम ५— (देखो षष्ठकलाविषै) १ भेदभ्रम ॥ २ कर्तृत्वभ्रम ॥ ३ संगभ्रम ॥ ४ विकारभ्रम ॥ ५ सत्यत्वभ्रम ॥

भ्रमनिवर्तकदृष्टांत ५—(देखो षष्ठकला-विषै) १ बिंबप्रतिबिंब ॥ २ लोहितस्फटिक ॥ ३ घटाकाश ॥ ४ रज्जुसर्प ॥ ५ कनककुंडल ॥

महायज्ञ ५—१ देव ॥ २ ऋषि ॥ ३ पितर ॥ ४ मनुष्य ॥ ५ भूतयज्ञ ॥

यम ५—

१ अहिंसा ॥ २ सत्य ॥ ३ ब्रह्मचर्य ॥

४ अपरिग्रह—निर्वाहसैं अधिकधनका असंग्रह ॥

५ अस्तेय—चोरीका अभाव ॥

योगभूमिका ५—

१ क्षेप—रागद्वेषादिकरि चित्तकी चंचलता ॥

२ विक्षेप—बहिर्मुखचित्तकी जो कदाचित् ध्यानयुक्तता ॥ सो क्षेपतैं विशेष विक्षेप है ॥

३ मूढ—निद्रातंद्रादियुक्तता ॥

४ एकाग्र ॥ ५ निरोध ॥

वचनादि ५—१ वचन ॥ २ आदान ॥

३ गमन ॥ ४ रति ॥ ५ मलत्याग ॥

शब्दादि ५—१ शब्द ॥ २ स्पर्श ॥ ३ रूप ॥

४ रस ॥ ५ गंध ॥

स्थूलभूत ५—१ आकाश ॥ २ वायु ॥

३ तेज ॥ ४ जल ॥ ५ पृथ्वी ॥

हेत्वाभास ५—हेतुके लक्षण (साध्यकी साधकता)सैं रहित हुया हेतुकी न्यांई भासे। ऐसा जो दुष्टहेतु सो । वा हेतुका जो आभास (दोष) सो ॥

१ **सव्यभिचार**—साध्य (अग्नि) के आश्रय (पर्वत) औ ताके अभावके आश्रय (ह्रद) विषै वर्तनेवाला हेतु । सव्यभिचार है ॥ जैसैं पर्वत अग्निमान् है " प्रमेय होनैतैं " यह हेतु है। याहीकूं अनैकांतिकहेतु वी कहतेहैं ॥

२ **विरुद्ध**—साध्यके अभावकरि व्याप्त हेतु विरुद्ध है । जैसैं " शब्द नित्य है कृतक (क्रियाजन्य) होनैतैं " यह हेतु है। सो साध्य (नित्यता) के अभावरूप अनित्यता-करि व्याप्त है । काहेतैं जो कृतक है सो अनित्य है। घटवत् ॥ इस नियमतैं ॥

३ **सत्प्रतिपक्ष**—जाके साध्यके अभावका

साधक अन्यहेतु होवै सो । जैसें शब्द नित्य है । "श्रावण होनैतें" इस हेतुके साध्य (नित्यता)के अभावका साधक । शब्द अनित्य है "कार्य होनैतें" घटकी न्यांई । यह हेतु है ॥ जो कार्य होवै सो अनित्यहीं होवैहै ॥

४ **असिद्ध**—शब्द गुण है । "चाक्षुष होनैतें" रूपकी न्यांई ॥ इहां चाक्षुषत्वरूप हेतुका स्वरूप शब्दरूप पक्षविषै नहीं है । काहेतैं शब्दकूं श्रवणजन्य ज्ञानका विषय होनैतें ॥

५ **बाधित**—जाके साध्यका अभाव अन्य-प्रमाणकरि निश्चित होवै सो । जैसें अग्नि उष्ण नहीं है "द्रव्य (वस्तु) होनैतें" । इह हेतुके साध्य (अनुष्णता)के अभाव (उष्णता)का ग्रहण त्वक्इंद्रियकरि होवैहै ॥

ज्ञानइंद्रिय ५—१ श्रोत्र ॥ २ त्वक् ॥ ३ चक्षु ॥ ४ जिव्हा ॥ ५ घ्राण ॥

॥ पदार्थ षड्विध ॥ ६ ॥

अजिह्वत्वादि ६—यति (संन्यासी) के धर्म विशेष ॥

१ अजिव्हत्व—रसविषयकी आसक्ति रहितता ॥

२ नपुंसकत्व—कुमारी । किशोरी (१६ वर्षकी) अरु वृद्धास्त्रीविषै समता (निर्विकारिता)रूप ॥

३ पंगुत्व—एकदिनमैं योजनतैं अधिक अगमन ॥

४ अंधत्व—एकधनुष्पर्यंततैं अधिक दृष्टिका अप्रसरण ॥

५ बधिरत्व—व्यर्थालापका अश्रवण ॥

६ मुग्धत्व—व्यवहारविषै शून्यता (मूढता) ॥

अनादिपदार्थ ६—उत्पत्तिरहित पदार्थ ॥

१ जीव ॥ २ ईश ॥ ३ शुद्धचेतन ॥ ४ अविद्या ॥ ५ चेतनअविद्यासंबंध ॥ ६ तिनका भेद ॥

अरिवर्ग ६—परलोकके विरोधि आंतर (भीतरस्थित) शत्रुनका समूह ॥

१ **काम**—प्राप्तवस्तुके भोगकी इच्छा ॥

२ **क्रोध**—द्वेष ॥

३ **लोभ**—अप्राप्तवस्तुकी प्राप्तिकी इच्छा ॥

४ **मोह**—आत्माअनात्माका वा कार्य (शुभ) अकार्य (अशुभ) का अविवेक ॥

५ **मद**—गर्व (अहंकार) ॥

६ **मत्सर**—परके उत्कर्षका असहन ॥

अवस्था ६—स्थूलदेहके काल ॥

१ **शिशु**—एकवर्षके देहका काल ॥

२ **कौमार**—पांचवर्षके देहका काल ॥

३ **पौगंड**—षट्सैं दशवर्षके देहका काल ॥

४ **किशोर**—एकादशसैं पंचदशवर्षके देहका काल ॥

५ **यौवन**—षोडशसैं चालीशवर्षके देहका काल ॥

६ **जरा**—चालीशसैं ऊपरके देहका काल ॥

ईश्वरके भग ६—१ समग्रऐश्वर्य ॥ २ समग्र-
धर्म ॥ ३ समग्रयश ॥ ४ समग्रश्री ॥
५ समग्रज्ञान ॥ ६ समग्रवैराग्य ॥

ईश्वरके ज्ञान ६—

१ उत्पत्ति ॥ २ प्रलय ॥ ३ गति ॥

४ आगति—इस लोकविषै जीवका आगमन-
रूप आगति है ताका ज्ञान ॥

५ विद्या ॥ ६ अविद्या ॥

ऊर्मि ६—संसाररूप सागरकी लहरीयां ॥

१ जन्म ॥ २ मरण ॥ ३ क्षुधा ॥ ४ तृषा ॥
५ हर्ष ॥ ६ शोक ॥

कर्म ६—नित्यकर्म ॥

१ स्नान ॥ २ जप ॥ ३ होम ॥

४ अर्चन—देवपूजन ॥

५ **आतिथ्य**—भोजनके समय आये अभ्यागतके अर्थ अन्नदान ॥

६ **वैश्वदेव**—अ विषै हुतद्रव्यका होम ॥

कौशिक ६—अ यकोश (देह) विषै होनैवाले पदार्थ ॥

१ त्वक् ॥ २ मांस ॥ ३ रुधिर ॥ ४ मेद ॥ ५ मज्जा ॥ ६ अस्थि ॥

प्रमाण ६—

१ **प्रत्यक्षप्रमाण**—प्रत्यक्षप्रमाका जो करण सो प्रत्यक्षप्रमाण है । ऐसै श्रोत्रआदिकपांचज्ञानेंद्रिय हैं ॥

२ **अनुमानप्रमाण**—अनुमितिप्रमाका करण जो लिंगका ज्ञान सो अनुमानप्रमाण है । जैसैं पर्वतविषै अग्निके ज्ञानका हेतु धूमरूप लिंगका ज्ञान है ॥

३ **उपमानप्रमाण**—उपमितिप्रमाका करण जो सादृश्यका ज्ञान सो उपमानप्रमाण है। जैसैं गवय (रोझ) मैं गौके सादृश्यका ज्ञान है ॥

४ **शब्दप्रमाण**—शाब्दीप्रमाका करण जो लौकिकवैदिकशब्द । सो ॥

५ **अर्थापत्तिप्रमाण**—अर्थापत्तिप्रमाका करण जो उपपाद्यका ज्ञान । सो अर्थापत्तिप्रमाण है ॥ जैसैं दिनमैं अभोजी स्थूलपुरुषके रात्रिमैं भोजनके ज्ञानरूप अर्थापत्तिप्रमाका हेतु स्थूलता (उपपाद्य)का ज्ञान है ॥

६ **अनुपलब्धिप्रमाण**—अभावप्रमाका करण जो पदार्थकी अप्रतीति । सो अनुपलब्धि-प्रमाण है । जैसैं गृहमैं घटके अभावके ज्ञानकी हेतु घटकी अप्रतीति है ॥

भ्रम ६—१ कुल ॥ २ गोत्र ॥ ३ जाति ॥
४ वर्ण ॥ ५ आश्रम ॥ ६ नाम ॥

रस ६—१ मधुररस ॥ २ आम्लरस ॥
३ लवणरस ॥ ४ कटुकरस ॥ ५ कषायरस ॥
६ तिक्तरस ॥

लिंग ६—वेदवाक्यके तात्पर्यके निश्चायक लिंग ॥

१ उपक्रमउपसंहार—आदिअंतकी एकरूपता ॥

२ अभ्यास—वारंवार पठन ॥

३ अपूर्वता—अलौकिकता ॥

४ फल—मोक्ष ॥

५ अर्थवाद—स्तुति ॥

६ उपपत्ति—अनुकूलदृष्टांत ॥

विकार ६—१ जन्म ॥

२ अस्तिता—पूर्व अविद्यमानका होना ॥
३ वृद्धि ॥ ४ विपरिणाम ॥ ५ अपक्षय ॥
६ विनाश ॥

वेदअंग ६—१ शिक्षा ॥ २ कल्प ॥ ३ व्याकरण ॥ ४ निरुक्त ॥ ५ छंद ॥ ६ ज्योतिष ॥

शमादि ६—१ शम ॥ २ दम ॥ ३ उपरति ॥ ४ तितिक्षा ॥ ५ श्रद्धा ॥ ६ समाधान ॥

शास्त्र ६—१ सांख्यशास्त्र ॥ २ योगशास्त्र ॥ ३ न्यायशास्त्र ॥ ४ वैशेषिकशास्त्र ॥ ५ पूर्वमीमांसाशास्त्र ॥ ६ उत्तरमीमांसाशास्त्र ॥

समाधि ६—१ बाह्यदृश्यानुविद्धसमाधि ॥ २ आंतरदृश्यानुविद्धसमाधि ॥ ३ बाह्यशब्दानुविद्धसमाधि ॥ ४ आंतरशब्दानुविद्धसमाधि ॥ ५ बाह्यनिर्विकल्पसमाधि ॥ ६ आंतरनिर्विकल्पसमाधि ॥

सूत्र ६—१ जैमिनीयसूत्र ॥ २ आश्वलायनसूत्र ॥ ३ आपस्तंबसूत्र ॥ ४ बौधायनसूत्र ॥ ५ कात्यायनसूत्र ॥ ६ वैखानसीयसूत्र ॥

॥ पदार्थ सप्तविध ॥ ७ ॥

अतलादि ७—१ अतल ॥ २ वितल ॥
३ सुतल ॥ ४ तलातल ॥ ५ रसातल ॥
६ महातल ॥ ७ पाताल ॥

अवस्था ७—चिदाभासकी क्रमतैं तीन बंधकी औ च्यारी मोक्षकी हेतु दशा ॥

१ अज्ञान—"नहिं जानताहूं" इस व्यवहारका हेतु जो आवरणविक्षेपहेतुशक्तिवाला अनादिअनिर्वचनीयभावरूप पदार्थ सो ॥

२ आवरण—"नहीं है । नहीं भासताहै" इस व्यवहारका हेतु अज्ञानका कार्य ॥

३ विक्षेप—धर्मसहितदेहादिप्रपंच औ ताका ज्ञान ॥

४ परोक्षज्ञान ॥ ५ अपरोक्षज्ञान ॥

६ शोकनाश—विक्षेपनाश (भ्रांतिनाश) ॥

७ तृप्ति—ज्ञानजनित हर्ष ॥

चेतन ७—:

१ ईश्वरचेतन—मायाविशिष्ट चेतन ॥

२ जीवचेतन—अविद्याविशिष्ट चेतन ॥

३ शुद्धचेतन—निरुपाधिक चेतन ॥

४ प्रमाताचेतन—प्रमाता जो अंतःकरण तिसकरि अवच्छिन्नचेतन । प्रमाताचेतन है ॥

५ प्रमाणचेतन—इंद्रियद्वारा शरीरसैं बाहिर निकसिके घटादिविषयपर्यंत पहुंची जो वृत्ति । सो प्रमाण है । तिसकरि अवच्छिन्नचेतन । प्रमाणचेतन है ॥

६ प्रमेयचेतन—प्रमेय जो घटादिविषय तिसकरि अवच्छिन्न (अन्योंसैं भिन्न किया) चेतन । प्रमेयचेतन है ॥

७ प्रमाचेतन—घटादिविषयाकार भई जो वृत्ति सो प्रमा है । तिसकरि अवच्छिन्न चेतन वा तिसविषै प्रतिबिंबित चेतन प्रमाचेतन है । याहीकूं प्रमितिचेतन औ फलचेतन बी कहते हैं ॥

द्रव्यादिपदार्थ ७—नैयायिकमतमैं जे द्रव्य-आदिसप्तपदार्थ मानेहैं । वे ॥

१ द्रव्य—न्यायमतमैं (१) पृथ्वी (२) जल (३) तेज (४) वायु (५) आकाश (६) काल (७) दिशा (८) आत्मा (९) मन । ये नव द्रव्य (गुणनके आश्रयरूप पदार्थ) मानेहैं । वे ॥

२ गुण—न्यायमतमैं रूपसैं आदिलेके संस्कार-पर्यंत २४ गुण मानेहैं । वे ॥

३ कर्म—न्यायमतमैं (१) उत्क्षेपण (ऊंचे फेंकना) (२) अपक्षेपण (नीचे फेंकना) (३) आकुंचन (४) प्रसारण औ (५) गमन । ये पंचविधकर्म मानेहैं । वे ॥

४ सामान्य—न्यायमतमैं पर (सत्ता) औ अपर (घटत्वआदिक) इस भेदतैं द्विविध जाति मानीहै । सो ॥

५ समवाय—वेदांतमतमैं जहां जहां तादात्म्यसंबंध मान्याहै तहां तहां न्यायमतमैं संबंधविशेष (नित्यसंबंध) मान्याहै । सो ॥

६ अभाव—(१) प्रागभाव (२) प्रध्वंसाभाव (३) अन्योऽन्याभाव (४) अत्यंताभाव औ (५) सामयिकाभाव । यह पंचविध नास्तिप्रतीतिके विषयरूप पदार्थ ॥

७ विशेष—न्यायमतमैं जे परमाणुनके मध्यगत अनंतअवकाशरूप पदार्थ मानेहैं । वे ॥

धातु ७—

१ रस—सूक्ष्म (पुण्यपाप) । मध्यम (अन्नका सार) औ स्थूल (मल) भेदतैं तीनप्रकारके जो भुक्तअन्नके विभाग होवैहैं । तिनमैंसैं मध्यमविभाग है । सो ॥

२ रुधिर ॥ ३ मांस ॥

४ मेद—श्वेतमांस (चर्बी) ॥

५ मज्जा—अस्थिगत सचिक्कणपदार्थ ॥
६ अस्थि ॥ ७ रेत ॥

भूरादिलोक ७—१ भूर्लोक ॥ २ भुवर्लोक ॥
३ स्वरलोक ॥ ४ महर्लोक ॥ ५ जनलोक ॥
६ तपलोक ॥ ७ सत्यलोक ॥

मौनादि ७—१ मौन ॥ २ योगासन ॥
३ योग ॥ ४ तितिक्षा ॥ ५ एकांतशीलता ॥
६ निःस्पृहता ॥ ७ समता ॥

रूप ७—१ शुक्ल ॥ २ कृष्ण ॥ ३ पीत ॥
४ रक्त ॥ ५ हरित ॥ ६ कपिश ॥ ७ चित्र ॥

व्यसन ७—१ तन ॥ २ मन ॥ ३ क्रोध ॥ ४ विषय ॥
५ धन ॥ ६ राज्य ॥ ७ सेवकव्यसन ॥

ज्ञानभूमिका ७—(देखो या ग्रंथकी त्रयोदश-
कलाविषै) १ शुभेच्छा ॥ २ सुविचारणा ॥
३ तनुमानसा ॥ ४ सत्वापत्ति ॥ ५ असं-
सक्ति ॥ ६ पदार्थाभाविनी ॥ ७ तुरीयगा ॥

॥ पदार्थ अष्टविध ॥ ८ ॥

पाश ८—१ दया ॥ २ शंका ॥ ३ भय ॥ ४ लज्जा ॥ ५ निंदा ॥ ६ कुल ॥ ७ शील ॥ ८ धन ॥

पुरी ८—१ ज्ञानेंद्रियपंचक ॥ २ कर्मेंद्रियपंचक ॥ ३ अंतःकरणचतुष्टय ॥ ४ प्राणादिपंचक ॥ ५ भूतपंचक ॥ ६ काम ॥ ७ त्रिविधकर्म ॥ ८ वासना ॥

प्रकृति ८—१ पृथ्वी ॥ २ जल ॥ ३ अग्नि ॥ ४ वायु ॥ ५ आकाश ॥

६ मन—इहां मनशब्दकरि समष्टिमनरूप अहंकारका ग्रहण है ॥

७ बुद्धि—इहां बुद्धिशब्दकरि समष्टिबुद्धिरूप महत्तत्त्वका ग्रहण है ॥

८ **अहंकार**—इहां अहंकारशब्दकरि महत्तत्वतैं पूर्व शुद्धअहंकारके कारणअज्ञानरूप मूल-प्रकृतिका ग्रहण है ॥

ब्रह्मचर्यके अंग ८ –

१ स्त्रीका दर्शन ॥ २ स्पर्शन ॥
३ **केलिः**—चोपडआदिकक्रीडा (खेल) ॥
४ कीर्तन ॥ ५ गुह्यभाषण ॥
६ **संकल्प**—चिंतन (स्मरण) ॥
७ निश्चय ॥ ८ इनका त्याग ॥

इन अष्टमैथुनसैं विपरीत ॥

मद ८—१ कुलमद ॥ २ शीलमद ॥ ३ धनमद ॥ ४ रूपमद ॥ ५ यौवनमद ॥ ६ विद्यामद ॥ ७ तपमद ॥ ८ राज्यमद ॥

मूर्तिमद ८—

१ पृथ्वीमद—अस्थिमांसादिपृथ्वीके तत्त्वनका अभिमान ॥

२ जलमद—शुक्रशोणितआदिक जलके तत्त्वनका अभिमान ॥

३ तेजमद—क्षुधाआदिकतेजतत्त्वनकी अधिकता॥

४ पवनमद—चलन (विदेशगमन) धावनआदिक वायुके तत्त्वोंकरि युक्तता ॥

५ आकाशमद—कामक्रोधादिक आकाशके तत्त्वोंकरि युक्तता ॥

६ चंद्रमद—शीतलतारूप चंद्रके गुणकरि युक्त होना ॥

७ सूर्यमद—संताप (क्रोधादि) रूप सूर्यके गुणकरि युक्त होना ॥

८ आत्ममद—विद्याधनकुलआदिक आत्माके संबंधिनका अभिमान ॥

शब्दशक्तिग्रहणहेतु ८—१ व्याकरण ॥
२ उपमान ॥ ३ कोश ॥ ४ आप्तवाक्य ॥
५ वृद्धव्यवहार ॥ ६ वाक्यशेष ॥ ७ विवरण ॥
८ सिद्धपदकी सन्निधि ॥

समाधिके अंग ८—१ यम ॥ २ नियम ॥
३ आसन ॥ ४ प्राणायाम ॥ ५ प्रत्याहार ॥
६ धारणा ॥ ७ ध्यान ॥ ८ सविकल्पसमाधि ॥

॥ पदार्थ नवविध ॥ ९ ॥

तत्त्व ९—किसी महात्माके मतमैं लिंगदेहके नवतत्त्व मानेहैं वे ॥
१ श्रोत्र ॥ २ त्वक् ॥ ३ चक्षु ॥ ४ जिव्हा ॥
५ घ्राण ॥ ६ मन ॥ ७ बुद्धि ॥ ८ चित्त ॥
९ अहंकार ॥

संसार ९—१ ज्ञाता ॥ २ ज्ञान ॥ ३ ज्ञेय ॥
४ भोक्ता ॥ ५ भोग्य ॥ ६ भोग ॥ ७ कर्त्ता ॥
८ करण ॥ ९ क्रिया ॥

॥ पदार्थ दशविध ॥ १० ॥

नाडिका औ देवता १०—

१ इडा (चंद्र) वामनासिकागत चंद्रनाडी । हरि देवता ॥
२ पिंगला (सूर्य) दक्षिणनासिकागत सूर्यनाडी॥ ब्रह्मा देवता ॥
३ सुषुम्णा (मध्यमा) नासिकाके मध्यगतनाडी॥ रुद्र देवता ॥
४ गांधारी (दक्षिणनेत्र) इंद्र ॥
५ हस्तिजिव्हा (वामनेत्र) वरुण ॥
६ पूषा (दक्षिणकर्ण) ईश्वर ॥
७ यशस्विनी (वामकर्ण) ब्रह्मा ॥
८ कुहू (गुदा) पृथ्वी ॥
९ अलंबुषा (मेढ्र) सूर्य ॥
१० शंखिनी (नाभि) चंद्र ॥

शृंगारादिरस १०—१ शृंगाररस ॥ २ वीर-रस ॥ ३ करुणारस ॥ ४ अद्भुतरस ॥ ५ हास्यरस ॥ ६ भयानकरस ॥ ७ बीभत्स-रस ॥ ८ रौद्ररस ॥ ९ शांतिरस ॥ १० प्रेमभक्ति वा ज्ञानरस ॥

॥ पदार्थ एकादशविध ॥ ११ ॥

ज्ञानसाधन ११—

१ विवेक ॥ २ वैराग्य ॥ ३ षट्संपत्ति ॥ ४ मुमुक्षुता ॥

५ **गुरूपसत्ति**—विधिपूर्वक गुरुके शरण जाना ॥

६ श्रवण ॥ ७ तत्त्वज्ञानाभ्यास ॥ ८ मनन ॥ ९ निदिध्यासन ॥

१० **मनोनाश** — इहां मनशब्दकरि रजतमसैं सत्वगुणका तिरस्काररूप मनका स्थूलभाव

कहियेहै । ताका नाश कहिये ब्रह्माभ्यासकी प्रबलतासैं रजतमके तिरस्कारकरि जो सत्वगुणका आविर्भाव होवैहै । सो ॥

११ वासनाक्षय ॥

॥ पदार्थ द्वादशविध ॥ १२ ॥

अनात्माके धर्म १२–

१ अनित्य ॥ २ विनाशी ॥ ३ अशुद्ध ॥
४ नाना ॥ ५ क्षेत्र ॥ ६ आश्रित ॥
७ विकारि ॥ ८ परप्रकाश्य ॥ ९ हेतुमान् ॥
१० व्याप्य—परिच्छिन्न (देशकालवस्तुकृत परिच्छेदवाला)
११ संगी ॥ १२ आवृत ॥

आत्माके धर्म १२–

१ नित्यः— उत्पत्ति अरु नाशतैं रहित ॥
२ अव्ययः— घटनैंबढनैंसैं रहित ॥

३ शुद्धः—मायाअविद्यारूप मलरहित ॥

४ एकः—सजातीयभेदरहित ॥

५ क्षेत्रज्ञः—शरीररूप क्षेत्रका ज्ञाता ॥

६ आश्रयः—अधिष्ठान ॥

७ अविक्रियः—अविकारी ॥

८ स्वप्रकाशः—अपनै प्रकाशविषै अन्य (स्वपर) प्रकाशकी अपेक्षासैं रहित हुया सर्वका प्रकाशक ॥

९ हेतुः—जालेके कारण ऊर्णनाभिकी न्यांई औ नख अरु रोम (केश)नके कारण पुरुषकी न्यांई जगत्का अभिन्ननिमित्त [विवर्त्त] उपादानकारण है ॥

१० व्यापकः—अपरिच्छिन्न (परिपूर्ण) ॥

११ असंगी—सजातीय विजातीय औ स्वगत-संबंधरहित ॥

१२ अनावृतः—सर्वथा आवरणतैं रहित ॥

ब्राह्मणके व्रत १२—

१ ज्ञान ॥ २ सत्य ॥ ३ शम ॥ ४ दम ॥

५ श्रुत—शास्त्राभ्यास ॥

६ अमात्सर्य—परके उत्कर्षका असहनरूप जो मत्सर तिसतैं रहितपना ॥

७ लज्जा ॥ ८ तितिक्षा ॥

९ अनसूया—गुणोंकेविषै दोषका आरोपरूप असूयासैं रहितता ॥

१० यज्ञ ॥ ११ दान ॥

१२ धैर्य—काम औ क्रोधके वेगका रोकना ॥

महत्ताहेतुधर्म १२—१ धनाढ्यता ॥

२ अभिजन—कुटुंब ॥ ३ रूप ॥ ४ तप ॥

५ श्रुत—शास्त्राभ्यास ॥

६ ओज—इंद्रियनका तेज ॥

७ तेज ॥ ८ प्रभाव ॥ ९ बल ॥

१० पौरुष ॥ ११ बुद्धि ॥ १२ योग ॥

॥ पदार्थ त्रयोदशाविध ॥ १३ ॥

भागवतधर्म १३ — भगवत्भक्तनके धर्म ॥

१ सकामकर्मके फलका विपरीत दर्शन ॥

२ धनगृहपुत्रादिविपै दुःखबुद्धि औ चलबुद्धि ॥

३ परलोकविपै नश्वरबुद्धि ॥

४ शब्दब्रह्म औ परब्रह्मविपै कुशलगुरुप्रतिगमन ॥

५ गुरुविपै ईश्वरबुद्धि औ निष्कपटसेवा ॥

६ परमेश्वरविपै सर्वकर्मसमर्पण ॥

७ भक्तिवैराग्यसहित स्वरूपानुभव । साधुसंग ॥

८ शौच । तप । तितिक्षा । मौन ॥

९ स्वाध्याय । आर्जव (सरलस्वभाव) ब्रह्मचर्य । अहिंसा औ द्वंद्वसमत्व (शीत-उष्णआदिकद्वंद्वधर्मके सहनका स्वभाव) ॥

१० सर्वत्रआत्मारूप ईश्वरका दर्शन ॥

११ कैवल्य (एकाकी रहना) । अनिकेत

(गृह न बांधना) । एकांत (·विविक्त) चीरवस्त्र । संतोष ॥

१२ सर्वभूतनविषै आत्माके भगवद्भावका दर्शन । औ भगवद्रूप आत्माविषै सर्वभूतनका दर्शन ॥

१३ जन्मकर्मवर्णाश्रमादिकरि देहविषै निरभिमान औ स्वपरबुद्धिका अभाव ॥

॥ पदार्थ चतुर्दशविध ॥ १४ ॥

त्रिपुटी १४ –

ज्ञानेन्द्रियनकी त्रिपुटी ॥

	इंद्रिय अध्यात्म	देवता अधिदैव	विषय अधिभूत
१	श्रोत्र ।	दिशा ।	शब्द ॥
२	त्वचा ।	वायु ।	स्पर्श ॥
३	चक्षु ।	सूर्य ।	रूप ॥
४	जिव्हा ।	वरुण ।	रस ॥
५	घ्राण ।	अश्विनीकुमार ।	गंध ॥

कर्मेन्द्रियनकी त्रिपुटी ॥

६ वाक् । अग्नि । वचन (क्रिया) ॥

७ हस्त । चंद्र । लेनादेना ॥

८ पाद । वामनजी । गमन ॥

९ उपस्थ । प्रजापति । रतिभोग ॥

१० गुद । यम । मलत्याग ॥

अंतःकरणकी त्रिपुटी ॥

११ मन । चंद्रमा । संकल्पविकल्प ॥

१२ बुद्धि । ब्रह्मा । निश्चय ॥

१३ चित्त । वासुदेव । चिंतन ॥

१४ अहंकार । रुद्र । अहंपना ॥

॥ पदार्थ पंचदशविध ॥ १५ ॥

मायाके नाम १५—१ माया ॥ २ अविद्या ॥ ३ प्रकृति ॥ ४ शक्ति ॥ ५ सत्या ॥ ६ मूला ॥ ७ तूला ॥ ८ योनि ॥ ९ अव्यक्त ॥ १० अव्याकृत ॥ ११ अजा ॥ १२ अज्ञान ॥

१३ तमः ॥ १४ तुच्छा ॥ १५ अनिर्वचनीया ॥

॥ पदार्थ षोडशविध ॥ १६ ॥

कला—१ हिरण्यगर्भ ॥ २ श्रद्धा ॥ ३ आकाश ॥ ४ वायु ॥ ५ तेज ॥ ६ जल ॥ ७ पृथ्वी ॥ ८ दशेंद्रिय ॥ ९ मन ॥ १० अन्न ॥ ११ बल ॥ १२ तप ॥ १३ मंत्र ॥ १४ कर्म ॥ १५ लोक ॥ १६ नाम ॥

इति श्रीविचारचंद्रोदये वेदांतपदार्थसंज्ञावर्णननामिका षोडशीकला द्वितीयविभागः समाप्तः ॥

॥ संस्कृत दोहा ॥

श्रीविचारचंद्रोदयं शुद्धां धियं समाप्य ।
विचार्येति परानंदं तत्त्वज्ञानमवाप्य ॥ १ ॥

षट्दर्शन	१ जगत्	२ जगत्कारण	३ ईश्वर	४ जीव
१ पूर्वमीमांसा	स्वरूपसैं अनादि अनंत प्रवाहरूप संयोगवियोगवान्	जीव अदृष्ट औ परमाणु	०	जडचेतनात्मकविभु नाना कर्त्ता भोक्ता
२ उत्तरमीमांसा (वेदांत)	नामरूप क्रियात्मक मायाका परिणाम चेतनका विवर्त्त	अभिन्ननिमित्तोपादानईश्वर	मायाविशिष्ट-चेतन	अविद्याविशिष्ट-चेतन
३ न्याय	परमाणुआरंभित संयोगवियोगजन्य आकृतिविशेष	परमाणु ईश्वरादिनव	नित्य इच्छाज्ञानादिगुणवान् विभु कर्त्ताविशेष	ज्ञानादिचतुर्दशगुणवान् कर्त्ता भोक्ता जड विभु नाना
४ वैशेषिक	न्याय अनुसार	न्याय अनुसार	न्याय अनुसार	न्याय अनुसार
५ सांख्य	प्रकृतिपरिणाम त्रयोविंशतितत्त्वात्मक	त्रिगुणात्मक-प्रकृति	०	असंग चेतन विभु नाना भोक्ता
६ योग	प्रकृतिपरिणाम त्रयोविंशतितत्त्वात्मक	कर्मानुसारप्रकृति औ तन्नियात्मक ईश्वर	क्लेशकर्मविपाक-आशय असंबद्ध पुरुषविशेष	असंग चेतन विभु नाना कर्त्ता भोक्ता

षट्दर्शन	५ बंधहेतु	६ बंध	७ मोक्ष	८ मोक्षसाधन
१ पूर्वमीमांसा	निषिद्धकर्म	नरकादिदुःखसंबंध	स्वर्गप्राप्ति	वेदविहितकर्म
२ उत्तरमीमांसा (वेदांत)	अविद्या	अविद्यातत्कार्य	अविद्यातत्कार्यनिवृत्तिपूर्वक परमानंद-ब्रह्मप्राप्ति	ब्रह्मात्मैक्यज्ञान
३ न्याय	अज्ञान	एकविंशतिदुःख	एकविंशतिदुःखध्वंस	इतरभिन्नात्मज्ञान
४ वैशेषिक	अज्ञान	एकविंशतिदुःख	एकविंशतिदुःखध्वंस	इतरभिन्नात्मज्ञान
५ सांख्य	अविवेक	अध्यात्मादि-त्रिविध दुःख	त्रिविधदुःखध्वंस	प्रकृतिपुरुषविवेक
६ योग	अविवेक	प्रकृतिपुरुषसंयोग-जन्य अविद्यादि-पंचक्लेश	प्रकृतिपुरुषसंयोगाभावपूर्वक अविद्यादिपंचक्लेशनिवृत्ति	निर्विकल्पसमाधि-पूर्वक विवेक

षट्दर्शन	९ अधिकारी	१० प्रकट-कर्त्ता-आचार्य	११ प्रधानकांड	१२ वाद	१३ आत्म परिमाण संख्या
१ पूर्वमीमांसा	कर्मफलासक्त	जैमिनी	कर्मकांड	आरंभवाद	विभु नाना
२ उत्तरमीमांसा (वेदांत)	मलविक्षेपदोषरहित चतुष्टयसाधनसंपन्न	वेदव्यास	ज्ञानकांड	विवर्तवाद	विभु एक
३ न्याय	दुःखजिहासु कुतर्की	गौतम	ज्ञानकांड	आरंभवाद	विभु नाना
४ वैशेषिक	दुःखजिहासु कुतर्की	कणाद	ज्ञानकांड	आरंभवाद	विभु नाना
५ सांख्य	संदिग्ध विरक्त	कपिल	ज्ञानकांड	परिणामवाद	विभु नाना
६ योग	विक्षिप्तचित्तवान्	पतंजलि	उपासनाकांड	परिणामवाद	विभु नाना

षट्दर्शन	१४ प्रमाण	१५ ख्याति	१६ सत्ता	१७ उपयोग
१ पूर्वमीमांसा	षट् (६)	अख्याति	जीवजगत् परमार्थसत्ता	चित्तशुद्धि
२ उत्तरमीमांसा (वेदांत)	षट् (६)	अनिर्वचनीय	परमार्थरूपात्मसत्ता व्यावहारिक औ प्रातिभासिकजगत्सत्ता	तत्त्वज्ञानपूर्वक मोक्ष
३ न्याय	प्रत्यक्ष अनुमान उपमान शब्द (४)	अन्यथा	जीवजगत् परमार्थसत्ता	मनन
४ वैशेषिक	प्रत्यक्ष अनुमान (२)	अन्यथा	जीवजगत् परमार्थसत्ता	मननं
५ सांख्य	प्रत्यक्ष अनुमान शब्द (३)	अख्याति	जीवजगत् परमार्थसत्ता	"त्वं" पदार्थ शोधन
६ योग	प्रत्यक्ष अनुमान शब्द (३)	अख्याति	जीवजगत् परमार्थसत्ता	चित्तैकाग्र्य